नवम्बर, 2019
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Cover-II

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग, प्रभारी वि.सा.प्र.

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन, विधि
संकाय लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

परामर्शदाता : सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, महमूद अली खां और विनोद कुमार आर्य

ISSN 2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2019 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

नवम्बर, 2019 अंक - 11

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय
संपादक
अविनाश शुक्ला

विधि साहित्य
प्रकाशन

(2019) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ⟹ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्च न्यायालयों द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो अधिवक्ताओं, विधि छात्रों, न्यायाधीशोंनवंबर, मुकदमे के पक्षकारों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से मैं आपका ध्यान विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा विधि के क्षेत्र में किए जा रहे कार्य के महत्व की ओर आकर्षित करना चाहता हूं । यह प्रकाशन भारत सरकार के प्राधिकार के अधीन उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के निर्णयों का हिंदी पाठ तीन विधि पत्रिकाओं में मुद्रित और प्रकाशित करता है । चूंकि विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा मुद्रित और प्रकाशित पत्रिकाएं भारत सरकार के प्राधिकार के अंतर्गत मुद्रित और प्रकाशित होती हैं, इसलिए ये पत्रिकाएं देश के प्रत्येक न्यायालय में लंबित मामलों की सुनवाई के दौरान सुसंगत होती हैं और देश के न्यायालय इन पत्रिकाओं का अवलंब लेने के लिए बाध्य हैं । भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 38 के अधीन भी यह उपबंधित किया गया है कि यदि किसी न्यायालय को देश की विधि के बारे में राय बनानी है तो उस विधि या विधि का कोई भी कथन तभी सुसंगत होगा जब वह किसी ऐसी पुस्तक के समाविष्ट हो जो देश की सरकार के प्राधिकार के अंतर्गत मुद्रित और प्रकाशित की गई हो । विधि साहित्य प्रकाशन देश का एकमात्र ऐसा प्रकाशन है जो भारत सरकार के प्राधिकार के अंतर्गत विभिन्न विषयों पर हिंदी में विधि की पाठ्य-पुस्तकें और पत्रिकाओं के माध्यम से उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के प्रतिवेद्य निर्णयों का हिंदी पाठ मुद्रित और प्रकाशित करता है । यह उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के निर्णयों के हिंदी पाठ तैयार करने वाली, उनका मुद्रण और प्रकाशन करने वाली एकमात्र सर्वोच्च

संस्था है । इस संस्था द्वारा प्राकाशित विधि पाठ्य पुस्तकें, और पत्रिकाओं में प्रकाशित निर्णयों का हिंदी पाठ देश के समस्त न्यायालयों में सुसंगत माना जाता है और उनका अवलंब लिया जाता है ।

पत्रिका में समायोजित सामग्री और गुणवत्ता के संबंध में सभी पाठकों के विचार अपेक्षित हैं । अगली पत्रिका के संपादन के समय उन विचारों को ध्यान में रखा जाएगा ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

नवम्बर, 2019

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अभिलाष कुमार गुप्ता **बनाम** श्रीमती श्वेता बलदेव गुप्ता	655
अशरफ अहमद **बनाम** ए. एस. भरतरी और अन्य	605
आर्या वैसिया चेत्तियार पोदूमल भुवनगिरि और एक अन्य **बनाम** कालियापेरुमल नायडू	685
ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती मंजानी कुमारी और अन्य	700
कमला कांस्ट्रक्शन कंपनी, बीकानेर (मैसर्स) **बनाम** राजस्थान राज्य जिला कलक्टर, बीकानेर और अन्य	695
जक्का श्रीनिवास राव और अन्य **बनाम** जव्वाजी वेंकट चलपति राव और अन्य	577
ज्योति रेखा बोरा मोहन्ता (श्रीमती) **बनाम** हरेन मोहन्ता	646
पी. दामोदर राजू **बनाम** श्रीमती आर. एस. परमेश्वरी	627
फ़य्याज़ क़ुरैशी **बनाम** भारत संघ और अन्य	595
वादीबोयाना वेंकट कृष्ण रेड्डी **बनाम** सी. वेंकट रमामा रेड्डी	716
शीतल घोष **बनाम** गणेश चन्द जैन	665
संतोष सिंह और एक अन्य **बनाम** देव चन्द और एक अन्य	678
सी. एस. सुन्दरेश और एक अन्य **बनाम** सी. एस. अनन्तलक्ष्मी और अन्य	621

पृष्ठ संख्या

सुषमा (श्रीमती) और अन्य **बनाम** न्यू इंडिया एश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड 588

संसद् के अधिनियम

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 1 – 22

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26)

– धारा 14 और 15 – मध्यस्थ की नियुक्ति – प्रत्यास्थापन – मध्यस्थ द्वारा अपनी नियुक्ति की जानकारी होने के बावजूद पक्षों को कोई सूचना जारी न की जानी – मध्यस्थ द्वारा इस आधार पर कार्रवाई से इनकार किया जाना कि वह सुसंगत समय पर विवाद के स्थान पर नियुक्त था – उपबंध के अनुसार नए मध्यस्थ की नियुक्ति की जानी चाहिए ।

कमला कांस्ट्रक्शन कंपनी, बीकानेर (मैसर्स) बनाम **राजस्थान राज्य जिला कलक्टर, बीकानेर और अन्य** 695

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 163क और 173 – सौ रुपए की प्रीमियम पर बीमा-पालिसी – पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अनुसार 2 लाख रुपए की धनराशि का दायित्व नियत किया जाना – बीमा-कंपनी द्वारा उक्त धनराशि का मृतक के आश्रितों को संदाय किया जाना – मृतक के आश्रितों द्वारा अधिक धनराशि के लिए दावा – विधिमान्यता – चूंकि बीमा-पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अनुसार बीमा-कंपनी का दायित्व 2 लाख रुपए तक सीमित था – अत: दावेदार इससे अधिक धनराशि का दावा नहीं कर सकते – अत: दावा याचिका ठीक ही खारिज की गई है ।

सुषमा (श्रीमती) और अन्य बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड** 588

पृष्ठ संख्या

– धारा 166 – मृतक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक की भविष्य की संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए, जहां मृतक स्थायी नौकरी करता था और उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी, उसके वास्तविक वेतन का 50 प्रतिशत, जहां मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के मध्य थी, उसके वास्तविक वेतन का 30 प्रतिशत और जहां मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष के मध्य थी, उसके वास्तविक वेतन का 15 प्रतिशत प्रतिकर में जोड़ा जाएगा ।

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती मंजानी कुमारी और अन्य** 700

– धारा 166 – मृतक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक की भविष्य की संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए, जहां मृतक स्वनियोजित था या स्थिर वेतन पर था और उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी, तो उसकी वास्तविक आय का 40 प्रतिशत, जहां मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के मध्य थी तो उसकी वास्तविक आय का 25 प्रतिशत और जहां मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष थी तो उसकी आयु का 10 प्रतिशत प्रतिकर में जोड़ा जाएगा ।

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती मंजानी कुमारी और अन्य** 700

– धारा 166 – मृतक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – गुणांक के विनिर्धारण सरला वर्मा वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 30 से 32 द्वारा निर्देशित होंगे और गुणांक का चयन इसी मामले में उपदर्शित सारणी के अनुसार होगा और मृतक

पृष्ठ संख्या

की आयु गुणांक लागू किए जाने के प्रयोजनार्थ आधार मानी जाएगी ।

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती मंजानी कुमारी और अन्य** 700

राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 (1980 का 65)

– धारा 3(2) और 3(3) – याची के विरुद्ध अपने मकान के भीतर गो-वध करने का आरोप – पुलिस द्वारा छापा मारने के संबंध में समाचार-पत्रों में प्रकाशन – हिन्दू संगठनों द्वारा उत्तेजित होकर आन्दोलन और बन्द का आह्वान किया जाना – इस आधार पर याची का राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अधीन निरोध किया जाना – विधिमान्यता – जहां अभियुक्त के कार्य से विधि-व्यवस्था का भंग हुआ हो न कि लोक-व्यवस्था का, वहां मात्र जनता द्वारा प्रदर्शनों के आधार पर याची का राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अधीन निरोध किया जाना न्यायोचित नहीं है – अत: याची निर्मुक्त किए जाने का हकदार है ।

फ़य्याज़ क़ुरैशी बनाम **भारत संघ और अन्य** 595

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47)

– विक्रय करार का विनिर्दिष्ट अनुपालन – क्रेता निधि की अनुपलब्धता और भुगतान करने की अपनी क्षमता के बारे में कोई साक्ष्य पेश करने में असफल रहा और क्रेता शेष रकम के भुगतान के लिए भी क्रेता से नहीं कहा इसलिए क्रेता संपत्ति को खरीदने की इच्छा

पृष्ठ संख्या

रखने का कोई सबूत पेश न करने के कारण वह विनिर्दिष्ट अनुपालन के अनुतोष का हकदार नहीं है ।

शीतल घोष बनाम **गणेश चन्द जैन** 665

– धारा 34 और 38 – वादियों द्वारा विक्रय विलेख के आधार पर भू-संपत्ति में अधिकार, हक़दारी और हित के लिए वाद – क्रेता द्वारा नामांतरण न कराने पर विक्रेता द्वारा उसी भूमि का अपने पुत्र के हक़ में विक्रय विलेख किया जाना – क्रेता के पुत्र द्वारा भूमि प्रतिवादियों को अंतरित की जानी – पश्चात्वर्ती विक्रय विलेखों की विधिमान्यता – चूंकि प्रथम विक्रय विलेख द्वारा संपत्ति का हक़ या हित अंतरित हो गया था अत: पश्चात्वर्ती विक्रय विलेखों के आधार पर पश्चात्वर्ती क्रेताओं को कोई हक़ या हित तथा अधिकार अंतरित नहीं होता ।

संतोष सिंह और एक अन्य बनाम **देव चन्द और एक अन्य** 678

– धारा 34 और 38 [सपठित परिसीमा अधिनियम, 1963 का अनुच्छेद 65] – विक्रय विलेख के आधार पर अधिकार, हकदारी और हित के लिए वाद – प्रतिवादियों द्वारा काल-वर्जन के साथ क़ब्जे का अनुतोष न मांगे जाने संबंधी आक्षेप किया जाना – वादियों द्वारा क़ब्जे के अनुतोष के लिए अपेक्षित न्यायालय संदत्त की जानी – क्रेता-वादियों के हक़ में क़ब्जे और अधिकार की डिक्री मंजूर किया जाना उचित है ।

संतोष सिंह और एक अन्य बनाम **देव चन्द और एक अन्य** 678

पृष्ठ संख्या

संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4)

– धारा 106 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 116] – मौखिक पट्टे के आधार पर किराएदारी – बेदखली के लिए दावा – किराएदार द्वारा वादी के स्वामित्व से इनकार – मकान-मालिक द्वारा मौखिक करार के साक्षियों को पेश न किया जाना – किराएदार द्वारा प्रतिकूल कब्जे के आधार पर स्वामित्व का दावा किया जाना – मकान-मालिक द्वारा स्वामित्व के सबूत के रूप में संपत्ति को क्रय करने का विलेख प्रस्तुत किया जाना – किराएदार द्वारा प्रतिपरीक्षा में आरंभ में किराया दिया जाना स्वीकार किया जाना – मौखिक पट्टे के साक्षियों को पेश न करने से वादी के स्वामित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता – जहां वादी और प्रतिवादी के बीच किराएदार और मकान-मालिक की नातेदारी साबित हो गई हो वहां किराएदार के प्रतिकूल कब्जे के दावे को स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

पी. दामोदर राजू बनाम **श्रीमती आर. एस. परमेश्वरी** 627

– धारा 106, 107 और 111 – वादी द्वारा किराएदार की बेदख़ली और क़ब्जे की वसूली तथा किराए की बकाया और अन्त:कालीन लाभों के लिए वाद – किराएदारी पर्यवसित करने की सूचना – किराएदार द्वारा परिसर खाली न करने पर पुन: सूचना जारी किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अत्यंत तकनीकी आधार पर सूचना को विधिमान्य न माना जाना – सूचना से संबंधित विषय को विनियमित करने वाले विधि के सिद्धांतों को विचार में लिए बिना सूचना को

पृष्ठ संख्या

अविधिमान्य ठहराना न्यायोचित नहीं है – अत: वादी संपत्ति के क़ब्जे की वापसी के साथ अन्य सभी अन्त:कालीन लाभों के लिए हक़दार है ।

आर्या वैसिया चेत्तियार पोदूमल भुवनगिरि और एक अन्य बनाम **कालियापेरुमल नायडू** 685

– धारा 107 – मौखिक पट्टे के आधार पर किराएदारी – मकान-मालिक द्वारा लिखित सूचना जारी करके किराएदारी को पर्यवसित किया जाना – सूचना किराएदार के कारबार परिसर और आवासीय पते पर भेजी जानी – किराएदार द्वारा सूचना की प्राप्ति से इनकार – किराएदार द्वारा फाइल लिखित कथन पर किए गए हस्ताक्षरों का सूचना से संलग्न डाक-अभिस्वीकृति पर हुए हस्ताक्षरों से मेल खाना – किराएदार पर सूचना की सम्यक् तामील मानी जाएगी – मकान-मालिक द्वारा किराएदारी के पर्यवसान समुचित रूप से माना जाएगा ।

पी. दामोदर राजू बनाम **श्रीमती आर. एस. परमेश्वरी** 627

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 33 – साक्षी द्वारा पूर्वतर कार्यवाही में दिया गया अभिसाक्ष्य – ऐसे अभिसाक्ष्य की पश्चात्वर्ती कार्यवाही में ग्राह्यता – ग्राह्यता के लिए शर्तें – ऐसे अभिसाक्ष्य को पश्चात्वर्ती कार्यवाही या मामले में तभी ग्रहण किया जा सकता है जब साक्ष्य विधि द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति के समक्ष दिया गया हो, पूर्ववर्ती और पश्चात्वर्ती कार्यवाही के पक्षकार समान हों, दूसरे पक्ष को साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का समुचित अवसर दिया गया हो, दोनों कार्यवाहियों में विवाद्यक एक जैसे हों

पृष्ठ संख्या

और किसी प्रकार की अक्षमता के कारण साक्षी को न्यायालय में आहूत किया जाना संभव न हो ।

जक्का श्रीनिवास राव और अन्य बनाम **जव्वाजी वेंकट चलपति राव और अन्य** 577

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 104 – आदेश 39, नियम 2(क) के अंतर्गत न्यायालय द्वारा पारित दांडिक आदेश के विरुद्ध अपील – ये कार्यवाहियां अर्धदांडिक प्रकृति की हैं इसलिए न्यायालय को किसी को अपने आदेश के अतिक्रमण का दोषी ठहराए जाने के लिए उच्चतर कोटि के सबूत की आवश्यकता होगी – न्यायालय द्वारा अकस्मात् यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि अस्थायी निषेधाज्ञा आदेश की पूर्ण जानकारी होने के बावजूद आदेश का अतिक्रमण किया गया – न्यायालय द्वारा युक्तिसंगत रूप से विचार किया जाना अपेक्षित है ।

अशरफ अहमद बनाम **ए. एस. भरतरी और अन्य** 605

– आदेश 7, नियम 11 [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 6 और 7] – दहेज और स्वर्ण आभूषण या उसकी कीमत की वसूली के लिए वाद – दहेज धारित करने वाले व्यक्ति की प्रास्थिति – चूंकि स्त्री की ओर से दहेज प्राप्त करने वाला व्यक्ति या पति एक न्यासी के समान होता है – अत: जब तक ऐसा व्यक्ति दहेज से संबंधित चीजें स्त्री के हक़ में अंतरित नहीं कर देता, स्त्री ऐसी चीजों या उसकी कीमत की वसूली के लिए वाद दायर कर सकती है ।

वादीबोयाना वेंकट कृष्ण रेड्डी बनाम **सी. वेंकट रमामा रेड्डी** 716

पृष्ठ संख्या

– आदेश 14, नियम 2 – विभाजन के लिए वाद – विचारण न्यायालय द्वारा कुल 12 विवाद्यक बनाकर प्रथमत: दो विवाद्यकों पर सुनकर निर्णय दिया जाना – न्यायालय द्वारा प्रदर्शों से संबंधित सम्पत्ति को वाद अनुसूची में सम्मिलित करने का निदेश किया जाना – विधिमान्यता – यह वादी या प्रतिवादी का अधिकार है कि वह वादपत्र अनुसूची में किस सम्पत्ति को सम्मिलित या उल्लिखित करे – न्यायालय द्वारा इस बारे में निदेश देना उचित नहीं है – न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह सभी विवाद्यकों पर समुचित उत्तर देकर अपना निर्णय पारित करे – अत: मामले को प्रतिप्रेषित किया जाना चाहिए ।

सी. एस. सुन्दरेश और एक अन्य बनाम **सी. एस. अनन्तलक्ष्मी और अन्य** 621

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13(1) (i-क) और 25 – पति द्वारा पत्नी के अवैध संबंधों के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी – पत्नी द्वारा स्थायी निर्वाहिका का दावा – पत्नी के पिता द्वारा अपने दामाद के दावे का समर्थन किया जाना – पत्नी के पिता द्वारा अपनी पुत्री को समझाने का प्रयत्न किया जाना – पत्नी द्वारा अवैध संबंधों से इनकार न किया जाना – साक्ष्य से यह भी साबित होना कि पत्नी अध्यापिका के रूप में नौकरी करके अपनी स्वतंत्र आय रखती है – स्थायी निर्वाहिका के लिए पत्नी की हक़दारी – पत्नी स्थायी निर्वाहिका के लिए हक़दार नहीं है ।

ज्योति रेखा बोरा मोहन्ता (श्रीमती) बनाम **हरेन मोहन्ता** 646

पृष्ठ संख्या

– धारा 13(1) (iक) और (iख) – विवाह-विच्छेद और अभित्यजन – पत्नी द्वारा अभिकथित रूप से पति के विरुद्ध क्रूरता का व्यवहार करने और बिना किसी कारण से पत्नी द्वारा पति को अभित्यजित करने के कारण पति क्रूरता और अभित्यजन दोनों के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्राप्त करने का हकदार है ।

अभिलाष कुमार गुप्ता बनाम **श्रीमती श्वेता बलदेव गुप्ता** 655

जक्का श्रीनिवास राव और अन्य

बनाम

जव्वाजी वेंकट चलपति राव और अन्य

(2018 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 7339)

तारीख़ 23 अप्रैल, 2019

न्यायमूर्ति डी. वी. एस. एस. सोमयाजुलू

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 33 – साक्षी द्वारा पूर्वतर कार्यवाही में दिया गया अभिसाक्ष्य – ऐसे अभिसाक्ष्य की पश्चात्वर्ती कार्यवाही में ग्राह्यता – ग्राह्यता के लिए शर्तें – ऐसे अभिसाक्ष्य को पश्चात्वर्ती कार्यवाही या मामले में तभी ग्रहण किया जा सकता है जब साक्ष्य विधि द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति के समक्ष दिया गया हो, पूर्ववर्ती और पश्चात्वर्ती कार्यवाही के पक्षकार समान हों, दूसरे पक्ष को साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का समुचित अवसर दिया गया हो, दोनों कार्यवाहियों में विवाद्यक एक जैसे हों और किसी प्रकार की अक्षमता के कारण साक्षी को न्यायालय में आहूत किया जाना संभव न हो ।

2011 के मूल वाद सं. 23 में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 652 फाइल किया गया था जिसमें जक्का सुब्बाराव नामक व्यक्ति के अभिसाक्ष्य को जो अपर ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, नरसारावपेट की फाइल पर 1993 के मूल वाद सं. 98 में अभिलिखित किया गया था, चिन्हित करने के लिए अनुरोध किया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा जो वर्तमान वाद में वादी हैं, उक्त आवेदन का विरोध किया गया था । अंततः न्यायालय ने अक्तूबर, 2018 को पारित आक्षेपित आदेश द्वारा 1993 के पूर्वतर मूल वाद सं. 98 में पूर्व में अभिलिखित अभिसाक्ष्य को स्वीकार करने की अनुज्ञा प्रदान

की जिसे आक्षेपित करते हुए वर्तमान सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया है । यह सिविल पुनरीक्षण आवेदन विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश XIII, नारसारावपेट द्वारा 2011 के मूल वाद सं. 23 में फाइल किए गए 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 562 में तारीख 1 अक्तूबर, 2018 को पारित आदेश को प्रश्नगत करते हुए फाइल किया गया है । पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस विषय पर सुस्थापित विधि के अनुसार किसी पूर्वतर न्यायिक कार्यवाही में अभिलिखित साक्ष्य को अन्य न्यायिक कार्यवाही में स्वीकार किए जाने से पूर्व इन शर्तों का पूरा होना आवश्यक है (1) साक्ष्य किसी न्यायिक कार्यवाही में अथवा साक्ष्य लेने के लिए विधि द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष दिया गया होना चाहिए ; (2) प्रथम कार्यवाही उन्हीं पक्षकारों के बीच होनी चाहिए जो द्वितीय कार्यवाही में पक्षकार हैं या पक्षकारों के हित-प्रतिनिधियों के बीच कार्यवाही हुई हो ; (3) उस पक्षकार को जिसके विरुद्ध अभिसाक्ष्य दिया गया है, अभिसाक्ष्य अभिलिखित किए जाने के समय अभिसाक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का पूर्ण अवसर दिया गया हो ; (4) दोनों कार्यवाहियों में अन्तर्वलित विवाद्यक एक जैसे हों या आधारत: एक जैसे हों ; (5) साक्षी की मृत्यु हो जाने के कारण उसे पश्चात्वर्ती कार्यवाही में आहूत न किया जा सके, अथवा साक्ष्य देने में अक्षम हो, अथवा दूसरे पक्षकार द्वारा उसे पेश न करने दिया गया हो, अथवा विलंब होता हो या खर्चों की धनराशि अयुक्तियुक्त हो । पूर्व-न्याय इत्यादि जैसे किसी मामले में जहां पूर्वतर और पश्चात्वर्ती मामले में अभिवचन न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने हेतु समर्थ बनाने के लिए किए गए हों कि दोनों मामलों में विवाद्यक एक जैसे हैं वहां इस प्रकृति के मामले में न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि दोनों वादों में अन्तर्वलित विवाद्यक एक जैसे/आधारभूत हैं और पक्षकार आदि भी एक जैसे हैं । अत: न्यायालय के लिए यह आवश्यक है कि वह ऐसा निष्कर्ष निकालने के लिए दोनों वादों में अभिवचनों अथवा अन्य सामग्री आदि पर विचार करे । न्यायालय का यह भी समाधान होना चाहिए कि उस पक्षकार को अर्थात् प्रतिवादियों को जिनके विरुद्ध अभिसाक्ष्य दिया गया है, प्रतिपरीक्षा करने का पूर्ण अवसर दिया गया था । इसके लिए साक्षी का संपूर्ण अभिसाक्ष्य फाइल किया

जाना चाहिए और उस पर विचार किया जाना चाहिए । अंततः न्यायालय का यह समाधान होना चाहिए कि साक्षी पश्चात्वर्ती कार्यवाहियों में साक्ष्य देने के लिए "अक्षम" था । अक्षमता अस्थायी या क्षणिक नहीं होनी चाहिए जैसे कि अस्थायी कमजोरी, बीमारी इत्यादि में होती है । न्यायालय का सभी आधारों पर पूर्ण समाधान होना चाहिए और उस पक्षकार को जो पूर्वतर वाद में दिए गए अभिसाक्ष्य को फाइल करना चाहता है, इन आवश्यक तत्वों के बारे में अभिवचन करना चाहिए और उन्हें साबित करना चाहिए । वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय के समक्ष यह निष्कर्ष निकालने के लिए कोई सामग्री नहीं है (क) दोनों कार्यवाहियों में अन्तर्वलित विवाद्यक एक जैसे या आधारभूत हैं ; (ख) पूर्वतर वाद में सभी पक्षकारों को उस साक्षी की जिसके अभिसाक्ष्य को चिह्नित किया जाना ईप्सित है, प्रतिपरीक्षा करने का पूर्ण अवसर दिया गया था ; (ग) साक्षी अपनी बीमारी के कारण अथवा अन्य समान कतिपय कारणों के कारण साक्ष्य देने में अक्षम था । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पूर्व में उल्लेख किया गया है, ये ऐसे आधार हैं जिनका न्यायालय द्वारा सतर्कतापूर्वक अवधारण किया जाना चाहिए और आवेदकों द्वारा इन्हें साबित करना चाहिए । तथ्यतः इस मामले में अभिसाक्ष्य स्वीकार करने के लिए आवेदन के समर्थन में फाइल किए गए शपथपत्र में यह कहा गया है कि साक्षी साशय साक्ष्य देने से बच रहा है जिससे स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि साक्षी इस बारे में जानता है कि वह क्या कर रहा है और वह जानबूझकर उत्तर देने से बच रहा है । इसके अतिरिक्त फाइल किए गए प्रति-शपथपत्र में भी यह प्रकथन किया गया है कि उसकी अधिक आयु के कारण दुर्बलता और शारीरिक दुर्बलता के कारण साक्षी ने साक्ष्य नहीं दिया था और इसलिए प्रति-शपथपत्र में यह दोहराया गया है कि वह अक्षम नहीं है । विधि के उपबंधों को जिनको स्पष्ट रूप से पूरा नहीं किया गया है, दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय का यह मत है कि निचले न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में गलती की है । निचले न्यायालय ने कतिपय संप्रेक्षणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि पक्षकारों के बीच कार्यवाहियां एक जैसी हैं और पक्षकारों के बीच विवाद्यक अधिष्ठायी रूप से एक जैसे हैं । यह प्रक्रिया पूर्ण रूप से गलत है । अधिवक्ता-आयुक्त ने अनिष्पादित अधिपत्र वापस किया है क्योंकि साक्षी प्रश्नों का उत्तर

नहीं दे रहा था तथापि, 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 562 में प्रथम प्रतिवादी द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र में यह कहा गया है कि साक्षी साशय साक्ष्य देने से बच रहा है । विचारण न्यायालय द्वारा इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है । अत: यह न्यायालय निचले न्यायालय के इन निष्कर्षों को स्वीकार करने में असमर्थ है कि वस्तुत: साक्षी "अक्षम" था और साक्ष्य देने की स्थिति में नहीं था । मामले को उस दृष्टि से देखते हुए दोनों पक्षों को सुनने और इस विषय पर उपलब्ध विधि पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि निचले न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में त्रुटि कारित की है । अत: पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए अपर जिला न्यायाधीश XIII, नारसारावपेट द्वारा 2011 के मूल वाद सं. 23 में फाइल किए गए 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 562 में तारीख 1 अक्तूबर, 2018 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है । (पैरा 6, 9, 10, 11 और 12)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2010]	2010 (4) (ए. पी.) 106 : **डाक्टर एस. जे. विन्स** बनाम **बेथानी चेपल ट्रस्ट और अन्य** ;	4
[2004]	ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1492 = (2004) 4 एस. सी. सी. 236 : **शशि जेना और अन्य** बनाम **थाडल स्वाइन और एक अन्य** ;	7
[1980]	17 (1980) डी. एल. टी. 225 : **अमरजीत कौर और अन्य** बनाम **किशन चन्द** ;	4
[1985]	85 आई. सी. 209 : मनु/टी. एन./0849/1924 : **सिसतला वेंकट शास्त्री** बनाम **जरनीनी वेंकटगोपालुडू** ।	4

सिविल (पुनरक्षणीय) अधिकारिता : 2018 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 7339.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन सिविल पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदकों की ओर से श्री पोसानी वेंकटेश्वरलू

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री पी. दुर्गा प्रसाद

न्यायमूर्ति डी. वी. एस. एस. सोमयाजुलू – यह सिविल पुनरीक्षण आवेदन विद्वान् अपर जिला न्यायाधीश XIII, नारसारावपेट द्वारा 2011 के मूल वाद सं. 23 में फाइल किए गए 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 562 में तारीख 1 अक्तूबर, 2018 को पारित आदेश को प्रश्नगत करते हुए फाइल किया गया है ।

2. 2011 के मूल वाद सं. 23 में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन 2018 का अंतरिम आवेदन सं. 652 फाइल किया गया था जिसमें जक्का सुब्बाराव नामक व्यक्ति के अभिसाक्ष्य को जो अपर ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, नरसारावपेट की फाइल पर 1993 के मूल वाद सं. 98 में अभिलिखित किया गया था, चिन्हित करने के लिए अनुरोध किया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा जो वर्तमान वाद में वादी हैं, उक्त आवेदन का विरोध किया गया था । अंतत: न्यायालय ने अक्तूबर, 2018 को पारित आक्षेपित आदेश द्वारा 1993 के पूर्वतर मूल वाद सं. 98 में पूर्व में अभिलिखित अभिसाक्ष्य को स्वीकार करने की अनुज्ञा प्रदान की जिसे आक्षेपित करते हुए वर्तमान सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया है ।

3. इस न्यायालय ने पुनरीक्षण-कर्ताओं के विद्वान् काउंसेल श्री पोसानी वेंकटेश्वरलू और प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री पी. दुर्गा प्रसाद को सुना ।

4. पुनरीक्षण-कर्ताओं के विद्वान् काउंसेल ने निचले न्यायालय द्वारा आवेदन मंजूर करने को अत्यंत प्रबल रूप से आक्षेपित किया है । उन्होंने इस बात पर बल दिया है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 सुने जाने के सामान्य नियम के लिए एक अपवाद है और यह दलील दी कि जब तक कि साक्ष्य अधिनियम (जिसे आगे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 33 के अधीन विनिर्दिष्ट शर्तों का

पूर्ण रूप से अनुपालन न हो, दूसरे वाद में दिए गए अभिसाक्ष्य को वर्तमान वाद में साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता । उन्होंने यह दलील दी है कि उनके द्वारा उठाए गए आधारों अर्थात् आधार सं. 3, 4, 5, 9, 11, 12 और 13 में महत्वपूर्ण बिन्दुओं के बारे में उनके द्वारा पुनरीक्षण में दलीलें दी गई हैं । उन्होंने यह दलील दी है कि किसी सबूत के बिना और अधिनियम की धारा 33 में उल्लिखित शर्तों का अनुपालन किए बिना निचले न्यायालय ने आवेदन मंजूर किया है । उन्होंने यह भी दलील दी है कि विवाद्यक मामला समान नहीं है । साक्ष्य देने के लिए साक्षी की अक्षमता साबित नहीं की गई है और पूर्वतर वाद में साक्षी की प्रतिपरीक्षा नहीं की गई थी और इसलिए अधिनियम की धारा 33 के अधीन आवश्यक संघटक पूरे नहीं हुए हैं । आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने इस संबंध में **डाक्टर एस. जे. विन्स** बनाम **बेथानी चेपल ट्रस्ट और अन्य**[1] ; **अमरजीत कौर और अन्य** बनाम **किशन चन्द**[2] और **सिसतला वेंकट शास्त्री** बनाम **जरनीनी वेंकटगोपालुडू**[3] वाले मामलों का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि निचले न्यायालय ने त्रुटि कारित की है ।

5. इसके जवाब में प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि निचले न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने के लिए संपूर्ण सामग्री पर विचार किया है कि पूर्वतर वाद में अभिलिखित साक्ष्य, साक्ष्य में ग्राह्य है । विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित आदेश के पैरा 11 का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि निचले न्यायालय ने यह अवेक्षा की है कि वाद में अन्तर्निहित संपत्ति-अनुसूची समान थी, और उस अधिवक्ता आयुक्त ने जिसे साक्ष्य अभिलिखित करने के लिए नियुक्त किया गया था, स्पष्ट रूप से यह कहा है कि साक्षी उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे रहा था और इसलिए न्यायालय के पास यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त सामग्री मौजूद थी कि उक्त जे. सुब्बाराव साक्ष्य देने में अक्षम था ।

---

[1] 2010 (4) (ए. पी.) 106.

[2] 17 (1980) डी. एल. टी. 225.

[3] 85 आई. सी. 209 : मनु/टी. एन./0849/1924.

विधिक पृष्ठभूमि

6. इस विषय पर सुस्थापित विधि के अनुसार किसी पूर्वतर न्यायिक कार्यवाही में अभिलिखित साक्ष्य को अन्य न्यायिक कार्यवाही में स्वीकार किए जाने से पूर्व इन शर्तों का पूरा होना आवश्यक है :-

(1) साक्ष्य किसी न्यायिक कार्यवाही में अथवा साक्ष्य लेने के लिए विधि द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष दिया गया होना चाहिए ;

(2) प्रथम कार्यवाही उन्हीं पक्षकारों के बीच होनी चाहिए जो द्वितीय कार्यवाही में पक्षकार हैं या पक्षकारों के हित-प्रतिनिधियों के बीच कार्यवाही हुई हो ;

(3) उस पक्षकार को जिसके विरुद्ध अभिसाक्ष्य दिया गया है, अभिसाक्ष्य अभिलिखित किए जाने के समय अभिसाक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का पूर्ण अवसर दिया गया हो ;

(4) दोनों कार्यवाहियों में अन्तर्वलित विवाद्यक एक जैसे हों या आधारत: एक जैसे हों ;

(5) साक्षी कि मृत्यु हो जाने के कारण उसे पश्चात्वर्ती कार्यवाही में आहूत न किया जा सके, अथवा साक्ष्य देने में अक्षम हो, अथवा दूसरे पक्षकार द्वारा उसे पेश न करने दिया गया हो, अथवा विलंब होता हो या खर्चों की धनराशि अयुक्तियुक्त हो ।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **शशि जेना और अन्य** बनाम **थाडल स्वाइन और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :-

"8. उपर्युक्त उपबंध के परिशीलन मात्र से यह स्पष्ट होता है कि किसी न्यायिक कार्यवाही में या साक्ष्य लेने के लिए प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष किसी साक्षी द्वारा दिया गया साक्ष्य किसी पश्चात्वर्ती न्यायिक कार्यवाही में या उसी न्यायिक कार्यवाही के

[1] ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1492 = (2004) 4 एस. सी. सी. 236.

पश्चात्वर्ती प्रक्रम में ऐसे तथ्यों की सत्यता को साबित करने के प्रयोजन के लिए ग्राह्य है जो उसने पूर्वतर न्यायिक कार्यवाही में अथवा उसी न्यायिक कार्यवाही के पूर्वतर प्रक्रम पर दिए गए साक्ष्य में कहे हैं, तथापि, परन्तुक के अधीन पश्चात्वर्ती कार्यवाही में ऐसे साक्ष्य को स्वीकार किए जाने के लिए अथवा उसी कार्यवाही के पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर स्वीकार किए जाने के लिए तीन पूर्व-अपेक्षाएं पूरी होती हों, जो इस प्रकार हैं – (i) पूर्वतर कार्यवाही उन्हीं पक्षकारों के बीच थी ; (ii) प्रथम कार्यवाही में दूसरे पक्षकार को प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार हो और अवसर दिया गया हो ; और (iii) दोनों कार्यवाहियों में प्रश्नगत विवाद्यक आधारभूत (अधिष्ठायी) हों, और उपर्युक्त उल्लिखित तीनों पूर्व-अपेक्षाओं में से किसी अपेक्षा का अभाव न हो । इस संबंध में अधिनियम की धारा 33 लागू नहीं होती है । इस न्यायालय ने इस प्रश्न पर वी. एम. मैथ्यू **बनाम** वी. एस. शर्मा और अन्य, ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 109 = (1995) 6 एस. सी. सी. 122 वाले मामले में विचार किया था जिसमें यह अधिकथित किया गया था कि द्वितीय परंतुक को दृष्टिगत करते हुए किसी पूर्वतर कार्यवाही में दिया गया किसी साक्षी का साक्ष्य अधिनियम की धारा 33 के अधीन तभी ग्रहण किए जाने योग्य होगा जब प्रथम कार्यवाही में दूसरे पक्षकार को साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार हो और अवसर दिया गया हो । उक्त मामले में न्यायालय ने इस प्रकार मत व्यक्त किया –

> 8. परंतुक में निर्दिष्ट विरोधी पक्षकार पूर्वतर कार्यवाही में ऐसा पक्षकार हो जिसके विरुद्ध उस कार्यवाही में उसके हित के विरुद्ध साक्ष्य दिया गया हो । उसे पूर्वतर कार्यवाही में साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार हो और अवसर दिया गया हो ..... परंतुक इस बारे में ऐसी परीक्षा अधिकथित करता है कि किसी विशिष्ट साक्षी के कथन को पश्चात्वर्ती कार्यवाही में ग्रहण किए जाने के लिए दोनों पक्षकारों को परीक्षा और प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दिया गया हो ।"

साक्ष्य

8. यदि वर्तमान मामले की विधिक प्रास्थिति की पृष्ठभूमि में परीक्षा की जाए तो प्रथम और महत्वपूर्ण तथ्य जो इस न्यायालय की जानकारी में आया है, यह है कि यह निष्कर्ष निकालने के लिए न्यायालय के समक्ष कोई दस्तावेजी साक्ष्य मौजूद नहीं है कि पूर्वतर अभिसाक्ष्य साक्ष्य के रूप में ग्राह्य है । 2011 का वर्तमान मूल वाद सं. 23 जे. श्रीनिवास राव और जे. चिन्ना सुब्बाराव द्वारा फाइल किया गया है । चूंकि जे. चिन्ना सुब्बाराव की मृत्यु हो चुकी है इसलिए उसके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख पर वादी सं. 3 और 4 के रूप में पक्षकार बनाया गया है । मामले में आठ प्रतिवादी हैं जिनमें 5 वैयक्तिक प्रतिवादी हैं । दो स्वामित्वधारी फर्में (प्रतिवादी सं. 6 और 7) हैं और एक भागीदारी फर्म (प्रतिवादी सं. 8) है । वाद, वाद-संपत्ति अनुसूची के विभाजन के लिए फाइल किया गया है । पुनरीक्षण-कर्ताओं के विद्वान् काउंसेल द्वारा फाइल की गई अतिरिक्त सामग्री अर्थात् कागज-पत्रों से यह उपदर्शित होता है कि 1993 का अन्य मूल वाद सं. 98 नागासरापू शिवा वेंकट रंगाराव, सेनीशेटटी वेंकटेश्वरलू, गैरे सत्यनारायण, नरेला वेंकट पापाराव और पेनुगोंड़ा गांधी द्वारा इन प्रतिवादियों के विरुद्ध फाइल किया गया था - (1) जक्का सुब्बाराव (2) जक्का चीना सुब्बाराव (3) जव्वाजी वेंकटअपय्या (4) जव्वाजी वेंकट चलपति राव (5) जव्वाजी राघव राव (6) जव्वाजी लक्ष्मी चलपति राव (7) शासकीय रिसीवर, गुंटूर और चार भागीदारी फर्मों को प्रतिवादी सं. 8 से 11 के रूप में पक्षकार बनाया गया है । उक्त वाद तारीख 21 दिसंबर, 1990 की एक संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए फाइल किया गया था । इस वादपत्र पर विचारण न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया था ।

9. पूर्व-न्याय इत्यादि जैसे किसी मामले में जहां पूर्वतर और पश्चात्वर्ती मामले में अभिवचन न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने हेतु समर्थ बनाने के लिए किए गए हों कि दोनों मामलों में विवाद्यक एक जैसे हैं वहां इस प्रकृति के मामले में न्यायालय यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि दोनों वादों में अन्तर्वलित विवाद्यक एक जैसे/आधारभूत हैं और पक्षकार आदि भी एक जैसे हैं । अत: न्यायालय के लिए यह

आवश्यक है कि वह ऐसा निष्कर्ष निकालने के लिए दोनों वादों में अभिवचनों अथवा अन्य सामग्री आदि पर विचार करे । न्यायालय का यह भी समाधान होना चाहिए कि उस पक्षकार को अर्थात् प्रतिवादियों को जिनके विरुद्ध अभिसाक्ष्य दिया गया है, प्रतिपरीक्षा करने का पूर्ण अवसर दिया गया था । इसके लिए साक्षी का संपूर्ण अभिसाक्ष्य फाइल किया जाना चाहिए और उस पर विचार किया जाना चाहिए । अंतत: न्यायालय का यह समाधान होना चाहिए कि साक्षी पश्चात्वर्ती कार्यवाहियों में साक्ष्य देने के लिए "अक्षम" था । अक्षमता अस्थायी या क्षणिक नहीं होनी चाहिए जैसे कि अस्थायी कमजोरी, बीमारी इत्यादि में होती है । न्यायालय का सभी आधारों पर पूर्ण समाधान होना चाहिए और उस पक्षकार को जो पूर्वतर वाद में दिए गए अभिसाक्ष्य को फाइल करना चाहता है, इन आवश्यक तत्वों के बारे में अभिवचन करना चाहिए और उन्हें साबित करना चाहिए ।

निष्कर्ष

10. वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय के समक्ष यह निष्कर्ष निकालने के लिए कोई सामग्री नहीं है (क) दोनों कार्यवाहियों में अन्तर्वलित विवाद्यक एक जैसे या आधारभूत हैं ; (ख) पूर्वतर वाद में सभी पक्षकारों को उस साक्षी की जिसके अभिसाक्ष्य को चिह्नित किया जाना ईप्सित है, प्रतिपरीक्षा करने का पूर्ण अवसर दिया गया था ; (ग) साक्षी अपनी बीमारी के कारण अथवा अन्य समान कतिपय कारणों के कारण साक्ष्य देने में अक्षम था । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पूर्व में उल्लेख किया गया है, ये ऐसे आधार हैं जिनका न्यायालय द्वारा सतर्कतापूर्वक अवधारण किया जाना चाहिए और आवेदकों द्वारा इन्हें साबित करना चाहिए । तथ्यत: इस मामले में अभिसाक्ष्य स्वीकार करने के लिए आवेदन के समर्थन में फाइल किए गए शपथपत्र में यह कहा गया है कि साक्षी साशय साक्ष्य देने से बच रहा है जिससे स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि साक्षी इस बारे में जानता है कि वह क्या कर रहा है और वह जानबूझकर उत्तर देने से बच रहा है । इसके अतिरिक्त फाइल किए गए प्रति-शपथपत्र में भी यह प्रकथन किया गया है कि उसकी अधिक आयु के कारण दुर्बलता और शारीरिक दुर्बलता के कारण

साक्षी ने साक्ष्य नहीं दिया था और इसलिए प्रति-शपथपत्र में यह दोहराया गया है कि वह अक्षम नहीं है ।

11. विधि के उपबंधों को जिनको स्पष्ट रूप से पूरा नहीं किया गया है, दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय का यह मत है कि निचले न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में गलती की है । निचले न्यायालय ने कतिपय संप्रेक्षणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि पक्षकारों के बीच कार्यवाहियां एक जैसी हैं और पक्षकारों के बीच विवाद्यक अधिष्ठायी रूप से एक जैसे हैं । यह प्रक्रिया पूर्ण रूप से गलत है । अधिवक्ता-आयुक्त ने अनिष्पादित अधिपत्र वापस किया है क्योंकि साक्षी प्रश्नों का उत्तर नहीं दे रहा था तथापि 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 562 में प्रथम प्रतिवादी द्वारा फाइल किए गए शपथपत्र में यह कहा गया है कि साक्षी साशय साक्ष्य देने से बच रहा है । विचारण न्यायालय द्वारा इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है । अत: यह न्यायालय निचले न्यायालय के इन निष्कर्षों को स्वीकार करने में असमर्थ है कि वस्तुत: साक्षी "अक्षम" था और साक्ष्य देने की स्थिति में नहीं था ।

12. मामले को उस दृष्टि से देखते हुए दोनों पक्षों को सुनने और इस विषय पर उपलब्ध विधि पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि निचले न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में त्रुटि कारित की है । अत: पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए अपर जिला न्यायाधीश XIII, नारसारावपेट द्वारा 2011 के मूल वाद सं. 23 में फाइल किए गए 2018 के अंतरिम आवेदन सं. 562 में तारीख 1 अक्तूबर, 2018 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है । खर्चों के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

13. इस अपील में लंबित प्रकीर्ण आवेदन, यदि कोई हों, बंद किए जाते हैं ।

पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया ।

महः.

(2019) 2 सि. नि. प. 588 इलाहाबाद

सुषमा (श्रीमती) और अन्य

बनाम

न्यू इंडिया एश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड

(2006 की प्रथम अपील सं. 3414)

तारीख़ 17 मई, 2019

न्यायमूर्ति सरल श्रीवास्तव

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163क और 173 – सौ रुपए की प्रीमियम पर बीमा-पालिसी – पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अनुसार 2 लाख रुपए की धनराशि का दायित्व नियत किया जाना – बीमा-कंपनी द्वारा उक्त धनराशि का मृतक के आश्रितों को संदाय किया जाना – मृतक के आश्रितों द्वारा अधिक धनराशि के लिए दावा – विधिमान्यता – चूंकि बीमा-पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अनुसार बीमा-कंपनी का दायित्व 2 लाख रुपए तक सीमित था – अत: दावेदार इससे अधिक धनराशि का दावा नहीं कर सकते – अत: दावा याचिका ठीक ही खारिज की गई है ।

अपीलार्थियों ने शिव कुमार नामक व्यक्ति की मृत्यु के लिए 11,00,000/- रुपए के प्रतिकर के लिए अनुरोध करते हुए मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 163क के अधीन एक दावा-याचिका संस्थित की थी । यह कहा गया है कि शिव कुमार यान महिन्द्रा जीप रजिस्ट्रीकरण सं. यू. पी. 12 एच. 3941 (जिसे आगे 'जीप' कहा गया है) का स्वामी-सहयुक्त-चालक था । जब वह तारीख 22 जून, 2004 को लगभग 11 बजे पूर्वाह्न जीप चला रहा था तब अचानक एक गाय जीप के सामने आ गई और गाय को बचाते समय जीप एक पेड़ से टकरा गई । उक्त दुर्घटना के परिणामस्वरूप शिव कुमार को क्षतियां पहुंचीं और उसकी मृत्यु हो गई । यह भी कहा गया है कि मृतक की आयु

लगभग 26 वर्ष थी और वह 5,000/- रुपए प्रतिमास आय अर्जित करता था । न्यू इंडिया एश्योरेन्स कंपनी ने लिखित कथन फाइल करके यह कहते हुए उक्त दावा-याचिका का विरोध किया कि दावा-याचिका गलत तथ्यों के आधार पर फाइल की गई है । यह भी अभिवचन किया गया था कि बीमा-कंपनी का दायित्व बीमा-पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अध्यधीन है और अपीलार्थी द्वारा मांगा गया प्रतिकर अत्यधिक और आधार-रहित है । दावेदार-अपीलार्थियों द्वारा वर्तमान अपील मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय सं. 4, मेरठ द्वारा तारीख़ 12 सितंबर, 2006 को पारित उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा अधिकरण ने दावेदार-अपीलार्थियों की दावा-याचिका खारिज की है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह विवादित नहीं है कि मृतक जीप का स्वामी था और उक्त जीप की दुर्घटना में उसे पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हुई थी । इस अपील में विचारार्थ एकमात्र विवाद्यक यह है कि क्या बीमा-कंपनी को उस धनराशि से अधिक के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जिसे बीमा-कंपनी जीप के स्वामी की मृत्यु के मामलों में संदाय करने के लिए तैयार है । यह स्पष्ट है कि बीमा-कंपनी का दायित्व बीमा-पालिसी के निबंधनों और शर्तों से विनियमित होगा और बीमा-कंपनी से उससे अधिक संदाय करने के लिए नहीं कहा जा सकता जिसके बारे में बीमा-कंपनी ने यान के स्वामी की मृत्यु या क्षति के मामले में संदाय करने का वचन दिया है । वर्तमान मामले में बीमा-पालिसी के परिशीलन से यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि बीमा-कंपनी ने 2,00,000/- रुपए की सीमा तक जोखिम उठाने के लिए स्वामी/चालक की आकस्मिक वैयक्तिक दुर्घटना के संबंध में 100/- रुपए की धनराशि वसूली है । बीमा-कंपनी के अनुसार उसने इस अपीलार्थी को इस धनराशि का संदाय कर दिया है । अपीलार्थी द्वारा इस तथ्य के संबंध में विवाद नहीं किया गया है । ऊपर उल्लिखित कारणों से अपील में कोई बल नहीं है और तद्नुसार यह खारिज की जाती है । (पैरा 10, 11, 14, 15 और 17)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2018] (2018) 9 एस. सी. सी. 801 :
नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम
आशालता भौमिक और अन्य ; 8, 13

[2013] (2013) 1 एस. सी. सी. 731 :
नेशनल इंश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड बनाम
बालकृष्णन और एक अन्य ; 7, 16

[2004] (2004) 8 एस. सी. सी. 533 :
धनराज बनाम **नेशनल इंडिया एश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड** । 8, 12

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2006 की प्रथम अपील सं. 3414.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन प्रथम अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री रवि अग्रवाल

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री एन. के. श्रीवास्तव और राजीव चड्ढा

न्यायमूर्ति सरल श्रीवास्तव – अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री रवि अग्रवाल और प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल श्री राजीव चड्ढा और श्री एन. के. श्रीवास्तव को सुना गया ।

2. दावेदार-अपीलार्थियों द्वारा वर्तमान अपील मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय सं. 4, मेरठ द्वारा तारीख़ 12 सितंबर, 2006 को पारित उस निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा अधिकरण ने दावेदार-अपीलार्थियों की दावा-याचिका खारिज की है ।

3. अपीलार्थियों ने शिव कुमार नामक व्यक्ति की मृत्यु के लिए

11,00,000/- रुपए के प्रतिकर के लिए अनुरोध करते हुए मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 163क के अधीन एक दावा-याचिका संस्थित की थी । यह कहा गया है कि शिव कुमार यान महिन्द्रा जीप रजिस्ट्रीकरण सं. यू. पी. 12 एच. 3941 (जिसे आगे 'जीप' कहा गया है) का स्वामी-सहयुक्त-चालक था । जब वह तारीख 22 जून, 2004 को लगभग 11 बजे पूर्वाह्न जीप चला रहा था तब अचानक एक गाय जीप के सामने आ गई और गाय को बचाते समय जीप एक पेड़ से टकरा गई । उक्त दुर्घटना के परिणामस्वरूप शिव कुमार को क्षतियां पहुंचीं और उसकी मृत्यु हो गई । यह भी कहा गया है कि मृतक की आयु लगभग 26 वर्ष थी और वह 5,000/- रुपए प्रतिमास आय अर्जित करता था ।

4. न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी ने लिखित कथन फाइल करके यह कहते हुए उक्त दावा-याचिका का विरोध किया कि दावा-याचिका गलत तथ्यों के आधार पर फाइल की गई है । यह भी अभिवचन किया गया था कि बीमा-कंपनी का दायित्व बीमा-पालिसी के निबंधनों और शर्तों के अध्यधीन है और अपीलार्थी द्वारा मांगा गया प्रतिकर अत्यधिक और आधार-रहित है ।

5. अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर चार विवाद्यक विरचित किए ।

6. अधिकरण ने दुर्घटना और चालक अनुज्ञप्ति के विवाद्यक पर अपीलार्थी के हक़ में निष्कर्ष अभिलिखित किया तथापि, अधिकरण ने प्रतिकर के परिमाण से संबंधित विवाद्यक का विनिश्चय करते हुए पालिसी के निबंधनों और शर्तों की अवेक्षा करते हुए यह मत व्यक्त किया कि मृतक यान का स्वामी होने के नाते पालिसी के अधीन 2,00,000/- रुपए तक के लिए ही हक़दार था और बीमा-कंपनी ने प्रत्यर्थियों को इस धनराशि का संदाय कर दिया था और परिणामस्वरूप अधिकरण ने दावा-याचिका खारिज कर दी ।

7. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने उपर्युक्त निष्कर्ष को आक्षेपित

करते हुए यह दलील दी है कि यान की पालिसी व्यापक पालिसी थी । मृतक यान का स्वामी था और चूंकि यान का स्वामी बीमा-पालिसी के अधीन आता है इसलिए बीमा-कंपनी का दायित्व असीमित है और 2,00,000/- रुपए तक निर्बंधित नहीं है । उन्होंने इस संबंध में उच्चतम न्यायालय द्वारा **नेशनल इंश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड** बनाम **बालकृष्णन और एक अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है ।

8. इसके प्रतिकूल बीमा-कंपनी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि बीमा-पालिसी के परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि 2,00,000/- रुपए तक के स्वामी-सहयुक्त-चालक के जोखिम के लिए मात्र 100/- रुपए का प्रीमियम संदत्त किया गया है और चूंकि पालिसी के अधीन मृतक का आच्छादन (हक़दारी) केवल 2,00,000/- रुपए तक ही है इसलिए अधिकरण ने अपीलार्थी के दावे को खारिज करने में कोई अवैधता नहीं बरती है क्योंकि बीमा-कंपनी ने 2,00,000/- रुपए की धनराशि पहले ही संदत्त कर दी है और पालिसी के अधीन अपीलार्थी के लिए यही बीमा-कंपनी का दायित्व है । अत: अपील खारिज किए जाने योग्य है । उन्होंने अपनी दलील के समर्थन में उच्चतम न्यायालय द्वारा **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **आशालता भौमिक और अन्य**[2] और **धनराज** बनाम **नेशनल इंडिया एश्योरेन्स कंपनी लिमिटेड**[3] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है ।

9. मैंने पक्षकारों द्वारा दी गई परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार किया और अभिलेख का परिशीलन किया ।

10. यह विवादित नहीं है कि मृतक जीप का स्वामी था और उक्त जीप की दुर्घटना में उसे पहुंची क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हुई थी ।

11. इस अपील में विचारार्थ एकमात्र विवाद्यक यह है कि क्या बीमा-कंपनी को उस धनराशि से अधिक के लिए जिम्मेदार ठहराया जा

---

[1] (2013) 1 एस. सी. सी. 731.

[2] (2018) 9 एस. सी. सी. 801.

[3] (2004) 8 एस. सी. सी. 533.

सकता है जिसे बीमा-कंपनी जीप के स्वामी की मृत्यु के मामलों में संदाय करने के लिए तैयार है ।

12. उच्चतम न्यायालय ने **धनराज** (पूर्वोक्त) वाले मामले में एक ऐसी स्थिति पर विचार किया था जहां प्रश्नगत पालिसी एक व्यापक पालिसी थी और उच्चतम न्यायालय ने पालिसी के विभिन्न खंडों का निर्वचन करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि चूंकि जीप के स्वामी की क्षतियों के जोखिम के लिए पालिसी लागू नहीं होती इसलिए बीमा-कंपनी प्रतिकर का संदाय करने के लिए दायित्वाधीन नहीं है ।

13. उच्चतम न्यायालय ने हाल ही में **आशालता भौमिक** (पूर्वोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया है कि चूंकि बीमे की संविदा के अधीन क्षतिपूर्ति मृतक की वैयक्तिक दुर्घटना के लिए 2,00,000/- रुपए तक सीमित है इसलिए दावेदार प्रतिकर के रूप में उक्त धनराशि के लिए ही हक़दार हैं । उपर्युक्त निर्णय का पैरा 9 नीचे उद्धृत किया जा रहा है :–

> "9. अत: उच्च न्यायालय अपीलार्थी-बीमाकर्ता को अधिकरण द्वारा अवधारित प्रतिकर का संदाय करने के लिए निदेश देने में न्यायोचित नहीं था । चूंकि बीमे की संविदा के अधीन क्षतिपूर्ति मृतक की वैयक्तिक दुर्घटना तक सीमित है इसलिए प्रत्यर्थी प्रतिकर के संबंध में उक्त धनराशि के लिए ही हक़दार हैं । अत: अपीलार्थी को यह निदेश दिया जाता है कि वह आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर दावे की तारीख से अधिकरण में जमा करने की तारीख़ तक 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ 2,00,000/- रुपए की उक्त धनराशि अधिकरण के समक्ष जमा करे ।"

14. अत: उपर्युक्त निर्णय से यह स्पष्ट है कि बीमा-कंपनी का दायित्व बीमा-पालिसी के निबंधनों और शर्तों से विनियमित होगा और बीमा-कंपनी से उससे अधिक संदाय करने के लिए नहीं कहा जा सकता जिसके बारे में बीमा-कंपनी ने यान के स्वामी की मृत्यु या क्षति के मामले में संदाय करने का वचन दिया है ।

15. वर्तमान मामले में बीमा-पालिसी के परिशीलन से यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि बीमा-कंपनी ने 2,00,000/- रुपए की सीमा तक जोखिम उठाने के लिए स्वामी/चालक की आकस्मिक वैयक्तिक दुर्घटना के संबंध में 100/- रुपए की धनराशि वसूली है । बीमा-कंपनी के अनुसार उसने अपीलार्थी को इस धनराशि का संदाय कर दिया है । अपीलार्थी द्वारा इस तथ्य के संबंध में विवाद नहीं किया गया है ।

16. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा अवलंब लिए गए **बालकृष्णन** (पूर्वोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होता है क्योंकि उक्त मामले में निर्णय एक ऐसे संदर्भ में दिया गया था जहां तृतीय पक्षकार की जिसके क़ब्जे में प्रश्नगत यान था, मृत्यु हो गई थी और उच्चतम न्यायालय ने व्यापक/पैकेज पालिसी के निबंधनों और शर्तों का निर्वचन करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया था कि बीमा-कंपनी मृतक के जो यान का स्वामी नहीं था, आश्रितों को प्रतिकर का संदाय करने की जिम्मेदार है । **बालकृष्णन** (पूर्वोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय अपीलार्थी की कोई सहायता नहीं करता ।

17. ऊपर उल्लिखित कारणों से अपील में कोई बल नहीं है और तद्नुसार यह खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

मह.

(2019) 2 सि. नि. प. 595 इलाहाबाद

फ़य्याज़ कुरैशी

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2019 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 324)

तारीख़ 17 जुलाई, 2019

न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा और न्यायमूर्ति वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 (1980 का 65) – धारा 3(2) और 3(3) – याची के विरुद्ध अपने मकान के भीतर गो-वध करने का आरोप – पुलिस द्वारा छापा मारने के संबंध में समाचार-पत्रों में प्रकाशन – हिन्दू संगठनों द्वारा उत्तेजित होकर आन्दोलन और बन्द का आह्वान किया जाना – इस आधार पर याची का राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अधीन निरोध किया जाना – विधिमान्यता – जहां अभियुक्त के कार्य से विधि-व्यवस्था का भंग हुआ हो न कि लोक-व्यवस्था का, वहां मात्र जनता द्वारा प्रदर्शनों के आधार पर याची का राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अधीन निरोध किया जाना न्यायोचित नहीं है – अत: याची निर्मुक्त किए जाने का हकदार है ।

संक्षेप में मामले के सुसंगत तथ्यों का इस प्रकार उल्लेख किया जा सकता है कि जब याची जिला बदायूं के पुलिस थाना उसैत में रजिस्ट्रीकृत 2018 के अपराध मामला सं. 258 के संबंध में जिला जेल बदायूं में गो-वध (निवारण) अधिनियम की धारा 3/5/8 के अधीन निरुद्ध था तब उस पर जिला मजिस्ट्रेट, बदायूं द्वारा तारीख 4 दिसंबर, 2018 को निरोध के आधारों सहित आक्षेपित निरोध आदेश की तामील की गई थी । याची ने इस बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका द्वारा राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 (जिसे आगे संक्षेप में '1980 का अधिनियम' कहा गया है) के उपबंधों के अधीन अपने निरोध को प्रश्नगत किया है । निरोध का आदेश जिला मजिस्ट्रेट, बदायूं द्वारा 1980 के अधिनियम की धारा 3(3) के साथ पठित धारा 3(2) के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग में तारीख 4 दिसंबर, 2018 को पारित किया गया है, जिसकी राज्य सरकार द्वारा 1980 के अधिनियम की धारा 3(4) के अधीन

तारीख 22 जनवरी, 2019 को पारित आदेश द्वारा पुष्टि की गई है । आरंभ में निरोध का आदेश अनंतिम रूप से 3 मास की अवधि के लिए पारित किया गया था, जिसे तारीख 28 फरवरी, 2019 के आदेश द्वारा तीन मास की अतिरिक्त अवधि के लिए विस्तारित किया गया और इसके पश्चात् इसे पुन: तारीख 29 मई, 2019 के आदेश द्वारा तीन मास की अवधि के लिए आगे विस्तारित किया गया और इस प्रकार आज की तारीख पर 4 दिसंबर, 2018 से 9 मास की अवधि के लिए सतत् रूप से जारी है । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख के परिशीलन मात्र से न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर यह उपदर्शित करने वाली कोई सामग्री नहीं है कि वध का कार्य मकान की चारदीवारी के बाहर किया गया था अथवा पशु के अंग, गोश्त इत्यादि लोगों को विक्रीत करने के लिए मकान के बाहर लाए गए थे । इस बारे में कोई अभिकथन नहीं किया गया है कि लोग अभियुक्त के मकान में एकत्रित हो गए थे और उनकी उपस्थिति में अथवा उनकी जानकारी में वध किया गया था । यह उपदर्शित करने वाली भी कोई सामग्री नहीं है कि उस ग्राम या स्थान पर कोई साम्प्रदायिक हिंसा हुई थी जिसके परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति को क्षति पहुंची थी । न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि जब वध की सूचना फैल गई तब प्रदर्शन आरंभ हुए । यह ज्ञात नहीं है कि किसने ऐसी सूचना फैलाई और किस उद्देश्य से ऐसी सूचना फैलाई गई । तथापि, अभिकंथित कार्य स्वत: ऐसा कार्य नहीं था जिसकी जानकारी अथवा ज्ञान सिवाय उन व्यक्तियों को किसी को हो जो उस मकान के चारदीवारी के भीतर मौजूद थे । आश्चर्यजनक रूप से पुलिस दल ने भी यह पता लगाने के लिए दरवाजे से और दीवार से झांककर देखा था कि वहां क्या हो रहा है । यह कार्य पूर्ण रूप से गुप्त कार्य था । स्पष्टतया यह कहा जा सकता है कि यह कार्य अन्य व्यक्तियों की जानकारी में नहीं आया था । इस न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ ने सईद वाले मामले में यह मत व्यक्त किया था कि जहां कुछ व्यक्ति रात्रि में लोगों की नजर बचाकर अपने मकान में गुप्त रूप से किसी गाय का वध करते, संभवतया जीवन के लिए अथवा गोश्त का इस्तेमाल करने के लिए, पाए जाते हैं वहां ऐसा कार्य स्वत: लोक-व्यवस्था के भंग के बराबर नहीं हो सकता तथापि, जहां लोगों के मस्तिष्क में भय उत्पन्न करने की दृष्टि

से और साम्प्रदायिक शांति भंग करने की दृष्टि से लोक-दृष्टव्य स्थान पर वध-कार्य किया जाता है वहां ऐसा कार्य लोक-व्यवस्था के भंग के समान हो सकता है । वर्तमान मामले में किसी व्यक्ति के मकान के भीतर एकमात्र गाय का वध करना प्रतीत होता है । गोश्त सहित शरीर के अंग विक्रय के लिए बाहर नहीं ले जाए गए थे और स्पष्ट रूप से गोपनीयता बरती गई थी जिससे कार्य लोगों के सामने न आए । प्रदर्शन, यदि कोई हो, सूचना और अफवाहें फैलने के कारण होना प्रतीत होता है, न कि प्रदर्शन उक्त वध-कार्य का सीधा परिणाम है । प्राय: ऐसे प्रदर्शन परोक्ष प्रयोजनों के लिए निहित हित रखने वाले व्यक्तियों द्वारा किए जाते हैं और ऐसे कार्य स्वत: विधि और व्यवस्था के भंग को लोक-व्यवस्था के भंग के रूप में परिवर्तित नहीं करते । इन परिस्थितियों के अधीन न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि विद्वान् अपर सरकारी अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किया गया निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों से पूर्णतया भिन्न है । इसके बजाय न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि इस मामले के तथ्य किसी भी प्रकार से इस न्यायालय द्वारा सईद वाले मामले में अधिकथित विधि के अन्तर्गत आते हैं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी व्यक्ति के मकान के अंदर गो-वध सारवान् रूप से लोक-व्यवस्था का भंग नहीं है । अत: हमारा यह सुविचारित मत है कि निरोध के आधारों में निर्दिष्ट याची का एकमात्र कार्य सारवान् रूप से लोक-व्यवस्था के भंग के अन्तर्गत नहीं आता है और यह मात्र विधि और व्यवस्था के भंग का मामला है । अत: राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 के उपबंधों के अधीन याची का निरोध किए जाने की आवश्यकता नहीं है । ऊपर अभिलिखित कारणों से बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका मंजूर की जाती है । जिला मजिस्ट्रेट, बदायूं द्वारा तारीख 4 दिसंबर, 2018 को पारित निरोधादेश एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है । (पैरा 12, 13, 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] 2017 (5) ए. डी. जे. 316 = 2017 (2) आल सी. आर. 1979 :
रियाज उद्दीन बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ; 10, 14

[2007] 2007 (67) आल एल. आर. 4 =
2007 (1) ए. सी. आर. 481 :
सईद बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** । 9, 13, 15

आरंभिक (सिविल) प्रकीर्ण रिट अधिकारिता : 2019 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 324.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका ।

याची की ओर से — सर्वश्री आबिद सय्यद और कलीम उर रहमान

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री ए. एस. जी. आई., जी. ए., जितेन्द्र प्रसाद मिश्रा और दीपक मिश्रा

रिट याचिका में निर्णय न्यायमूर्ति मनोज मिश्रा और न्यायमूर्ति वीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव ने दिया ।

निर्णय

याची की ओर से डाक्टर आबिद सय्यद, प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से श्री जितेन्द्र प्रसाद मिश्रा और प्रत्यर्थी सं. 2 से 5 की ओर से विद्वान् अपर सरकारी अधिवक्ता को सुना गया ।

2. याची ने इस बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका द्वारा राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 (जिसे आगे संक्षेप में '1980 का अधिनियम' कहा गया है) के उपबंधों के अधीन अपने निरोध को प्रश्नगत किया है । निरोध का आदेश जिला मजिस्ट्रेट, बदायूं द्वारा 1980 के अधिनियम की धारा 3(3) के साथ पठित धारा 3(2) के अधीन अपनी शक्तियों के प्रयोग में तारीख 4 दिसंबर, 2018 को पारित किया गया है, जिसकी राज्य सरकार द्वारा 1980 के अधिनियम की धारा 3(4) के अधीन तारीख 22 जनवरी, 2019 को पारित आदेश द्वारा पुष्टि की गई है । आरंभ में निरोध का आदेश अनंतिम रूप से 3 मास की अवधि के लिए पारित किया गया था, जिसे तारीख 28 फरवरी, 2019 के आदेश द्वारा

तीन मास की अतिरिक्त अवधि के लिए विस्तारित किया गया और इसके पश्चात् इसे पुन: तारीख 29 मई, 2019 के आदेश द्वारा तीन मास की अवधि के लिए आगे विस्तारित किया गया और इस प्रकार आज की तारीख पर 4 दिसंबर, 2018 से 9 मास की अवधि के लिए सतत् रूप से जारी है ।

3. संक्षेप में मामले के सुसंगत तथ्यों का इस प्रकार उल्लेख किया जा सकता है कि जब याची जिला बदायूं के पुलिस थाना उसैत में रजिस्ट्रीकृत 2018 के अपराध मामला सं. 258 के संबंध में जिला जेल बदायूं में गो-वध (निवारण) अधिनियम की धारा 3/5/8 के अधीन निरुद्ध था तब उस पर जिला मजिस्ट्रेट, बदायूं द्वारा तारीख 4 दिसंबर, 2018 को निरोध के आधारों सहित आक्षेपित निरोध आदेश की तामील की गई थी ।

4. निरोध के आधारों में यह उल्लिखित किया गया है कि तारीख 8 सितंबर, 2018 को उप निरीक्षक श्री विक्रम सिंह और कांस्टेबल श्री नीरज कुमार तथा दिनेश कुमार को एक मुखबिर से यह सूचना मिली कि कस्बा उसैत में 4-5 व्यक्ति फईम कुरैशी पुत्र लईक के मकान में गाय काट रहे हैं और उसका गोश्त विक्रीत कर रहे हैं । यह सूचना प्राप्त होने पर पुलिस दल उक्त मकान पर पहुंचा और मकान के दरवाजे और दीवारों से झांककर देखा तो यह पाया कि मकान-मालिक फईम कुरैशी और तीन अन्य व्यक्ति पशु काटकर उसका गोश्त बेच रहे हैं । यह अभिकथित किया गया है कि उप निरीक्षक और उसके साथी पुलिस वालों ने अभियुक्तों को पकड़ने के लिए परिसर पर छापा मारा और तब अभियुक्त व्यक्तियों ने भागना आरंभ किया तथापि, उनमें से एक अर्थात् फ़य्याज़ कुरैशी (याची-निरुद्ध व्यक्ति) को पकड़ लिया गया । घटनास्थल पर दो थैले जिनमें लगभग 40-45 किलोग्राम गोश्त था, एक पशु खाल और जबड़े, खुर और शरीर के अन्य भाग काटने वाले उपकरणों के साथ बरामद हुए जिनसे यह उपदर्शित होता था कि गाय की जाति से संबंधित किसी पशु का वध किया गया है । बरामदगी के पश्चात् एक पशु चिकित्सक को बुलाया गया था जिसने इस बात की पुष्टि की कि बरामद किया गया गोश्त गाय या उसकी जाति का है । यह कहा गया है कि

गाय काटने और उसका गोश्त बरामद होने की सूचना क़स्बे में फैल गई जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू संगठन उत्तेजित हो गए और उन्होंने प्रदर्शन करना आरंभ कर दिया । यह कहा गया है कि उक्त संगठनों के आंदोलनों के कारण लोक-व्यवस्था भंग हो गई थी और दुकानें आदि बंद हो गई थीं । यह कहा गया है कि स्थिति पर नियंत्रण करने के लिए अतिरिक्त पुलिस बल भेजा गया था । तारीख 20 सितंबर, 2018 को घटना दैनिक समाचार-पत्र 'अमर उजाला' तथा 'दैनिक जागरण' और 'हिन्दुस्तान' में प्रकाशित हुई थी । जिला मजिस्ट्रेट ने उपर्युक्त तथ्यों का उल्लेख करने के पश्चात् यह अभिलिखित किया कि यद्यपि वर्तमान में याची जेल (कारागार) में है तथापि, वह जमानत के लिए आवेदन कर सकता है । यद्यपि सेशन न्यायालय ने उसका जमानत आवेदन खारिज कर दिया है तथापि, उच्च न्यायालय में जमानत के लिए आवेदन पेश किया गया है जो इस समय लंबित है और उसे जमानत पर छुड़ाने के लिए प्रयत्न किए जा रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू संगठनों से संबंधित लोग आंदोलन कर रहे हैं और यदि याची को जमानत पर छोड़ दिया गया तब इस बात की संभावना है कि वह पुन: ऐसा कार्य करेगा जिसके परिणामस्वरूप लोक-व्यवस्था भंग होगी । अत: उसे ऐसा करने से रोकने के लिए उसका निरोध आवश्यक समझा गया है ।

5. निरुद्ध व्यक्ति को निरोध प्राधिकारी अर्थात् राज्य सरकार और केन्द्र सरकार को अभ्यावेदन करने के लिए उसके अधिकार के संबंध में निरोध के अधिकारों के साथ सूचित किया गया था । उसे यह भी सलाह दी गई थी कि यदि वह निरोध प्राधिकारी के समक्ष अभ्यावेदन पेश करना चाहता है तो उसे ऐसा अभ्यावेदन निरोध आदेश पारित करने की तारीख से 12 दिन की अवधि के भीतर करना चाहिए क्योंकि यदि राज्य सरकार द्वारा निरोध आदेश का अनुमोदन किया जाता है तब निरोध प्राधिकारी को अभ्यावेदन को विनिश्चित करने का कोई अधिकार नहीं होगा ।

6. राज्य सरकार, केन्द्र सरकार और निरोध प्राधिकारी ने अपने-अपने जवाब फाइल किए हैं ।

7. याची के विद्वान् काउंसेल ने केवल इस आधार पर निरोध आदेश को प्रश्नगत किया है कि याची का अभिकथित कार्य केवल विधि और व्यवस्था के भंग में है न कि लोक-व्यवस्था के भंग में और इसलिए 1980 के अधिनियम की धारा 3 की उप-धारा (2) के अधीन निरोध किया जाना न्यायोचित नहीं है ।

8. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि निरोध के आधारों से यह स्पष्ट है कि वध का कार्य एक मकान के भीतर किया गया था ; और पशु के अंग या गोश्त किसी लोक स्थान पर विक्रय के लिए मकान से बाहर नहीं ले जाया गया था । यह दलील दी गई है कि अभिकथित प्रदर्शन, यदि कोई हो, अभिकथित कार्य के प्रत्येक परिणाम के रूप में नहीं था अपितु निहित स्वार्थ के लिए अफवाहें फैलाने के कारण हुआ था । अन्यथा ऐसी कोई हिंसा जिसके परिणामस्वरूप जनता के किसी सदस्य की मृत्यु कारित हुई हो या क्षति पहुंचाई गई हो, बताई या अभिकथित नहीं की गई थी । यह दलील दी गई है कि वध लोक दृश्य में नहीं किया गया था और निश्चित रूप से उससे हिन्दू समुदाय से संबंधित सदस्यों को कोई उत्तेजना नहीं हुई थी । पुलिस बल भी वध का साक्षी नहीं था । उन्होंने केवल शरीर के अंग और पड़ा हुआ गोश्त देखा था । क्या किसी मृत पशु को काटकर उसके टुकड़े किए गए थे अथवा किसी जीवित पशु का वध किया गया था, इस बारे में पुलिस ने कुछ नहीं देखा था । अत: यह नहीं कहा जा सकता कि याची के कार्य से हिन्दू समुदायों की भावनाओं और जज्बातों को किसी प्रकार की ठेस पहुंची थी । यह दलील दी गई है कि जहां वध का कोई कार्य किसी व्यक्ति के मकान के अंदर किया जाता है और ऐसा कार्य जनता ने नहीं देखा है और इस बारे में ऐसा कुछ नहीं है कि ऐसा कार्य अन्य समुदायों के सदस्यों को चुनौती देने के आशय से किया गया था तब ऐसा कार्य केवल विधि-व्यवस्था को प्रभावित करता है न कि लोक-व्यवस्था को गंभीर रूप से भंग करता है । यह भी दलील दी गई है कि यह एक ऐसा मामला नहीं है जहां गोश्त मकान के बाहर लोगों को वितरित किया गया हो/विक्रीत किया गया हो जिससे कि दूसरे समुदाय के व्यक्तियों की भावनाओं को ठेस पहुंची हो । अत: निष्कर्ष रूप में यह दलील दी गई है

कि यथा अभिकथित कार्य मात्र विधि और व्यवस्था के भंग में है और लोक-व्यवस्था पर किसी भी प्रकार से प्रभाव नहीं डालता है ।

9. याची के विद्वान् काउंसेल ने अपनी इस दलील के समर्थन में कि ऐसा कोई कार्य विधि और व्यवस्था के भंग के बराबर होता है न कि लोक-व्यवस्था के भंग के बराबर, इस न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ द्वारा **सईद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया है ।

10. इसके प्रतिकूल विद्वान् अपर सरकारी अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि किसी गाय के वध करने का कार्य किसी मकान के भीतर किए जाने वाले वध को ध्यान में लाए बिना अपने-आप में लोक-व्यवस्था को गंभीर रूप से प्रभावित करने वाला होता है । इसके अलावा इस बारे में रिपोर्टें हैं कि हिन्दू संगठनों ने प्रदर्शन किए हैं । अत: सुरक्षित रूप से यह अवधारित किया जा सकता है कि याची के कार्य द्वारा लोक-व्यवस्था का भंग हुआ था । अत: निरोध आदेश न्यायोचित है । उन्होंने इस संबंध में इस न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ द्वारा **रियाज उद्दीन** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया है ।

11. हमने पक्षकारों द्वारा दी गई परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार किया और अभिलेख का सतर्कतापूर्वक परिशीलन किया ।

12. अभिलेख के परिशीलन मात्र से हमें यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर यह उपदर्शित करने वाली कोई सामग्री नहीं है कि वध का कार्य मकान की चारदीवारी के बाहर किया गया था अथवा पशु के अंग, गोश्त इत्यादि लोगों को विक्रीत करने के लिए मकान के बाहर लाए गए थे । इस बारे में कोई अभिकथन नहीं किया गया है कि लोग अभियुक्त के मकान में एकत्रित हो गए थे और उनकी उपस्थिति में अथवा उनकी जानकारी में वध किया गया था । यह उपदर्शित करने वाली भी कोई सामग्री नहीं है कि उस ग्राम या स्थान पर कोई साम्प्रदायिक हिंसा हुई

---

[1] 2007 (67) आल एल. आर. 4 = 2007 (1) ए. सी. आर. 481.

[2] 2017 (5) ए. डी. जे. 316 = 2017 (2) आल सी. आर. 1979.

थी जिसके परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति को क्षति पहुंची थी । हमें यह प्रतीत होता है कि जब वध की सूचना फैल गई तब प्रदर्शन आरंभ हुए । यह ज्ञात नहीं है कि किसने ऐसी सूचना फैलाई और किस उद्देश्य से ऐसी सूचना फैलाई गई । तथापि, अभिकथित कार्य स्वत: ऐसा कार्य नहीं था जिसकी जानकारी अथवा ज्ञान सिवाय उन व्यक्तियों को किसी को हो जो उस मकान के चारदीवारी के भीतर मौजूद थे । आश्चर्यजनक रूप से पुलिस दल ने भी यह पता लगाने के लिए दरवाजे से और दीवार से झांककर देखा था कि वहां क्या हो रहा है । यह कार्य पूर्ण रूप से गुप्त कार्य था । स्पष्टतया यह कहा जा सकता है कि यह कार्य अन्य व्यक्तियों की जानकारी में नहीं आया था ।

13. इस न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ ने **सईद** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह मत व्यक्त किया था कि जहां कुछ व्यक्ति रात्रि में लोगों की नजर बचाकर अपने मकान में गुप्त रूप से किसी गाय का वध करते, संभवतया जीवन के लिए अथवा गोश्त का इस्तेमाल करने के लिए, पाए जाते हैं वहां ऐसा कार्य स्वत: लोक-व्यवस्था के भंग के बराबर नहीं हो सकता तथापि, जहां लोगों के मस्तिष्क में भय उत्पन्न करने की दृष्टि से और साम्प्रदायिक शांति भंग करने की दृष्टि से लोक-दृष्टव्य स्थान पर वध-कार्य किया जाता है वहां ऐसा कार्य लोक-व्यवस्था के भंग के समान हो सकता है ।

14. विद्वान् अपर सरकारी अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किए गए **रियाज उद्दीन** (पूर्वोक्त) वाले मामले के निर्णय के पैरा 20 के परिशीलन मात्र से यह प्रतीत होता है कि वध का कार्य लोक-दृष्टव्य स्थान पर किया गया था और गोश्त निपटाने के प्रयोजन के लिए यानों में ले जाया जा रहा था । निर्णय के पैरा 27 से यह भी स्पष्ट होता है कि अनेक गायों का वध किया गया था और उनके शरीर के अंग लोक-दृष्टव्य स्थान पर खुले में सभी जगह फेंक दिए गए थे । अत: न्यायालय ने सभी पहलुओं पर विचार करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकालते हुए कि यह एक लोक-व्यवस्था के भंग का मामला है, निरोधादेश की पुष्टि की थी ।

15. वर्तमान मामले में किसी व्यक्ति के मकान के भीतर एकमात्र गाय का वध करना प्रतीत होता है । गोश्त सहित शरीर के अंग विक्रय के लिए बाहर नहीं ले जाए गए थे और स्पष्ट रूप से गोपनीयता बरती गई थी जिससे कार्य लोगों के सामने न आए । प्रदर्शन, यदि कोई हो, सूचना और अफवाहें फैलने के कारण होना प्रतीत होता है, न कि प्रदर्शन उक्त वध-कार्य का सीधा परिणाम है । प्राय: ऐसे प्रदर्शन परोक्ष प्रयोजनों के लिए निहित हित रखने वाले व्यक्तियों द्वारा किए जाते हैं और ऐसे कार्य स्वत: विधि और व्यवस्था के भंग को लोक-व्यवस्था के भंग के रूप में परिवर्तित नहीं करते । इन परिस्थितियों के अधीन हमें यह प्रतीत होता है कि विद्वान् अपर सरकारी अधिवक्ता द्वारा उद्धृत किया गया निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों से पूर्णतया भिन्न है । इसके बजाय हमारा यह सुविचारित मत है कि इस मामले के तथ्य किसी भी प्रकार से इस न्यायालय द्वारा **सईद** (पूर्वोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि के अन्तर्गत आते हैं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी व्यक्ति के मकान के अंदर गो-वध सारवान् रूप से लोक-व्यवस्था का भंग नहीं है । अत: हमारा यह सुविचारित मत है कि निरोध के आधारों में निर्दिष्ट याची का एकमात्र कार्य सारवान् रूप से लोक-व्यवस्था के भंग के अन्तर्गत नहीं आता है और यह मात्र विधि और व्यवस्था के भंग का मामला है । अत: राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 के उपबंधों के अधीन याची का निरोध किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

16. ऊपर अभिलिखित कारणों से बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका मंजूर की जाती है । जिला मजिस्ट्रेट, बदायूं द्वारा तारीख 4 दिसंबर, 2018 को पारित निरोधादेश एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है । याची को जब तक कि वह किसी अन्य मामले में वांछित न हो, तुरन्त रिहा किया जाए ।

याचिका मंजूर की गई ।

मह.

(2019) 2 सि. नि. प. 605 उत्तराखंड

अशरफ अहमद

बनाम

ए. एस. भरतरी और अन्य

(2013 की सिविल अपील सं. 344)

तारीख़ 31 जुलाई, 2018

न्यायमूर्ति मनोज तिवारी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 104 – आदेश 39, नियम 2(क) के अंतर्गत न्यायालय द्वारा पारित दांडिक आदेश के विरुद्ध अपील – ये कार्यवाहियां अर्धदांडिक प्रकृति की हैं इसलिए न्यायालय को किसी को अपने आदेश के अतिक्रमण का दोषी ठहराए जाने के लिए उच्चतर कोटि के सबूत की आवश्यकता होगी – न्यायालय द्वारा अकस्मात् यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि अस्थायी निषेधाज्ञा आदेश की पूर्ण जानकारी होने के बावजूद आदेश का अतिक्रमण किया गया – न्यायालय द्वारा युक्तिसंगत रूप से विचार किया जाना अपेक्षित है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि यह अपील विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 2(क) सपठित धारा 151 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए पारित किए गए तारीख 3 अगस्त, 2013 के आदेश, जिसके द्वारा प्रतिवादी सं. 1 से 3 को वादग्रस्त संपत्ति पर उनके द्वारा किए गए अवैध अतिक्रमण को एक माह के भीतर हटाने के लिए निर्देशित किया गया था और ऐसा करने में विफल रहने पर वे सिविल कारागार में 15 दिनों के लिए निरोध में रखे जाने के दायी थे, के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 43, नियम 1(त) सपठित धारा 104 के अधीन फाइल की गई है । अपील को आंशिक रूप से मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में यह

निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादी सं. 2 अस्थायी व्यादेश के आदेश के अतिक्रमण का दोषी है । तथापि, उक्त निष्कर्ष बिना किसी युक्तियुक्तता के है और ऐसी किसी भी सामग्री के बारे में कोई चर्चा नहीं की गई है जिसके आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा । चूंकि किसी व्यक्ति को अननुपालन या व्यादेश का भंग कारित किए जाने के बाबत दंडित किए जाने के लिए उच्चतर कोटि का सबूत अपेक्षित है, इसलिए प्रतिवादी सं. 2 को साक्ष्य की प्रचुरता के आधार पर दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता । इस बाबत कोई चर्चा नहीं की गई है कि विद्वान् विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर कैसे पहुंचा कि अपीलार्थी ने अस्थायी व्यादेश का आदेश पारित किए जाने के पश्चात् निर्माण कराया है । तारीख 3 अगस्त, 2013 के आदेश, जिसको इस अपील में आक्षेपित किया गया है के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने वादग्रस्त संपत्ति पर निर्माण कराये जाने के द्वारा अस्थायी व्यादेश के आदेश का अतिक्रमण किया है । चूंकि ये कार्यवाहियां अर्ध-दांडिक प्रकृति की हैं इसलिए किसी को न्यायालय के आदेश के अतिक्रमण का दोषी ठहराए जाने के लिए उच्चतर कोटि के सबूत की आवश्यकता होगी । आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रकट होता है कि विचारण न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने के प्रयोजनार्थ कि प्रतिवादी सं. 2 ने तारीख 20 दिसंबर, 2011 के पश्चात् निर्माण कराया था, किसी भी विश्वसनीय साक्ष्य पर न तो विचार किया गया है और न ही उस पर चर्चा की गई । आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह भी दर्शित होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अकस्मात यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी ने अस्थायी निषेधाज्ञा आदेश के बाबत पूर्ण जानकारी होने के बावजूद इस आदेश का अतिक्रमण किया है "और इस निष्कर्ष के समर्थन में कोई तर्क भी नहीं प्रस्तुत किया गया है" । मामले को इस दृष्टि से देखते हुए चूंकि मामले के इस अत्यधिक महत्वपूर्ण पहलू पर आक्षेपित आदेश में युक्तिसंगत रूप से विचार नहीं किया गया है, इसलिए तारीख 3 अगस्त, 2013 का आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में मान्य नहीं ठहराया जा सकता और तद्नुसार वह अपास्त किया जाता है । आक्षेपित आदेश से उद्भूत वर्तमान अपील मंजूर

की जाती है और मामले को वादी के सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 2(क) सपठित धारा 151 के अधीन आवेदन को विधि अनुसार पुन: निर्णीत किए जाने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेक्षित किया जाता है । (पैरा 22, 23, 24 और 25)

विनिर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	2009 (3) ए. आर. सी. 625 : **इशरावती** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	16
[2002]	(2002) 1 ए. आर. सी. 450 = ए. आई. आर. 2002 इलाहाबाद 198 : **सत्य प्रकाश और एक अन्य** बनाम **प्रथम अपर जिला न्यायाधीश, ऐटा और अन्य** ।	17

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2013 की सिविल अपील सं. 344.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43 नियम 1 व 2 के अन्तर्गत अपील ।

याची की ओर से सर्वश्री अरविन्द वशिष्ट (वरिष्ठ अधिवक्ता), विवेक पाठक और जे. एस. बिशष्ट

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री सिद्धार्थ सिंह

निर्णय

प्रत्यावर्तन आवेदन फाइल किए जाने में 249 दिनों का विलंब कारित किया गया । प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने विलंब क्षमा किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन का विरोध नहीं किया । विलंब क्षमा किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन में दर्शित कारण पर्याप्त है, इसलिए यह आवेदन मंजूर किया जाता है और प्रत्यावर्तन आवेदन फाइल किए जाने में कारित विलंब को क्षमा किया जाता है ।

2. प्रत्यावर्तन आवेदन को उसमें अभिकथित कारणोंवश मंजूर किया

जाता है और अपील को उसकी मूल संख्या पर पुन: प्रत्यावर्तित किया जाता है । अपील को पक्षों की सहमति से सुना गया और ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर ही निर्णीत किया गया ।

3. यह अपील विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 2(क) सपठित धारा 151 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए पारित किए गए आदेश, जिसके द्वारा प्रतिवादी सं. 2 (जो इस अपील में अपीलार्थी है) को वादग्रस्त संपत्ति पर उसके द्वारा किए गए अवैध अतिक्रमण को एक माह के भीतर हटाने के लिए निर्देशित किया गया था और ऐसा करने में विफल रहने पर वह सिविल कारागार में 15 दिनों के लिए निरोध में रखे जाने का दायी था, के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 43, नियम 1(त) सपठित धारा 104 के अधीन फाइल की गई है ।

4. हमको यह ज्ञात हुआ है कि प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी है) एक दुकान का किराएदार था, जो देहरादून के गांधी मार्ग पर स्थित एक पुराने भवन का भाग थी । उस भवन में 9 दुकाने थीं, जो विभिन्न किराएदारों की अधिभोग में थी । देहरादून नगर निगम ने 1959 के नगर महापालिका अधिनियम की धारा 308 के अधीन प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए तारीख 22 नवंबर, 2011 को एक आदेश पारित किया जिसके द्वारा उक्त भवन के स्वामी को इस आधार पर भवन को तुरंत ढहाने के लिए निर्देशित किया गया कि यह भवन मार्ग पर चलने वाले राहगीरों के लिए खतरा उत्पन्न कर रहा है । उक्त आदेश के मतावलंबन में उक्त भवन को तारीख 9 दिसंबर, 2011 को एक संयुक्त दल, जिसमें लोक कार्य विभाग, नगर निगम और मसूरी देहरादून विकास प्राधिकरण के अधिकारी समाविष्ट थे, द्वारा ढहा दिया गया ।

5. प्रतिवादी सं. 2 (जो इस अपील में अपीलार्थी है) ने तारीख 9 दिसंबर, 2011 को ही 1959 के नगर महापालिका अधिनियम के अंतर्गत अपील फाइल की जिसको देहरादून के सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ वर्ग) के न्यायालय में 2011 की नगर महापालिका अपील सं. 16 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया और उसी दिन अर्थात् तारीख 9 दिसंबर, 2011

को उक्त अपील में एक अंतरिम आदेश पारित किया गया जिनके द्वारा नगर निगम द्वारा पारित भवन को ढहाए जाने के आदेश को स्थगित कर दिया गया था ।

6. वादी (जो इस अपील में प्रत्यर्थी है) की दलील यह है कि नगर निगम द्वारा पारित ढहाए जाने के आदेश को 2011 की नगर महापालिका अपील सं. 16 में स्थगनादेश पारित किए जाने के पहले ही निष्पादित कर दिया गया था जबकि प्रतिवादी सं. 2 (जो इस अपील में अपीलार्थी है) की दलील यह है कि इस दुकान के केवल एक भाग को ही ढहाया गया था । अत: इस बाबत कोई विवाद नहीं है कि ढहाए जाने की कार्यवाही की जा चुकी थी, इसके पहले कि अपीलार्थी 2011 की नगर महापालिका अपील सं. 16 में संबद्ध न्यायालय से स्थगनादेश अभिप्राप्त कर सकता ।

7. तत्पश्चात् तारीख 20 दिसंबर, 2011 को भवन के स्वामी (जो इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1) ने किराएदारों के विरुद्ध उनको उसके कब्जे में मध्यक्षेप करने और उनको वादग्रस्त संपत्ति, जो उसके अनुसार भवन के ढहाए जाने के पश्चात् खुली भूमि थी, में अतिक्रमण करने से अवरुद्ध करने के लिए शाश्वत प्रतिषेधात्मक व्यादेश के अनुतोष की ईप्सा करते हुए वाद फाइल किया । उक्त वाद को 2011 के मूल वाद सं. 542 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया और तारीख 20 दिसंबर, 2011 को ही देहरादून के विद्वान् विचारण न्यायालय अर्थात् सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ वर्ग) ने प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में अस्थायी व्यादेश का आदेश प्रदान कर दिया । अस्थायी व्यादेश के इस आदेश का अंग्रेजी अनुवाद निम्नलिखित है :-

> "Defendant Nos. 1 to 12 are restrained from illegally interfairing with and encroaching opon the suit property till the next date fixed in the suit."

8. प्रतिवादी सं. 2 (जो इस अपील में अपीलार्थी है) तारीख 23 दिसंबर, 2011 को अपने खंडन दावे के साथ अपना लिखित कथन फाइल किया । अपीलार्थी ने खंडन दावे में प्रतिवादी को उसकी किराएदारी

वाली संपत्ति में उसके कब्जे में मध्यक्षेप करने से अवरुद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ वादी के विरुद्ध शाश्वत व्यादेश के अनुतोष की ईप्सा की और आगे यह ईप्सा भी की कि वह उसके द्वारा कराए जा रहे मरम्मत कार्य में मध्यक्षेप न करे । उसके द्वारा एक अन्य अनुतोष जिसकी ईप्सा उसके द्वारा की गई थी, यह था कि उसको विधि की प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना प्रश्नगत दुकान से बेदखल न किया जाए । प्रतिवादी सं. 2 (जो इस अपील में अपीलार्थी है) ने अपने लिखित कथन के पैरा 37 में स्वीकार किया कि उसकी किराएदारी के अंतर्गत आने वाली दुकान के एक भाग को ढहा दिया गया है जिस कारणवश दुकान का आकार घट गया है ।

9. वादी (जो इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 है) ने तारीख 12 जनवरी, 2012 को सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 2(क) सपठित धारा 151 के अधीन एक आवेदन यह अभिकथन करते हुए प्रस्तुत किया कि 2011 के मूल वाद सं. 542 में विचारण न्यायालय द्वारा पारित किया गया तारीख 20 दिसंबर, 2011 का अस्थायी व्यादेश आदेश का प्रतिवादी सं. 2 द्वारा अननुपालन किया गया है चूंकि उसने दिसंबर माह के माह में, जब सिविल न्यायालय शीतकालीन अवकाश के कारण बंद थे, वादग्रस्त संपत्ति पर निर्माण कार्य किया है । उक्त आवेदन के पैरा 8 में यह अभिकथित किया गया कि वादी को तारीख 4 जनवरी, 2012 को देहरादून से वापस लौटने पर ज्ञात हुआ कि उक्त भूमि पर अस्थायी व्यादेश के आदेश का अतिक्रमण करते हुए दो दीवारों का निर्माण किया गया है ।

10. प्रतिवादी सं. 2 ने वादी के उक्त आवेदन के विरुद्ध आक्षेप फाइल किए । प्रतिवादी सं. 2 ने अपने आक्षेप के पैरा 8 में अभिकथित किया कि उसने न तो कोई निर्माण कार्य किया है और न ही वादग्रस्त संपत्ति पर अतिक्रमण करने का प्रयास कर रहा है । अपीलार्थी ने आक्षेप के पैरा 35 में अभिकथित किया कि नगर निगम द्वारा पारित ढहाए जाने वाले आदेश को अपील न्यायालय द्वारा तारीख 9 दिसंबर, 2011 को स्थगित कर दिया गया था और उसने आगे यह भी अभिकथन किया

कि दुकान का एक भाग जिसको स्थगनादेश प्रदान किए जाने के पश्चात् नुकसान पहुंचाया गया था, की मरम्मत तारीख 20 दिसंबर, 2011 अर्थात् वह तारीख जिसको भवन के स्वामी द्वारा 2011 का मूल वाद सं. 542 फाइल किया गया था, के पूर्व कर दी गई थी ।

11. विद्वान् विचारण न्यायालय ने स्थल पर अभिभावी सही स्थिति को अभिनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 26, नियम 9 के अधीन एक आयुक्त को भेजा । न्यायालय के अमीन (न्यायालय द्वारा भेजा गया आयुक्त) ने तारीख 26 सितंबर, 2012 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो अस्थगन आवेदन के समर्थन में फाइल किए गए शपथपत्र के साथ संलग्नक 11 के रूप में संलग्न है । इस रिपोर्ट में यह अभिकथित किया गया है कि स्थल पर प्रथमदृष्ट्या आधी ढहाई गई दीवारें, मलबा और बिना छत की कुछ नवनिर्मित दीवारें और दो दुकाने (एक पक्की छत के साथ और दूसरी टिन की छत के साथ) मौजूद हैं और एक अन्य स्थान पर कुछ छोटे दुकानदार प्लास्टिक की सीटों वाली छत/तिरपाल के नीचे अपना कारबार चला रहे हैं । न्यायालय के अमीन द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट में एक स्थल मानचित्र को भी दर्शित किया गया था और स्थल मानचित्र के नीचे यह अभिकथित किया गया था कि स्थल पर केवल दो दुकाने हैं जिनके ऊपर छत है, एक दुकान प्रतिवादी सं. 2 के कब्जे में है और दूसरी हरिशचंद्र के कब्जे में है ।

12. विद्वान् विचारण न्यायालय ने वादी के आवेदन और प्रतिवादी सं. 2 द्वारा प्रस्तुत किए गए आक्षेपों को सम्मिलित करते हुए समस्त सुसंगत पहलुओं पर विचारोपरांत यह निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादी सं. 2 ने तारीख 20 दिसंबर, 2011 के पश्चात् निर्माण कार्य किया था और इस प्रकार उसने न्यायालय के आदेश का अतिक्रमण किया । तद्नुसार विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 3 अगस्त, 2013 को आदेश पारित किया जिसके द्वारा प्रतिवादी सं. 1 से 4 को उनके द्वारा किए गए अतिक्रमण को आदेश पारित किए जाने की तारीख से एक माह के भीतर हटाने के लिए निर्देशित किया गया जिसमें विफल रहने पर वे

सिविल कारागार में 15 दिनों के निरोध के दायी होंगे । इस आदेश को प्रतिवादी सं. 2 द्वारा इस अपील में चुनौती दी गई है ।

13. प्रतिवादी सं. 2 (जो इस अपील में अपीलार्थी) की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि प्रतिवादी सं. 2 ने खंडन दावा फाइल किया है और खंडन दावा फाइल किए जाने का प्रयोजन विफल हो जाएगा यदि आक्षेपित आदेश का निष्पादन हो जाता है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश अपीलार्थी के विरुद्ध किसी अन्य विश्वनीय साक्ष्य की अनुपस्थिति में मात्र समाचारपत्र में प्रकाशित रिपोर्ट और फोटोग्राफ के आधार पर पारित किया गया है । उन्होंने यह निवेदन भी किया कि आदेश 39, नियम 2(क) के अधीन कार्यवाहियां अवमान कार्यवाहियों की प्रकृति में होती हैं, अन्य शब्दों में वे अर्द्ध दांडिक प्रकृति की होती हैं अत: उनके लिए भी उसी कोटि के सबूत की आवश्यकता होती है जैसेकि किसी दांडिक विचारण में होती है ।

14. इसके विपरीत वादी (जो इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1) के विद्वान् काउंसेल श्री सिद्धार्थ सिंह ने निवेदन किया कि सभी किराएदार वाद में प्रतिवादी थे और प्रतिवादी सं. 6, 10 और 11 ने अपने लिखित कथन में अभिकथित किया है कि संपूर्ण भवन को ढहा दिया गया था और तत्पश्चात् प्रश्नगत भवन के किसी भी भाग में कोई भी पक्ष कब्जे में नहीं था । उन्होंने आगे निवेदन किया कि देहरादून के नगर निगम ने प्रतिवादी सं. 2 द्वारा किए गए निमार्ण के संबंध में तारीख 20 दिसंबर, 2011 को एम.डी.डी.ए. के समक्ष शिकायत की थी । उन्होंने आगे निवेदन कया कि इस बात को साबित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध है कि अपीलार्थी द्वारा अस्थायी निषेधाज्ञा आदेश का अतिक्रमण किया गया था ।

15. पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया ।

16. प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने अपनी इस दलील के समर्थन में **इशरावती** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1]

---

[1] 2009 (3) ए. आर. सी. 625.

वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन न्यायालय को अंतर्निहित शक्तियां प्राप्त हैं जो अत्यधिक व्यापक है और किसी परिसीमा से अध्यधीन नहीं है और जिनको किसी त्रुटि को दुरुस्त किए जाने और इस बात की अनुज्ञा न दिए जाने के प्रयोजनार्थ प्रयोग किया जा सकता है कि वह त्रुटि शाश्वत काल तक घटित न होती रहे । उक्त निर्णय का पैराग्राफ 7 से 14 को नीचे उद्धृत किया गया है :–

"7. सिविल प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत कब्जे के प्रत्यावर्तन के स्वरूप में व्यादेश का आदेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ धारा 151 की शक्ति अनिर्णीत विषय नहीं है ।

8. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन अंतर्निहित शक्तियां व्यापक हैं और किसी परिसीमा के अध्यधीन नहीं हैं । जहां किसी पक्ष के विरुद्ध स्थगनादेश या व्यादेश के अतिक्रमण की स्थिति में कोई ऐसा कार्य किया गया है जो कि अवमानना में है, तो नीति के रूप में न्यायालय का यह कर्तव्य होगा कि वह उस गलती को दुरुस्त करे और की गई गलती को शाश्वत रूप से जारी रखे जाने की अनुज्ञा प्रदान न करे ।

9. अंतर्निहित शक्ति केवल ऐसे ही मामलों में उपलब्ध नहीं होंगी बल्कि वे इसी तरीके से न्यायहित में लागू की जाती रहेंगी ।

10. यहां तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अलावा भी हम यह मताभिव्यक्ति करते हैं कि न्यायालय को न्यायिक नीति के मामले में इस प्रकार की परिस्थितियों में स्वयं के किए कराए पर पानी फेरने से यह अभिनिर्धारित करते हुए बचना चाहिए कि वह न्यायालय के आदेश के अननुपालन में की गई किसी अशुद्धि को शुद्ध करने के लिए शक्तिहीन नहीं है । किंतु ऐसे मामलों में यह आवश्यक नहीं है कि उस सीमा तक आदेश पारित किया जाए जैसाकि हमने अभिनिर्धारित किया है कि यह शक्ति सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन उपलब्ध है ।

11. मीरा चौहान **बनाम** हर्ष विश्नोई और एक अन्य [2007 (1) ए. आर. सी. 336 = जे. टी. 2007(1) एस. सी. 458] वाले मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया –

"15. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के मात्र परिशीलन पर यह नहीं कहा जा सकता कि इस बाबत कोई विवाद है कि धारा 151 न्यायालय को ऐसे आदेश पारित करने के लिए, जो न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए या न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए आवश्यक हों, व्यापक शक्तियां प्रदान करती है ।

16. .....

17. मनोहर लाल चोपड़ा **बनाम** राय बहादुर राव राजा सेठ हीरा लाल (ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 527) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त किए जाने के प्रयोजनार्थ आदेश पारित करने की न्यायालय की शक्तियों या न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोके जाने पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि न्यायालयों को उन परिस्थितियों में जो सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39 के उपबंधों के अधीन आच्छादित नहीं है, व्यादेश का अस्थायी आदेश पारित करने की अंतर्निहित अधिकारिता प्राप्त होती है ।

18. तत्समय, यह भी सुस्थापित हो चुका है कि जब पक्ष व्यादेश के आदेश या स्थगनादेश का अतिक्रमण करते हैं या उक्त आदेश के अतिक्रमण में कोई कार्य करते हैं, तो न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्तियों को प्रयोग करते हुए उसी स्थिति में वापस पहुंचा सकता है जिस स्थिति में वे व्यादेश का आदेश जारी किए जाने के पहले थे या पुलिस प्राधिकारी को वाद में पारित आदेश के सम्यक् और उचित क्रियान्वयन कराए जाने के लिए व्यथित पक्षों को सहायता प्रदान किए जाने के लिए निर्देशित कर सकता है समुचित आदेश दे सकता

है और साथ ही उक्त आदेश के क्रियान्वयन के लिए भी पुलिस संरक्षण का आदेश पारित कर सकता है ।

19. यह भी सुस्थापित हो चुका है कि न्यायालय व्यादेश के आदेश के जानबूझकर अतिक्रमण की स्थिति में उस पक्ष, जो अन्य पक्ष को बलपूर्वक बेदखल करता है, को कब्जे को प्रत्यावर्तित किए जाने के लिए आदेश पारित कर सकता है ।"

12. पुन: मनोहर **बनाम** हीरालाल (ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 527) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया –

"न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त किए जाने के प्रयोजनार्थ आदेश पारित करने या न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोके जाने के प्रयोजनार्थ न्यायालय की शक्ति पर विचार करते हुए, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151, जो न्यायालय को ऐसे आदेश, जो न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त किए जाने या न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोके जाने के प्रयोजनार्थ आवश्यक हों, पारित करने की व्यापक शक्ति प्रदान करती है, के अधीन आदेश पारित करने की अंतर्निहित शक्ति प्राप्त है ।"

13. पुन: रामचंद्र एंड सन्स शुगर मिल्स प्रा. लि. **बनाम** कन्हैया लाल भार्गव (ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1899) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया –

"किसी न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति उस न्यायालय को संहिता के अंतर्गत अभिव्यक्त रूप से प्रदत्त शक्तियों के अतिरिक्त होती है और उनकी पूरक होती हैं । किंतु उन शक्तियों का प्रयोग तब तक नहीं किया जाएगा जब तक कि उनका प्रयोग अभिव्यक्त रूप से या संहिता के अन्य उपबंधों द्वारा आवश्यक विवशा द्वारा प्रदान की गई शक्तियों के असंगत न हो या उनके टकराव में न हों । यदि ऐसे

अभिव्यक्त उपबंध मौजूद हैं, जो किसी विशिष्ट शीर्षक को व्यापक रूप से आच्छादित करते हैं, तो वे इस आवश्यक विवशा को जन्म देते हैं कि उक्त शीर्षक के संबंध में किसी भी शक्ति का प्रयोग उक्त उपबंधों द्वारा विहित रीति के अलावा नहीं किया जाएगा । संहिता की धारा 151 के उपबंधों के अर्थान्वयन द्वारा जो भी परिसीमाएं अधिरोपित की गई हैं, वे न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोके जाने के लिए उपयुक्त आदेश पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ संहिता की धारा 151 के अधीन प्रदत्त न्यायालय की असंदिग्ध शक्तियों को नियंत्रित नहीं करतीं ।"

14. जैसेकि चर्चा ऊपर की गई है, न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अधीन किसी भी पक्ष द्वारा न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोके जाने के प्रयोजनार्थ अंतर्निहित शक्ति प्राप्त है । इन परिस्थितियों में यदि याची ने पहले ही धारा 151 के अधीन कोई आवेदन फाइल कर दिया है और वह लंबित है और मामला न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है, तो हम मामले में मध्यक्षेप करने के लिए आनत नहीं है ।"

17. प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने **सत्य प्रकाश और एक अन्य** बनाम **प्रथम अपर जिला न्यायाधीश, ऐटा और अन्य**[1] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए एक अन्य निर्णय का भी अवलंब लिया । इस निर्णय का पैरा 31 नीचे उद्धृत किया गया है :-

"31. अभिनिर्धारण के लिए द्वितीय बिंदु की उपयोज्यता पर विचार करते हुए, जिसको वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्रतिपादित किया गया है, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह स्पष्ट है कि परस्पर विरोधी प्रत्यर्थी विधि के नियम के लिए सम्मान की कोई भावना नहीं

---

[1] (2002) 1 ए. आर. सी. 450 = ए. आई. आर. 2002 इलाहाबाद 198.

रखते । परस्पर विरोधी प्रत्यर्थियों ने अधिवक्ता आयुक्त द्वारा अंतरिम निषेधाज्ञा की पूर्ण जानकारी प्रदान किए जाने के बाद भी विवादित दीवारों को ढहा दिया और उन्होंने नए दरवाजे और खिड़कियां निर्मित कर लिए । वर्तमान मामले में निर्विवाद रूप से तारीख 26 अगस्त, 2000 को अंतिम बहस सुनी गई थी और यह अनुमान लगाया जा सकता है कि तारीख 2 सितंबर, 2000 निर्णय उद्घोषित किए जाने के लिए निर्धारित की गई थी, किंतु लिप्तलेखन (ओवर राइटिंग) द्वारा निर्णय उद्घोषित किए जाने की तारीख को परिवर्तित कर दिया गया जो आदेश-पत्र, जो याचिका का संलग्नक 11 है, की प्रति की सत्यापित फोटोकापी के परिशीलन से स्पष्ट है और जिसको निर्विवाद रूप से यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा तैयार किया गया है । न्यायिक संयम मुझे इस बात को और अधिक विस्तृत करने की अनुज्ञा प्रदान नहीं करता, सिवाय यह मताभिव्यक्ति करने के कि हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में तारीख 26 अगस्त, 2000 के आदेश-पत्र को तैयार किए जाने के लिए अपनाए गए सामान्य स्तरमान में विपथन था, जो लोक विश्वास के सरण की ओर संकेत करता है । कुछ भी हो, परस्पर विरोधी प्रत्यर्थियों को अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती कि वे विवादित दीवार को गिराए जाने और दरवाजे और खिड़कियां खोले जाने और जल्दबाजी में और गुपचुप तरीके से याचियों की तरफ एक नया रास्ता खोले जाने में उनके द्वारा अपनाई गई मनमानी का लाभ प्राप्त कर सकें । मेरा विचार है कि यदि परस्पर विरोधी प्रत्यर्थियों को उनके द्वारा किए गए गलत कार्यों का लाभ दिया गया, तो यह न्याय और निष्पक्षता पर आघात होगा । मामले के इन तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि न्यायहित में यह उचित और निष्पक्ष होगा कि परस्पर विरोधी प्रत्यर्थियों को लंबित मुकदमे के दौरान किए गए निर्माण को ढहाए जाने के द्वारा याचियों के विरुद्ध किए गए गलत कार्यों का परिमार्जन किए जाने के लिए निर्देशित किया जाए और दोनों ही

पक्ष मुकदमे के लंबन के दौरान तारीख 18 फरवरी, 1999 को विचारण न्यायालय द्वारा पारित किए गए अस्थायी निषोधाज्ञा के आदेश की तारीख पर यथास्थिति बनाए रखे जाने के लिए निर्देशित किए जाने योग्य हैं । प्रथम समुच्चय के प्रतिवादी जिसको वर्तमान याचिका में प्रत्यर्थी सं. 3 के रूप में संख्यांकित किया गया है, को तारीख 18 फरवरी, 1999 को विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए अस्थायी निषेधाज्ञा के आदेश का मखौल बनाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती । इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में रिट याचिका के संलग्नक 9 पर ऊपर चर्चा की जा चुकी है ।"

18. आदेश 39, नियम 2(क) के अधीन प्रदत्त शक्तियों को अवलंब लेने के लिए निम्नलिखित तीन शर्तों को पूरा किया जाना आवश्यक है अर्थात् :- (i) व्यादेश का आदेश अस्तित्व में होना चाहिए । (ii) दूसरे पक्ष को व्यादेश के आदेश के बारे में जानकारी होनी चाहिए और (iii) उक्त व्यादेश के आदेश का अतिक्रमण या अननुपालन होना चाहिए ।

19. वर्तमान मामले में इस बाबत कोई विवाद नहीं है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 20 दिसंबर, 2011 के मूल वाद संख्या 542 में प्रतिवादी सं. 1 से 12 के विरुद्ध व्यादेश प्रदान किया था । चूंकि प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी है) ने उक्त वाद में तारीख 23 दिसंबर, 2011 को लिखित कथन के साथ खंडन दावा फाइल कर दिया था, इसलिए वह यह दलील नहीं दे सकता कि उसको व्यादेश के आदेश के बारे में कोई जानकारी नहीं थी और यदि उसको व्यादेश के आदेश की जानकारी तारीख 20 दिसंबर, 2011 को नहीं हुई थी तो भी तारीख 23 दिसंबर, 2011 को हो गई थी ।

20. चूंकि वादी (जो इस मामले में प्रत्यर्थी है) द्वारा किया गया अभिकथन यह है कि प्रतिवादी सं. 2 ने तारीख 20 दिसंबर, 2011 को प्रदान किए गए अस्थायी व्यादेश के आदेश का अतिक्रमण करते हुए निर्माण कार्य किया था, इसलिए निम्नलिखित दोनों पहलुओं के बारे में जांच आवश्यक हो जाती है अर्थात् (क) क्या प्रतिवादी सं. 2 ने वादग्रस्त संपत्ति पर कोई निर्माण किया था (ख) यदि हां, तो क्या वह निर्माण

अस्थायी व्यादेश के आदेश की पूर्ण जानकारी के बावजूद उसके अतिक्रमण में किया गया था ।

21. प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी है) की दलील यह है कि उसने अस्थायी व्यादेश का आदेश पारित किए जाने के पूर्व दुकान की मरम्मत कराई थी जबकि वादी ने अभिकथन किया है कि प्रतिवादी सं. 2 ने अस्थायी व्यादेश का आदेश पारित किए जाने के पश्चात् निर्माण कराया था । चूंकि आदेश 39, नियम 2(क) के अधीन कार्यवाहियां अवमान कार्यवाहियों के समान होती हैं और इसलिए अर्ध-दांडिक प्रकृति की होती हैं, इसलिए प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी है) को अस्थायी व्यादेश के आदेश के अतिक्रमण को दोषी अभिनिर्धारित किए जाने के लिए उच्चतर कोटि के सबूत की आवश्यकता होगी ।

22. विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में यह निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी है) अस्थायी व्यादेश के आदेश के अतिक्रमण का दोषी है । तथापि, उक्त निष्कर्ष बिना किया युक्तियुक्तता के है और ऐसी किसी भी सामग्री के बारे में कोई चर्चा नहीं की गई है जिसके आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा । चूंकि किसी व्यक्ति को अननुपालन या व्यादेश का भंग कारित किए जाने के बाबत दंडित किए जाने के लिए उच्चतर कोटि का सबूत अपेक्षित है, इसलिए प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी) को साक्ष्य की प्रचुरता के आधार पर दोषी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता । इस बाबत कोई चर्चा नहीं की गई है कि विद्वान् विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर कैसे पहुंचा कि अपीलार्थी ने अस्थायी व्यादेश का आदेश पारित किए जाने के पश्चात् निर्माण कराया है ।

23. तारीख 3 अगस्त, 2013 के आदेश, जिसको इस अपील में आक्षेपित किया गया है के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी सं. 1 से 4 ने वादग्रस्त संपत्ति पर निर्माण कराए जाने के द्वारा अस्थायी व्यादेश के आदेश का अतिक्रमण किया है । चूंकि ये कार्यवाहियां अर्ध-दांडिक प्रकृति

की हैं इसलिए किसी को न्यायालय के आदेश के अतिक्रमण का दोषी ठहराए जाने के लिए उच्चतर कोटि के सबूत की आवश्यकता होगी । आक्षेपित आदेश के परिशीलन से प्रकट होता है कि विचारण न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने के प्रयोजनार्थ कि प्रतिवादी सं. 2 (जो इस मामले में अपीलार्थी है) ने तारीख 20 दिसंबर, 2011 के पश्चात् निर्माण कराया था, किसी भी विश्वसनीय साक्ष्य पर न तो विचार किया गया है और न ही उस पर चर्चा की गई । आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह भी दर्शित होता है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अकस्मात यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी ने अस्थायी निषेधाज्ञा आदेश के बाबत पूर्ण जानकारी होने के बावजूद इस आदेश का अतिक्रमण किया है "और इस निष्कर्ष के समर्थन में कोई तर्क भी नहीं प्रस्तुत किया गया है" ।

24. मामले को इस दृष्टि से देखते हुए चूंकि मामले के इस अत्यधिक महत्वपूर्ण पहलू पर आक्षेपित आदेश में युक्तिसंगत रूप से विचार नहीं किया गया है, इसलिए तारीख 3 अगस्त, 2013 का आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में मान्य नहीं ठहराया जा सकता और तद्नुसार वह अपास्त किया जाता है ।

25. आक्षेपित आदेश से उद्भूत वर्तमान अपील मंजूर की जाती है और मामले को वादी के सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 39, नियम 2(क) सपठित धारा 151 के अधीन आवेदन को विधि अनुसार पुन: निर्णीत किए जाने के लिए विद्वान् विचारण न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

अवि.

(2019) 2 सि. नि. प. 621 कर्नाटक

सी. एस. सुन्दरेश और एक अन्य

बनाम

सी. एस. अनन्तलक्ष्मी और अन्य

(2014 की सिविल रिट याचिका सं. 44513)

तारीख 6 अगस्त, 2018

न्यायमूर्ति एस. जी. पंडित

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 14, नियम 2 – विभाजन के लिए वाद – विचारण न्यायालय द्वारा कुल 12 विवाद्यक बनाकर प्रथमत: दो विवाद्यकों पर सुनकर निर्णय दिया जाना – न्यायालय द्वारा प्रदर्शों से संबंधित सम्पत्ति को वाद अनुसूची में सम्मिलित करने का निदेश किया जाना – विधिमान्यता – यह वादी या प्रतिवादी का अधिकार है कि वह वादपत्र अनुसूची में किस सम्पत्ति को सम्मिलित या उल्लिखित करे – न्यायालय द्वारा इस बारे में निदेश देना उचित नहीं है – न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह सभी विवाद्यकों पर समुचित उत्तर देकर अपना निर्णय पारित करे – अत: मामले को प्रतिप्रेषित किया जाना चाहिए ।

2008 के मूल वाद सं. 35 में जो विभाजन, पृथक् कब्जे और अंत:कालीन फायदों के लिए फाइल किया गया था, याची वादी और प्रत्यर्थी प्रतिवादी हैं । विचारण न्यायालय ने अभिवचनों के आधार पर 12 मुख्य विवाद्यक और एक अतिरिक्त विवाद्यक विरचित किया । पक्षकारों ने सभी विवाद्यकों पर अपना-अपना साक्ष्य पेश किया और इस प्रकार विचारण पूर्ण हुआ । जब मामला बहस के प्रक्रम पर पहुंचा तब विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 6 और 7 को प्रारंभिक विवाद्यक मानते हुए उक्त विवाद्यकों पर दलीलें सुनी । विचारण न्यायालय ने उक्त दो विवाद्यकों पर सुनवाई के पश्चात् आदेश पारित किया । विचारण न्यायालय ने उपर्युक्त आदेश द्वारा दोनों पक्षों को केवल प्रदर्श

डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित करने के पश्चात् मामला पुन: खोलने की स्वतंत्रता देते हुए वाद को बंद कर दिया और वर्तमान रिट याचिका में इसी आदेश को आक्षेपित किया गया है । याचियों ने ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, हुनसूर की फाइल पर के 2008 के मूल वाद सं. 35 में तारीख 11 अगस्त, 2014 के निर्णय से व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका फाइल की है । रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – याचियों तथा प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और 2008 के मूल वाद सं. 35 में तारीख 11 अगस्त, 2014 को पारित निर्णय का परिशीलन करने के पश्चात् न्यायालय का यह मत है कि विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय पारित करने में त्रुटि कारित की है और इसलिए यह अपास्त किए जाने योग्य है । यह एक स्वीकृत तथ्य है कि दोनों पक्षों ने ही विचारण न्यायालय द्वारा विरचित विवाद्यकों पर अपना-अपना साक्ष्य पेश किया है । विचारण न्यायालय विवाद्यक सं. 6 और 7 पर बहस सुनने के पश्चात् इन दोनों विवाद्यकों को प्रारंभिक विवाद्यक मानते हुए इन दो विवाद्यकों पर भी समुचित रूप से उत्तर देने में विफल रहा है । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 14, नियम 2 के अनुसार भी न्यायालय को सभी विवाद्यकों पर उत्तर देना चाहिए । न्यायालय द्वारा वर्तमान मामले में विवाद्यक सं. 6 और 7 को प्रारंभत: लेने के पश्चात् भी निर्णय में इन पर समुचित रूप से उत्तर नहीं दिया गया है । न्यायालय वाद के पक्षकार को उन संपत्तियों को जो न्यायालय के समक्ष प्रदर्शों के रूप में पेश की गई हैं, सम्मिलित करने के लिए दबाव नहीं डाल सकता अथवा आबद्ध नहीं कर सकता जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है । विचारण न्यायालय वर्तमान वाद में आक्षेपित निर्णय पारित करते हुए स्वयं ही भ्रमित हुआ है । इस बारे में प्रारंभिक विवाद्यक कि क्या वाद में आवश्यक पक्षकार न बनाए जाने का दोष है और क्या वादियों का वाद भागत: विभाजन के लिए होने के कारण वाद ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है, ऐसे विवाद्यक हैं जिन पर वाद के अन्य

विवाद्यकों के साथ उत्तर दिया जाना चाहिए था । विचारण न्यायालय ने सभी विवाद्यकों का उत्तर न देकर गलती की है । विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित करने के लिए निदेश देकर गलती की है । यह पक्षकारों का चाहे वह वादी हों या प्रतिवादी, अधिकार है कि वे विभाजन के लिए वाद अनुसूची में किन संपत्तियों को सम्मिलित करें । विचारण न्यायालय के निर्णय पर किसी भी दृष्टिकोण से विचार किया जाए तो यह किसी भी प्रकार से तर्कसंगत नहीं माना जाएगा । अत: 2008 के मूल वाद सं. 35 में तारीख 11 अगस्त, 2014 को पारित निर्णय अपास्त करते हुए मामला विचारण न्यायालय को सभी विवाद्यकों पर नए सिरे से विचार करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है । (पैरा 6)

आरंभिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2014 की सिविल रिट याचिका सं. 44513.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन सिविल रिट याचिका ।

याचियों की ओर से श्री टी. एन. रघुपति

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री जी. बालकृष्ण शास्त्री

न्यायमूर्ति एस. जी. पंडित – याचियों ने ज्येष्ठ सिविल न्यायाधीश, हुनसूर की फाइल पर के 2008 के मूल वाद सं. 35 में तारीख 11 अगस्त, 2014 के निर्णय से व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन वर्तमान रिट याचिका फाइल की है ।

2. 2008 के मूल वाद सं. 35 में जो विभाजन, पृथक् कब्जे और अंत:कालीन फायदों के लिए फाइल किया गया था, याची वादी और प्रत्यर्थी प्रतिवादी हैं । विचारण न्यायालय ने अभिवचनों के आधार पर 12 मुख्य विवाद्यक और एक अतिरिक्त विवाद्यक विरचित किया । पक्षकारों ने सभी विवाद्यकों पर अपना-अपना साक्ष्य पेश किया और इस प्रकार विचारण पूर्ण हुआ । जब मामला बहस के प्रक्रम पर पहुंचा तब

विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 6 और 7 को प्रारंभिक विवाद्यक मानते हुए उक्त विवाद्यकों पर दलीलें सुनी । विचारण न्यायालय ने उक्त दो विवाद्यकों पर सुनवाई के पश्चात् निम्नलिखित आदेश पारित किया :-

> "वादियों को वाद अनुसूची में प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित दस्तावेजों को सम्मिलित करने के लिए और मामले में आगे कार्यवाही करने के लिए निदेश किया जाता है ।
>
> इस संप्रेक्षण के साथ दोनों पक्षकारों को पूर्ण विवरण के साथ वाद अनुसूची में केवल प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित करने के पश्चात् मामला पुन: खोलने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करते हुए वर्तमान के लिए मामला बंद किया जाता है ।"

विचारण न्यायालय ने उपर्युक्त आदेश द्वारा दोनों पक्षों को केवल प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित करने के पश्चात् मामला पुन: खोलने की स्वतंत्रता देते हुए वाद को बंद कर दिया और वर्तमान रिट याचिका में इसी आदेश को आक्षेपित किया गया है ।

3. याचियों तथा प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेलों को सुना गया और रिट याचिका में फाइल किए गए कागजपत्रों का परिशीलन किया गया ।

4. याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय का निर्णय पूर्णतया त्रुटिपूर्ण है और विचारण न्यायालय केवल प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित करने के पश्चात् वाद को पुन: खोलने के लिए दोनों पक्षों को स्वतंत्रता देते हुए वाद को बंद करने का ऐसा कोई आदेश पारित नहीं कर सकता । यह भी दलील दी गई है कि यह पक्षकारों का अधिकार है कि वे किसी विभाजन वाद में संपत्तियों को सम्मिलित करें और न्यायालय संपत्तियों को सम्मिलित करने के लिए पक्षकारों पर दबाव नहीं डाल सकता या उन्हें आबद्ध नहीं कर सकता । आगे यह भी दलील दी गई है कि विचारण न्यायालय का निर्णय सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 14, नियम 2 के

विरुद्ध है । न्यायालय को सभी विवाद्यकों पर दोनों पक्षों का साक्ष्य अभिलिखित करने के पश्चात् सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 14, नियम 2 के अनुसार वाद के सभी विवाद्यकों पर अपना निर्णय देना चाहिए था । यहां तक कि न्यायालय द्वारा उपर्युक्त दो विवाद्यकों का उत्तर भी निर्णय में समुचित रूप से नहीं दिया गया है । अत: उन्होंने यह अनुरोध किया है कि आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाए और मामला विचारण न्यायालय द्वारा सभी विवाद्यकों पर नए सिरे से विचार करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाए ।

5. इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय ऐसा कोई निर्णय पारित करने में न्यायोचित नहीं है जिसमें विचारण न्यायालय दोनों पक्षों को विभाजन के लिए प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित कराकर वाद को पुन: खोलने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करते हुए वाद को बंद कर दे । यह भी दलील दी गई है कि यह पक्षकारों का अधिकार है चाहे वह वादी हो या प्रतिवादी हो कि वे किसी विभाजन वाद में संपत्तियों को चाहे वह संयुक्त कुटुंबीय संपत्ति हो या सहदायिकी संपत्ति, वाद अनुसूची में विभाजन के लिए उपलब्ध संपत्तियों को सम्मिलित करें ।

6. याचियों तथा प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और 2008 के मूल वाद सं. 35 में तारीख 11 अगस्त, 2014 को पारित निर्णय का परिशीलन करने के पश्चात् मेरा यह मत है कि विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय पारित करने में त्रुटि कारित की है और इसलिए यह अपास्त किए जाने योग्य है । यह एक स्वीकृत तथ्य है कि दोनों पक्षों ने ही विचारण न्यायालय द्वारा विरचित विवाद्यकों पर अपना-अपना साक्ष्य पेश किया है । विचारण न्यायालय विवाद्यक सं. 6 और 7 पर बहस सुनने के पश्चात् इन दोनों विवाद्यकों को प्रारंभिक विवाद्यक मानते हुए इन दो विवाद्यकों पर भी समुचित रूप से उत्तर देने में विफल रहा है । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 14, नियम 2 के अनुसार भी न्यायालय को सभी विवाद्यकों पर उत्तर देना चाहिए । न्यायालय द्वारा वर्तमान मामले में विवाद्यक सं. 6 और 7 को प्रारंभत:

लेने के पश्चात् भी निर्णय में इन पर समुचित रूप से उत्तर नहीं दिया गया है । न्यायालय वाद के पक्षकार को उन संपत्तियों को जो न्यायालय के समक्ष प्रदर्शों के रूप में पेश की गई हैं, सम्मिलित करने के लिए दबाव नहीं डाल सकता अथवा आबद्ध नहीं कर सकता जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है । विचारण न्यायालय वर्तमान वाद में आक्षेपित निर्णय पारित करते हुए स्वयं ही भ्रमित हुआ है । इस बारे में प्रारंभिक विवाद्यक कि क्या वाद में आवश्यक पक्षकार न बनाए जाने का दोष है और क्या वादियों का वाद भागत: विभाजन के लिए होने के कारण वाद ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है, ऐसे विवाद्यक हैं जिन पर वाद के अन्य विवाद्यकों के साथ उत्तर दिया जाना चाहिए था । विचारण न्यायालय ने सभी विवाद्यकों का उत्तर न देकर गलती की है । विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को प्रदर्श डी-4 से प्रदर्श डी-7 में उल्लिखित संपत्तियों को सम्मिलित करने के लिए निदेश देकर गलती की है । यह पक्षकारों का चाहे वह वादी हों या प्रतिवादी, अधिकार है कि वे विभाजन के लिए वाद अनुसूची में किन संपत्तियों को सम्मिलित करें । विचारण न्यायालय के निर्णय पर किसी भी दृष्टिकोण से विचार किया जाए तो यह किसी भी प्रकार से तर्कसंगत नहीं माना जाएगा । अत: 2008 के मूल वाद सं. 35 में तारीख 11 अगस्त, 2014 को पारित निर्णय अपास्त करते हुए मामला विचारण न्यायालय को सभी विवाद्यकों पर नए सिरे से विचार करने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है ।

7. उक्त संप्रेक्षणों के साथ यह रिट याचिका मंजूर की जाती है ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

महः

(2019) 2 सि. नि. प. 627 कर्नाटक

पी. दामोदर राजू

बनाम

श्रीमती आर. एस. परमेश्वरी

(2016 की नियमित प्रथम अपील सं. 153)

तारीख 16 अप्रैल, 2019

न्यायमूर्ति श्रीनिवास हरीश कुमार

संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) – धारा 106 [सपठित साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 116] – मौखिक पट्टे के आधार पर किराएदारी – बेदखली के लिए दावा – किराएदार द्वारा वादी के स्वामित्व से इनकार – मकान-मालिक द्वारा मौखिक करार के साक्षियों को पेश न किया जाना – किराएदार द्वारा प्रतिकूल कब्जे के आधार पर स्वामित्व का दावा किया जाना – मकान-मालिक द्वारा स्वामित्व के सबूत के रूप में संपत्ति को क्रय करने का विलेख प्रस्तुत किया जाना – किराएदार द्वारा प्रतिपरीक्षा में आरंभ में किराया दिया जाना स्वीकार किया जाना – मौखिक पट्टे के साक्षियों को पेश न करने से वादी के स्वामित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता – जहां वादी और प्रतिवादी के बीच किराएदार और मकान-मालिक की नातेदारी साबित हो गई हो वहां किराएदार के प्रतिकूल कब्जे के दावे को स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 – धारा 107 – मौखिक पट्टे के आधार पर किराएदारी – मकान-मालिक द्वारा लिखित सूचना जारी करके किराएदारी को पर्यवसित किया जाना – सूचना किराएदार के कारबार परिसर और आवासीय पते पर भेजी जानी – किराएदार द्वारा सूचना की प्राप्ति से इनकार – किराएदार द्वारा फाइल लिखित कथन पर किए गए हस्ताक्षरों का सूचना से संलग्न डाक-अभिस्वीकृति पर हुए हस्ताक्षरों से मेल खाना – किराएदार पर सूचना की सम्यक् तामील मानी

जाएगी – मकान-मालिक द्वारा किराएदारी के पर्यवसान समुचित रूप से माना जाएगा ।

वादी द्वारा वादपत्र में किए गए अभिवचन ये हैं कि वादी वाद-अनुसूची-संपत्ति की आत्यंतिक स्वामी है और उसने इसे वर्ष 1990 में उसके और प्रतिवादी के बीच हुए मौखिक पट्टे के आधार पर प्रतिवादी को दिया था । प्रतिवादी संपत्ति में 'आर. आर. स्टील्स एजेंसी' के नाम से यंत्र-उपकरण आदि का कारोबार चलाता है । यह परिसर मासिक किराएदारी के आधार पर 3,000/- रुपए प्रतिमास के किराए पर दिया गया था । समय-समय पर किराए में वृद्धि की जाती थी । वाद संस्थित करने की तारीख पर प्रतिवादी 9,900/- रुपए प्रतिमास की दर से संदाय कर रहा था । वादी के पति की मृत्यु के पश्चात् वादी को यह महसूस हुआ कि उसके द्वारा जीवन चलाना कठिन हो रहा है और उसने अपने पुत्र को कारबार कराने के बारे में सोचा और इसलिए उसने प्रतिवादी से वाद-अनुसूची-संपत्ति को खाली करने के लिए कहा । प्रतिवादी ने वादी के अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया । उसने (वादी ने) "श्री सदगुरु सेवा समिति" से जो मुफ्त विधिक सहायता सेवा प्रदान करती है, संपर्क किया और उसने जिला विधिक सेवा प्राधिकारी से संपर्क किया । जिला विधिक सेवा प्राधिकारी ने तारीख 27 फरवरी, 2006 को प्रतिवादी को एक पत्र भेजा जिसमें उसने प्रतिवादी से लोक अदालत के समक्ष मामला सुलझाने के लिए कहा । चूंकि प्रतिवादी ने इस पत्र का कोई जवाब नहीं दिया इसलिए वादी ने प्रतिवादी को तारीख 22 अक्तूबर, 2006, तारीख 29 दिसंबर, 2006 और तारीख 10 मई, 2007 को विधिक सूचनाएं जारी कीं जिनमें वादी ने प्रतिवादी से वाद-अनुसूची-संपत्ति खाली करके उसका कब्जा वादी के सुपुर्द करने के लिए कहा । चूंकि प्रतिवादी ने ऐसा नहीं किया और तब पुन: तारीख 26 दिसंबर, 2011 को किराएदारी रद्द करते हुए प्रतिवादी को एक और सूचना जारी की गई थी । प्रतिवादी ने सूचना प्राप्त की तथापि, उसने वाद संपत्ति खाली नहीं की । अत: वादी ने वाद संस्थित किया । नगर सिविल न्यायाधीश, बेंगलुरु की फाइल पर के 2012 के मूल वाद सं. 2590 में का प्रतिवादी इस अपील में अपीलार्थी है । प्रत्यर्थी ने वादी के रूप में बनासवाड़ी ग्राम, के. आर. पुरम होबली,

बेंगलुरु पूर्वी तालुक में क्रम सं. 41 पर दर्ज परिसर सं. 1 में संपत्ति मकान सूची कठा सं. 1024, माप पूर्व-पश्चिम 40' और उत्तर-दक्षिण 48.5' (जिसे आगे 'वाद-अनुसूची-संपत्ति' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) से प्रतिवादी के बेदखली की ईप्सा करते हुए वाद फाइल किया है । विचारण न्यायालय द्वारा वादी का वाद डिक्री किया गया था । अत: प्रतिवादी-अपीलार्थी ने विचारण न्यायालय के निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में प्रतिवादी ने इस नातेदारी को दो आधारों पर विवादित किया है, प्रथमत: उसने वाद-अनुसूची-संपत्ति के स्वामित्व के संबंध में इनकार किया है और द्वितीयत: मौखिक पट्टा साबित न होने का कथन किया गया है । बेदखली के लिए किसी वाद में सामान्यतया वादी के हक के संबंध में प्रश्न उदभूत नहीं होते हैं तथापि, वर्तमान मामले में इस पर विचार किया जा सकता है । वर्तमान मामले में वादी ने अपने हक को साबित करने के लिए दो दस्तावेज अर्थात् प्रदर्श पी-1 और प्रदर्श पी-2 पेश किए हैं । प्रदर्श पी-1 विक्रय विलेख है और प्रदर्श पी-2 कर संदत्त करने की रसीद है । विक्रय विलेख से यह उपदर्शित होता है कि वादी ने वाद-अनुसूची-संपत्ति तारीख 24 अप्रैल, 1989 को सी. राजप्पा नामक व्यक्ति से क्रय की थी । प्रदर्श पी-2 कर संदत्त करने की रसीद है जो कि वादी के नाम से है । प्रतिवादी ने वादी के स्वामित्व (हक़) के खंडन के लिए कोई दस्तावेज पेश नहीं किया है । उसने एक ओर स्वामित्व का दावा किया है और दूसरी ओर प्रतिकूल कब्जे का दावा किया है । अभिलेख पर का साक्ष्य स्पष्ट रूप से वादी के हक को साबित करता है । जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रतिवादी ने प्रतिकूल कब्जा साबित करने के लिए अपेक्षित संघटक साबित नहीं किए हैं और इसके बजाय प्रतिपरीक्षा में उसके द्वारा दिया गया उत्तर उसके इस कथन को नकारता है कि प्रतिकूल कब्जे के द्वारा वाद-अनुसूची-संपत्ति के ऊपर उसने अपनी हकदारी पूर्ण कर ली है । उसने यह उत्तर दिया है कि उसे वादी के पति ने वाद-अनुसूची-संपत्ति के ऊपर एक भवन सन्निर्मित करने की इजाजत दी थी और इसलिए उसने इसके ऊपर कब्जा कर

लिया था । उसका यह उत्तर यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त है कि प्रतिवादी प्रतिकूल कब्जे का कथन या दावा नहीं कर सकता । यदि यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर के साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया जाए कि क्या वादी और प्रतिवादी के बीच मकान-मालिक और किराएदार की नातेदारी साबित हो गई है, तो यह बात भली भांति कही जा सकती है कि विचारण न्यायालय ने ऐसी विद्यमानता को साबित होने का निष्कर्ष निकालने के लिए साक्ष्य का ठीक ही मूल्यांकन किया है । वादी ने यह कहा है कि उसके और प्रतिवादी के बीच मौखिक करार था । अधिनियम की धारा 107 को दृष्टिगत करते हुए मौखिक करार या पट्टे के सृजन के लिए कोई वर्जन नहीं है । तथापि, जैसी कि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दलील दी गई है कि मौखिक पट्टा या करार साबित भी किया जाना चाहिए । वादी के अनुसार उस समय सुब्बाराजू और यशोदम्मा मौजूद थे जब वादी और प्रतिवादी के बीच मौखिक करार हुआ था । अपीलार्थी के काउंसेल ने यह दलील दी है कि उपर्युक्त दोनों व्यक्तियों या कम से कम उनमें से एक व्यक्ति की परीक्षा किए बिना यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि मौखिक करार साबित हो गया है और इसलिए उन्होंने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय को डी. डब्ल्यू. 1 की प्रतिपरीक्षा में पाए गए एकमात्र वाक्य के आधार पर प्रतिवादी को वादी का किराएदार अभिनिर्धारित नहीं करना चाहिए था । यदि संपूर्ण प्रतिपरीक्षा का मूल्यांकन किया जाए तो यह कहा जाना संभव नहीं है कि उसे इस संबंध में प्रश्न को समझने में कोई भ्रम हुआ था कि उसने किराएदारी के आरंभ में कितना किराया दिया था और उसने कब किराया देना बंद कर दिया । उसने यह स्पष्ट उत्तर दिया है कि वह आरंभ में 3,000/- रुपए किराया देता था और उसने किराया देना तब बंद कर दिया जब दूसरा भवन सन्निर्मित किया जा रहा था । यह प्रतिपरीक्षा में एक मामूली उत्तर नहीं है । इस आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह आरंभ में किराए का संदाय कर रहा था । यदि संबद्ध भवन के निर्माण के पश्चात् उसने किराया देना बंद कर दिया तो उसे यह साबित करना चाहिए कि क्या उसके और वादी के बीच कोई अन्य संव्यवहार विद्यमान हो गया था । इसके बजाय उसने प्रतिकूल कब्जे का

आधार लिया है जो अस्वीकार्य है और जिसके बारे में कोई सबूत नहीं दिया गया है । अत: वादी ने यह साबित कर दिया है कि प्रतिवादी वादी का किराएदार है । ऐसे व्यक्ति की प्रतिपरीक्षा न कराया जाना जो मौखिक पट्टा किए जाने के समय मौजूद था, वादी के पक्षकथन के लिए घातक नहीं है । विचारण न्यायालय किराएदारी का निष्कर्ष निकालने में न्यायोचित है । बिन्दु सं. (i) का उत्तर सकारात्मक रूप में दिया जाता है । (पैरा 10, 11, 12 और 18)

वादपत्र में पट्टा आरंभ होने की तारीख उल्लिखित नहीं है जैसी कि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दलील दी गई है । ऐसा अकलात्मक प्रारूपण के कारण हो सकता है ; यह वादी के पक्षकथन पर प्रभाव नहीं डालता । चूंकि पट्टा मौखिक है इसलिए पर्यवसान के लिए 15 दिन की अग्रिम सूचना पर्याप्त है । विचारण न्यायालय ने पट्टे के पर्यवसान के संबंध में ठीक ही निष्कर्ष निकाला है । प्रदर्श पी-3 विधिक सूचना की प्रति है । प्रदर्श पी-4 डाक-रसीद है और प्रदर्श पी-5 और प्रदर्श पी-6 डाक-अभिस्वीकृतियां हैं । प्रतिवादी को सूचना दोनों पतों पर अर्थात् उसके वाद-अनुसूची-संपत्ति के कारबारी परिसर पर और आवासीय पते पर भेजी गई थी । प्रदर्श पी-5 से यह उपदर्शित होता है कि प्रतिवादी द्वारा सूचना स्वयं प्राप्त की गई थी और पी-6 से यह उपदर्शित होता है कि सूचना की प्राप्ति डी. मंजुला द्वारा की गई थी । बलपूर्वक यह दलील दी गई है कि प्रतिवादी पर सूचना की किसी भी प्रकार से तामील नहीं की गई थी और प्रदर्श पी-5 पर पाए गए हस्ताक्षर प्रतिवादी के हस्ताक्षर नहीं है । यह दलील दी गई है कि न्यायालय को कम से कम यह निष्कर्ष निकालना चाहिए था कि विवादित हस्ताक्षरों की भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के अनुसरण में स्वीकृत हस्ताक्षरों के साथ तुलना करानी चाहिए थी । यह दलील स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । मैंने प्रदर्श पी-5 पर पाए गए हस्ताक्षरों की लिखित कथन पर पाए गए हस्ताक्षरों से तुलना की है । यह हस्ताक्षर पूर्णरूप से स्वयं प्रतिवादी द्वारा किया जाना प्रतीत होता है । अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा दी गई यह संपूर्ण दलील कि सूचना की कोई तामील नहीं कराई गई थी, स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । साक्ष्य से यह उपदर्शित होता

है कि किराएदारी का विधिमान्य रूप से पर्यवसान किया गया था । अत: बिन्दु सं. (ii) का उत्तर भी सकारात्मक रूप से दिया जाता है । ऊपर की गई विवेचना के आधार पर न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि विचारण न्यायालय ने वाद को डिक्री करने का सही निष्कर्ष निकाला है । विचारण न्यायालय के निष्कर्ष खंडित किए जाने योग्य नहीं हैं । (पैरा 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 2 एस. सी. सी. 788 : **त्रिभुवन शंकर** बनाम **अमृत लाल** ;	6, 9
[2011]	ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1557 = (2010) 13 एस. सी. सी. 762 : **सायगो बाई** बनाम **चियूरु बजरंगी** ;	6, 14
[2011]	ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1158 = (2010) 14 एस. सी. सी. 69 : **डी. एन. जीवाराजू और एक अन्य** बनाम **डी. सुधाकर और अन्य** ;	6
[2007]	आई. एल. आर. 2007 कर्नाटक 4344 = 2007 (6) ए. आई. आर. कर्नाटक आर. 344 : **मैसर्स महेश सेंटर और एक अन्य** बनाम **पियुपल चेरेटी फंड द्वारा ट्रस्टीज** ;	6, 15
[2007]	2007 (6) ए. आई. आर. कर्नाटक आर. 344 : **डी. एन. जीवाराजू वाला मामला** ;	16
[2001]	आई. एल. आर. 2001 कर्नाटक 1515 : **धनंजय विश्वेश्वर हेगड़े** बनाम **जटटी कुप्पा नायक और अन्य** ;	6, 15
[1992]	ए. आई. आर. 1992 एम. पी. 303 : **गंगा राम** बनाम **म्युनिसिपल कौंसिल** ;	7

[1990] ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 83 (आन-लाइन) = (1990) 4 एस. सी. सी. 147 : **ब्रज मोहन और अन्य** बनाम **सुग़रा बेगम और अन्य** ; 6, 11

[1966] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 629 : **अत्यम वीरराजू और अन्य** बनाम **पेचेट्टी वेंकन्ना और अन्य** । 7

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2016 की नियमित प्रथम अपील सं. 153.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री हेगड़े वी. एस.

प्रत्यर्थी की ओर से प्रकाश टी. हेब्बर

न्यायमूर्ति श्रीनिवास हरीश कुमार – नगर सिविल न्यायाधीश, बेंगलुरु की फाइल पर के 2012 के मूल वाद सं. 2590 में का प्रतिवादी इस अपील में अपीलार्थी है । प्रत्यर्थी ने वादी के रूप में बनासवाड़ी ग्राम, के. आर. पुरम होबली, बेंगलुरु पूर्वी तालुक में क्रम सं. 41 पर दर्ज परिसर सं. 1 में संपत्ति मकान सूची कठा सं. 1024, माप पूर्व-पश्चिम 40' और उत्तर-दक्षिण 48.5' (जिसे आगे 'वाद-अनुसूची-संपत्ति' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है) से प्रतिवादी के बेदखली की ईप्सा करते हुए वाद फाइल किया है ।

2. वादी द्वारा वादपत्र में किए गए अभिवचन ये हैं कि वादी वाद-अनुसूची-संपत्ति की आत्यंतिक स्वामी है और उसने इसे वर्ष 1990 में उसके और प्रतिवादी के बीच हुए मौखिक पट्टे के आधार पर प्रतिवादी को दिया था । प्रतिवादी संपत्ति में 'आर. आर. स्टील्स एजेंसी' के नाम से यंत्र-उपकरण आदि का कारोबार चलाता है । यह परिसर मासिक किराएदारी के आधार पर 3,000/- रुपए प्रतिमास के किराए पर दिया गया था । समय-समय पर किराए में वृद्धि की जाती थी । वाद संस्थित करने की तारीख पर प्रतिवादी 9,900/- रुपए प्रतिमास की दर से संदाय

कर रहा था । वादी के पति की मृत्यु के पश्चात् वादी को यह महसूस हुआ कि उसके द्वारा जीवन चलाना कठिन हो रहा है और उसने अपने पुत्र को कारबार कराने के बारे में सोचा और इसलिए उसने प्रतिवादी से वाद-अनुसूची-संपत्ति को खाली करने के लिए कहा । प्रतिवादी ने वादी के अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया । उसने (वादी ने) "श्री सदगुरु सेवा समिति" से जो मुफ्त विधिक सहायता सेवा प्रदान करती है, संपर्क किया और उसने जिला विधिक सेवा प्राधिकारी से संपर्क किया । जिला विधिक सेवा प्राधिकारी ने तारीख 27 फरवरी, 2006 को प्रतिवादी को एक पत्र भेजा जिसमें उसने प्रतिवादी से लोक अदालत के समक्ष मामला सुलझाने के लिए कहा । चूंकि प्रतिवादी ने इस पत्र का कोई जवाब नहीं दिया इसलिए वादी ने प्रतिवादी को तारीख 22 अक्तूबर, 2006, तारीख 29 दिसंबर, 2006 और तारीख 10 मई, 2007 को विधिक सूचनाएं जारी कीं जिनमें वादी ने प्रतिवादी से वाद-अनुसूची-संपत्ति खाली करके उसका कब्जा वादी के सुपुर्द करने के लिए कहा । चूंकि प्रतिवादी ने ऐसा नहीं किया और तब पुन: तारीख 26 दिसंबर, 2011 को किराएदारी रद्द करते हुए प्रतिवादी को एक और सूचना जारी की गई थी । प्रतिवादी ने सूचना प्राप्त की तथापि, उसने वाद संपत्ति खाली नहीं की । अत: वादी ने वाद संस्थित किया ।

3. प्रतिवादी ने न केवल वाद-अनुसूची-संपत्ति पर वादी के स्वामित्व से इनकार किया अपितु यह भी प्रकथन किया कि वादी ने वर्ष 1990 में वर्तमान वाद-अनुसूची-संपत्ति उसे पट्टे पर दी थी । उसने यह कथन किया कि वादी और प्रतिवादी के बीच स्वामी और किराएदार की नातेदारी विद्यमान नहीं है । उसके अनुसार उसने वर्ष 1990 में वाद-अनुसूची-संपत्ति का कब्जा लिया था । उसने वृहत्त धनराशि का निवेश करके परिसर में एक दुकान सन्निर्मित की और बिजली का कनेक्शन लिया और दुकान में लोहे के सामान का कारबार करना आरंभ किया । इस दुकान के बराबर की खाली दुकान भी उसके कब्जे में है । उसने यह भी विनिर्दिष्ट कथन किया कि उसने वाद-अनुसूची-संपत्ति के ऊपर प्रतिकूल कब्जे के द्वारा पूर्ण अधिकार, हक और हित प्राप्त कर लिया है और इसलिए वह दुकान खाली नहीं कर सकता ।

4. विचारण न्यायालय ने वादी द्वारा पेश किए गए साक्षियों के मौखिक साक्ष्य और दस्तावेजी साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् यह निदेश देते हुए वाद डिक्री कर दिया कि प्रतिवादी निर्णय की तारीख से एक मास के भीतर वादी को वाद-अनुसूची-संपत्ति का खाली कब्जा परिदत्त करे । प्रतिवादी ने इस निर्णय से व्यथित होकर यह अपील फाइल की है ।

5. विचारण न्यायालय ने इस प्रकार निष्कर्ष अभिलिखित किए । वादी ने वाद-अनुसूची-संपत्ति की आत्यंतिक स्वामी होने का दावा किया है और प्रतिवादी द्वारा इस दावे से इनकार किया गया है । वादी ने वाद-अनुसूची-संपत्ति के ऊपर अपना स्वामित्व साबित करने के लिए दस्तावेज प्रदर्श पी-1 और प्रदर्श पी-2 क्रमश: रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख और कर संदाय करने की रसीद पेश की है । विक्रय विलेख से यह उपदर्शित होता है कि वह संपत्ति की आत्यंतिक स्वामी है । प्रतिवादी अपना स्वामित्व साबित करने में विफल रहा है । प्रतिवादी ने अपने स्वामित्व के सबूत में कोई दस्तावेज पेश नहीं किया है और इसके बजाय उसने प्रतिकूल कब्जे का दावा किया है । प्रतिकूल कब्जे का यह अभिवाक उपलब्ध न होने पर भी प्रतिवादी ने इस बारे में कुछ नहीं कहा है कि किस प्रकार और किस तारीख से उसका कब्जा वादी के हित के प्रतिकूल बन गया था । वादी यह साबित करने में समर्थ रही है कि प्रतिवादी ने वर्ष 1990 में एक किराएदार के रूप में वाद-अनुसूची-संपत्ति पर एक कब्जा प्राप्त किया था । पट्टा मौखिक हुआ था । अत: संपत्ति अंतरण अधिनियम (जिसे आगे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 106 यह अभिनिर्धारित करने के लिए लागू की जा सकती है कि किराएदारी मास-प्रतिमास के आधार पर थी । यद्यपि वादी ने यह साबित करने के लिए कि प्रतिवादी उसकी किराएदार है, कोई दस्तावेज पेश नहीं किया है तथापि, प्रतिवादी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह उत्तर दिया है कि वह वादी को किराए के रूप में 3,000/- रुपए का संदाय करता था । उसकी यह स्वीकारोक्ति स्वत: यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त है कि प्रतिवादी वादी का किराएदार है । वादी ने प्रदर्श पी-4 के अनुसार परिसर छोड़ने की सूचना जारी करके विधिमान्य रूप से

किराएदारी रद्द की है । प्रदर्श पी-5 और पी-6 डाक-अभिस्वीकृति रसीदें हैं जिनसे यह साबित होता है कि प्रतिवादी को सूचना प्राप्त हो गई थी । प्रतिवादी के इस कथन पर कि उसके ऊपर सूचना की कोई तामील नहीं हुई है, विश्वास नहीं किया जा सकता । जहां तक डाक-लिफ़ाफे पर सही पता लिखा होने का संबंध है, इस संबंध में यह उपधारणा की जा सकती है कि प्रतिवादी के ऊपर सम्यक् रूप से तामील हो गई थी । अतः, चूंकि किराएदारी विधि के अनुसार सम्यक्तः रद्द कर दी गई थी इसलिए वादी प्रतिवादी की बेदखली के लिए डिक्री पाने की हकदार होगी ।

6. अपीलार्थी/प्रतिवादी के विद्वान् काउंसेल ने विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को निम्नलिखित आधारों पर आक्षेपित किया है –

(i) वादी ने वाद-अनुसूची-संपत्ति की स्वामी होने का दावा करते हुए यह कहा है कि उसके और प्रतिवादी के बीच मौखिक पट्टा (करार) हुआ था । वादपत्र में इस बारे में नहीं कहा गया है कि किराएदारी किस तारीख को आरंभ हुई थी । वादी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह उत्तर दिया है कि उस समय जब वादी ने वाद-अनुसूची-संपत्ति प्रतिवादी को पट्टे पर दी थी, सुब्बाराजू और यशोदम्मा मौजूद थे । इन दोनों व्यक्तियों की परीक्षा नहीं कराई गई है । वादी ने यह साबित करने के लिए किराया-रसीद पेश नहीं की है कि प्रतिवादी उसकी किराएदार है । अतः अधिनियम की धारा 105 और 106 के अनुसार किराएदारी के सृजन का कोई सबूत नहीं है । जहां कहीं मौखिक करार का अभिवचन किया जाता है वहां इसे साबित किया जाना चाहिए अन्यथा किराएदार और मकान-मालिक की नातेदारी साबित नहीं मानी जाएगी । किसी किराएदार की बेदखली के लिए किसी वाद में मकान-मालिक और किराएदार की विद्यमानता होना आवश्यक है । उन्होंने इस बिन्दु पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **त्रिभुवन शंकर** बनाम **अमृत लाल**[1] और **ब्रज मोहन और अन्य** बनाम **सुग़रा बेगम और अन्य**[2] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों को उद्धृत किया है ।

---

[1] (2014) 2 एस. सी. सी. 788.

[2] ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 83 (आन-लाइन) = (1990) 4 एस. सी. सी. 147.

(ii) विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने के लिए डी. डब्ल्यू. 1 द्वारा अपनी प्रतिपरीक्षा में दिए गए सामान्य (हल्के-फुल्के) उत्तर का अवलंब लेकर गलती की है कि प्रतिवादी वादी की किराएदार है । यह सुस्थापित सिद्धांत है कि सामान्य स्वीकृति या किसी सामान्य वाक्य को कोई निष्कर्ष निकालने के लिए महत्व नहीं दिया जा सकता । विचारण न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि वादी ने यह साबित नहीं किया है कि प्रतिवादी वादी का किराएदार है । इस सिद्धांत के आधार पर कि किसी सामान्य उत्तर का कोई साक्ष्यिक महत्व नहीं होता है, उन्होंने उच्चतम न्यायालय द्वारा **डी. एन. जीवाराजू और एक अन्य** बनाम **डी. सुधाकर और अन्य**[1] और **सायगो बाई** बनाम **चियूरु बजरंगी**[2] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों और इस न्यायालय द्वारा **धनंजय विश्वेश्वर हेगड़े** बनाम **जट्टी कुप्पा नायक और अन्य**[3] और **मैसर्स महेश सेंटर और एक अन्य** बनाम **पियुपल चेरेटी फंड द्वारा ट्रस्टीज**[4] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है ।

(iii) सूचना जारी करके किराएदारी रद्द करने का कोई सबूत नहीं है । वादी ने प्रदर्श पी-4 से प्रदर्श पी-6 के रूप में सूचना और डाक अभिस्वीकृति रसीदों की प्रतियां पेश की हैं । उसने डाक अभिस्वीकृति पर पाए गए हस्ताक्षर से भी इनकार किया है । अत: इस बात का कोई सबूत नहीं है कि प्रतिवादी पर सूचना की तामील की गई थी । विशेष रूप से जब प्रतिवादी ने डाक अभिस्वीकृति-रसीद पर अपने हस्ताक्षरों से इनकार किया है तब वादी पर यह साबित करने का भार था कि डाक अभिस्वीकृति पर पाए गए हस्ताक्षर निस्संदेह प्रतिवादी के ही हैं । विचारण न्यायालय को किसी भी प्रकार से भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के अनुसरण में विवादित हस्ताक्षरों की स्वीकृत हस्ताक्षरों से तुलना करनी चाहिए थी । इस प्रकार का साक्ष्य पेश न किए जाने पर विचारण न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना चाहिए था कि

---

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1158 = (2010) 14 एस. सी. सी. 69.

[2] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1557 = (2010) 13 एस. सी. सी. 762.

[3] आई. एल. आर. 2001 कर्नाटक 1515.

[4] आई. एल. आर. 2007 कर्नाटक 4344 = 2007 (6) ए. आई. आर. कर्नाटक आर. 344.

किराएदारी का विधिमान्य रूप से पर्यवसान नहीं हुआ था और तब परिणामस्वरूप न्यायालय को वाद खारिज करना चाहिए था ।

7. वादी-प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने उक्त दलीलों का खंडन करते हुए यह दलील दी है कि पट्टा मौखिक करार के द्वारा भी सृजित किया जा सकता है । इस संबंध में कोई वर्जन नहीं है । चूंकि प्रतिवादी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया है कि वह वादी को 3,000/- रुपए प्रतिमास की दर से किराया संदत्त करता था इसलिए पट्टे को साबित करने के लिए अन्य कोई सबूत देना आवश्यक नहीं था । डी. डब्ल्यू. 1 की प्रतिपरीक्षा अत्यधिक संक्षेप में की गई है । डी. डब्ल्यू. 1 द्वारा की गई स्वीकृति एक सामान्य उत्तर नहीं है । विचारण न्यायालय ने सभी परिस्थितियों को विचार में लेकर उसकी स्वीकृति का अवलंब लिया है । अत: विचारण न्यायालय ने यह ठीक ही निष्कर्ष निकाला है कि प्रतिवादी वादी का किराएदार है । उन्होंने अगली दलील यह दी है कि जहां मकान-मालिक और किराएदार की नातेदारी साबित हो गई हो वहां किराएदार वादी के स्वामित्व पर विवाद नहीं कर सकता । वह ऐसी कोई दलील देने से विबद्ध है । उन्होंने इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **अत्यम वीरराजू और अन्य** बनाम **पेचेट्टी वेंकन्ना और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय और मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा **गंगा राम** बनाम **म्युनिसिपल कौंसिल**[2] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का निर्देश किया है । प्रतिवादी ने प्रतिकूल कब्जे का भी आधार लिया है तथापि, उसके लिखित कथन में इस बारे में विशिष्टियों का अभाव है कि उसके कब्जे ने कब वादी के अधिकार, हक और हित को समाप्त कर दिया । जहां प्रतिवादी ने वादी को सही स्वामी नहीं माना है और इसके अतिरिक्त उसने अपने हक का दावा किया है वहां वह प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं कर सकता । प्रतिवादी के ऊपर सूचना की सम्यक् रूप से तामील हुई थी । प्रदर्श पी-4, पी-5 और पी-6 इस बात के सबूत हैं । प्रतिवादी का यह पक्षकथन नहीं है कि डाक-लिफाफ़े के ऊपर सही पता नहीं लिखा गया था । यह न्यायालय भी लिखित कथन

---

[1] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 629.

[2] ए. आई. आर. 1992 एम. पी. 303.

में पाए गए स्वीकृत हस्ताक्षरों के साथ विवादित हस्ताक्षरों की तुलना कर सकता है क्योंकि प्रथम अपील न्यायालय तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकालने वाला निकाय होता है । इस बात का पर्याप्त साक्ष्य मौजूद है जो यह उपदर्शित करता है कि प्रतिवादी के ऊपर पर्याप्त सूचनाओं की तामील की गई थी और किराएदारी रद्द की गई थी । यदि प्रतिवादी के अनुसार वादी उसकी मकान-मालिका नहीं थी तो वह इस बारे में विधिक सूचना का जवाब दे सकता था । सूचना प्राप्त करने के पश्चात् खामोशी अख्तयार करने को मकान-मालिक और किराएदारी की नातेदारी के संबंध में समुचित निष्कर्ष निकालने के लिए और किराएदारी के पर्यवसान का निष्कर्ष निकालने के लिए उचित माना जाना चाहिए । उन्होंने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय ने सभी पहलुओं पर विचार किया है । साक्ष्य का समुचित मूल्यांकन किया गया है और इसलिए अपील खारिज की जानी चाहिए ।

8. मैंने उपर्युक्त दलीलों में उठाए गए बिन्दुओं पर विचार किया जिनके आधार पर निम्नलिखित बिन्दु उद्भूत हुए हैं :-

(i) क्या विचारण न्यायालय ने यह ठीक निष्कर्ष निकाला है कि वादी और प्रतिवादी के बीच मकान-मालिक और किराएदार की नातेदारी है ?

(ii) क्या विचारण न्यायालय का यह निष्कर्ष सही है कि किराएदारी का विधिमान्य पर्यवसान हुआ था ?

(iii) क्या आदेश किया जाए ?

बिन्दु सं. (i)

9. जैसी कि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है कि बेदखली के किसी वाद में वादी और प्रतिवादी के बीच मकान-मालिक और किराएदारी की विद्यमानता अनिवार्य है । जहां ऐसी नातेदारी साबित नहीं होती है वहां वाद खारिज किए जाने योग्य होगा । इसे उच्चतम न्यायालय द्वारा **त्रिभुवन शंकर** (पूर्वोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय में एक सिद्धांत के रूप में अधिकथित किया गया है ।

10. वर्तमान मामले में प्रतिवादी ने इस नातेदारी को दो आधारों पर

विवादित किया है, प्रथमत: उसने वाद-अनुसूची-संपत्ति के स्वामित्व के संबंध में इनकार किया है और द्वितीयत: मौखिक पट्टा साबित न होने का कथन किया गया है । बेदखली के लिए किसी वाद में सामान्यतया वादी के हक के संबंध में प्रश्न उद्भूत नहीं होते हैं तथापि, वर्तमान मामले में इस पर विचार किया जा सकता है । वर्तमान मामले में वादी ने अपने हक को साबित करने के लिए दो दस्तावेज अर्थात् प्रदर्श पी-1 और प्रदर्श पी-2 पेश किए हैं । प्रदर्श पी-1 विक्रय विलेख है और प्रदर्श पी-2 कर संदत्त करने की रसीद है । विक्रय विलेख से यह उपदर्शित होता है कि वादी ने वाद-अनुसूची-संपत्ति तारीख 24 अप्रैल, 1989 को सी. राजप्पा नामक व्यक्ति से क्रय की थी । प्रदर्श पी-2 कर संदत्त करने की रसीद है जो कि वादी के नाम से है । प्रतिवादी ने वादी के स्वामित्व (हक़) के खंडन के लिए कोई दस्तावेज पेश नहीं किया है । उसने एक ओर स्वामित्व का दावा किया है और दूसरी ओर प्रतिकूल कब्जे का दावा किया है । अभिलेख पर का साक्ष्य स्पष्ट रूप से वादी के हक को साबित करता है । जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रतिवादी ने प्रतिकूल कब्जा साबित करने के लिए अपेक्षित संघटक साबित नहीं किए हैं और इसके बजाय प्रतिपरीक्षा में उसके द्वारा दिया गया उत्तर उसके इस कथन को नकारता है कि प्रतिकूल कब्जे के द्वारा वाद-अनुसूची-संपत्ति के ऊपर उसने अपनी हकदारी पूर्ण कर ली है । उसने यह उत्तर दिया है कि उसे वादी के पति ने वाद-अनुसूची-संपत्ति के ऊपर एक भवन सन्निर्मित करने की इजाजत दी थी और इसलिए उसने इसके ऊपर कब्जा कर लिया था । उसका यह उत्तर यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त है कि प्रतिवादी प्रतिकूल कब्जे का कथन या दावा नहीं कर सकता ।

11. यदि यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर के साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन किया जाए कि क्या वादी और प्रतिवादी के बीच मकान-मालिक और किराएदार की नातेदारी साबित हो गई है, तो यह बात भली-भांति कही जा सकती है कि विचारण न्यायालय ने ऐसी विद्यमानता को साबित होने का निष्कर्ष निकालने के लिए साक्ष्य का

ठीक ही मूल्यांकन किया है । वादी ने यह कहा है कि उसके और प्रतिवादी के बीच मौखिक करार था । अधिनियम की धारा 107 को दृष्टिगत करते हुए मौखिक करार या पट्टे के सृजन के लिए कोई वर्जन नहीं है । तथापि, जैसी कि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दलील दी गई है कि मौखिक पट्टा या करार साबित भी किया जाना चाहिए ; विद्वान् काउंसेल ने इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **ब्रज मोहन** (पूर्वोक्त) वाले मामले को उद्धृत किया है । इस निर्णय में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "20. ..... हम अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल की दलील से इस सीमा तक सहमत हैं कि विधि में ऐसी कोई अपेक्षा नहीं है कि स्थावर संपत्ति के विक्रय के लिए कोई करार या संविदा लिखित में ही होना चाहिए । तथापि, ऐसे किसी मामले में जहां वादी केवल स्थावर संपत्ति की संविदा के पालन के लिए किसी डिक्री की मांग करते हैं वहां इसे साबित करने का भार पूर्णतया वादियों पर जाता है और स्थावर संपत्ति के विक्रय के लिए किसी मौखिक करार का निष्कर्ष निकालने के लिए पक्षकारों के बीच 'एक ही बात पर एक ही अर्थ में मतैक्य' होना चाहिए । यह बात कि क्या ऐसी किसी मौखिक संविदा का निष्कर्ष निकलता है या नहीं, तथ्य का प्रश्न होगा जिसका निर्धारण प्रत्येक विशिष्ट मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किया जाना चाहिए । वादियों द्वारा यह साबित किया जाना चाहिए कि पक्षकारों के बीच स्थावर संपत्ति के विक्रय के लिए महत्वपूर्ण और मूल निबंधन मौखिक रूप से किए गए थे और कोई लिखित करार, यदि कोई हो, बाद में निष्पादित किया जाना चाहिए जिसमें ऐसे निबंधनों को निगमित करते हुए औपचारिक करार किया जाना चाहिए जो निबंधन पहले ही तय कर दिए गए हों और इन्हें मौखिक करार में सम्मिलित किया गया हो ।"

12. वादी के अनुसार उस समय सुब्बाराजू और यशोदम्मा मौजूद थे जब वादी और प्रतिवादी के बीच मौखिक करार हुआ था । अपीलार्थी के काउंसेल ने यह दलील दी है कि उपर्युक्त दोनों व्यक्तियों या कम से

कम उनमें से एक व्यक्ति की परीक्षा किए बिना यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि मौखिक करार साबित हो गया है और इसलिए उन्होंने यह दलील दी है कि विचारण न्यायालय को डी. डब्ल्यू. 1 की प्रतिपरीक्षा में पाए गए एकमात्र वाक्य के आधार पर प्रतिवादी को वादी का किराएदार अभिनिर्धारित नहीं करना चाहिए था ।

13. इस दलील में उठाए गए मुद्दे के आधार पर यह कहा गया है कि वादी सुब्बाराजू या यशोदम्मा में से किसी की परीक्षा करा सकती थी । क्या इस बात को वादी के विरुद्ध प्रतिकूल रूप से अभिनिर्धारित किया जा सकता है जहां डी. डब्ल्यू. 1 द्वारा की गई स्वीकारोक्ति के रूप में अन्य साक्ष्य मौजूद है ? क्या यह एक सामान्य (मामूली) स्वीकारोक्ति है ? यह एक भिन्न प्रश्न है ।

14. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने इस संदर्भ में कतिपय नजीरों का अवलंब लिया है । **सायगो बाई** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय को संपूर्ण साक्ष्य का परिशीलन करना चाहिए और किसी एक मामूली स्वीकारोक्ति को अन्य साक्ष्य से पृथक् करके नहीं पढ़ा जा सकता ।

15. इस न्यायालय ने **धनंजय विश्वेश्वर हेगड़े** (पूर्वोक्त) वाले मामले में यह संप्रेक्षण किया है कि जट्टी कुप्पा नायक का यह एकमात्र उत्तर कि वह एक चाय की दुकान चलाता है, एक सामान्य उत्तर के सिवाय और कुछ नहीं है और यह उत्तर उसके साक्ष्य के इस भाग पर प्रभाव नहीं डालता कि वह एक कृषि-श्रमिक है । इसी प्रकार इस न्यायालय द्वारा **मैसर्स महेश सेंटर** (पूर्वोक्त) वाले मामले में दिए गए एक अन्य विनिश्चय में भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि साक्षी के अभिसाक्ष्य में कोई सामान्य (मामूली) स्वीकारोक्ति या कथन को किसी निष्कर्ष को निकालने के लिए मानदंड या आधार नहीं बनाया जाना चाहिए और न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह किसी मामले में साक्ष्य पर संपूर्णत: विचार करे और उसका निष्कर्ष संपूर्ण मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य के संचयी प्रभाव पर आधारित होना चाहिए ।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **डी. एन. जीवाराजू**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय में इस पहलू पर और अधिक प्रकाश डाला गया है । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां किसी कथन में कोई अनवधानता पूर्ण त्रुटि पाई जाती है या ऐसी त्रुटि साशय नहीं की गई है तो यह एक मामूली वाक्य के सिवाय और कुछ नहीं है । इन सिद्धांतों के प्रकाश में यदि आगे विश्लेषण किया जाता है तो यह भली-भांति कहा जा सकता है कि यह एक सामान्य उत्तर है और इसका कोई मूल्य नहीं है तथापि, यह बात अत्यधिक महत्वपूर्ण है और इस बारे में स्पष्ट निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि क्या वाक्य या कथन को 'सामान्य' या 'मामूली' माना जा सकता है । यह संभव हो सकता है कि कोई साक्षी प्रतिपरीक्षा किए जाने के समय उससे पूछे गए महत्वपूर्ण प्रश्न को विफल करने के लिए जानबूझकर कथन कर रहा हो अथवा एक कठिन प्रश्न को समझने में भ्रमित हो रहा हो और जिसके लिए उसके उत्तर को संभवत: उसके लिए हानिकर समझा जा सकता है । अत: इस मामले में जो स्थिति है, उसमें कोई निष्कर्ष निकालने के पूर्व यह परीक्षा करने के लिए संपूर्ण साक्ष्य की गहराई से जांच की जानी चाहिए कि क्या यह संभव है कि अन्य संगत उत्तरों या कथनों से इस उत्तर को पृथक् किया जाए ; उत्तरों के अभिप्राय पर विचार किया जाना चाहिए । जहां यह पाया जाता है कि किसी साक्षी ने किसी विशिष्ट विवाद्यक या पहलू पर संगत उत्तर दिए हैं और यह असंभव है कि साक्ष्य के अन्य भाग से उत्तर की संगतता प्रत्याशित है तो क्या किसी कथन या उत्तर को मामूली वाक्य या कथन या स्वीकारोक्ति के रूप में माना जा सकता है या नहीं । ऐसा नहीं है कि प्रत्येक उत्तर को जो किसी साक्षी के विरुद्ध जाता है, एक मामूली स्वीकारोक्ति समझा जाए ; जहां ऐसा निर्वचन किया जाता है वहां प्रतिपरीक्षा का प्रयोजन विफल हो जाएगा ।

17. इस मामले में डी. डब्ल्यू. 1 की प्रतिपरीक्षा संक्षिप्त रूप से की गई है । जिसे यहां उद्धृत किया जा रहा है –

(स्थानीय भाषा-सामग्री का लोप किया गया)

---

[1] 2007 (6) ए. आई. आर. कर्नाटक आर. 344.

18. यदि संपूर्ण प्रतिपरीक्षा का मूल्यांकन किया जाए तो यह कहा जाना संभव नहीं है कि उसे इस संबंध में प्रश्न को समझने में कोई भ्रम हुआ था कि उसने किराएदारी के आरंभ में कितना किराया दिया था और उसने कब किराया देना बंद कर दिया । उसने यह स्पष्ट उत्तर दिया है कि वह आरंभ में 3,000/- रुपए किराया देता था और उसने किराया देना तब बंद कर दिया जब दूसरा भवन सन्निर्मित किया जा रहा था । यह प्रतिपरीक्षा में एक मामूली उत्तर नहीं है । इस आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह आरंभ में किराए का संदाय कर रहा था । यदि संबद्ध भवन के निर्माण के पश्चात् उसने किराया देना बंद कर दिया तो उसे यह साबित करना चाहिए कि क्या उसके और वादी के बीच कोई अन्य संव्यवहार विद्यमान हो गया था । इसके बजाय उसने प्रतिकूल कब्जे का आधार लिया है जो अस्वीकार्य है और जिसके बारे में कोई सबूत नहीं दिया गया है । अत: वादी ने यह साबित कर दिया है कि प्रतिवादी वादी का किराएदार है । ऐसे व्यक्ति की प्रतिपरीक्षा न कराया जाना जो मौखिक पट्टा किए जाने के समय मौजूद था, वादी के पक्षकथन के लिए घातक नहीं है । विचारण न्यायालय किराएदारी का निष्कर्ष निकालने में न्यायोचित है । बिन्दु सं. (i) का उत्तर सकारात्मक रूप में दिया जाता है ।

बिन्दु सं. (ii)

19. वादपत्र में पट्टा आरंभ होने की तारीख उल्लिखित नहीं है जैसी कि अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दलील दी गई है । ऐसा अकलात्मक प्रारूपण के कारण हो सकता है ; यह वादी के पक्षकथन पर प्रभाव नहीं डालता । चूंकि पट्टा मौखिक है इसलिए पर्यवसान के लिए 15 दिन की अग्रिम सूचना पर्याप्त है । विचारण न्यायालय ने पट्टे के पर्यवसान के संबंध में ठीक ही निष्कर्ष निकाला है । प्रदर्श पी-3 विधिक सूचना की प्रति है । प्रदर्श पी-4 डाक-रसीद है और प्रदर्श पी-5 और प्रदर्श पी-6 डाक-अभिस्वीकृतियां हैं । प्रतिवादी को सूचना दोनों पतों पर अर्थात् उसके वाद-अनुसूची-संपत्ति के कारबारी परिसर पर और आवासीय पते पर भेजी गई थी । प्रदर्श पी-5 से यह उपदर्शित होता है कि प्रतिवादी

द्वारा सूचना स्वयं प्राप्त की गई थी और पी-6 से यह उपदर्शित होता है कि सूचना की प्राप्ति डी. मंजुला द्वारा की गई थी । बलपूर्वक यह दलील दी गई है कि प्रतिवादी पर सूचना की किसी भी प्रकार से तामील नहीं की गई थी और प्रदर्श पी-5 पर पाए गए हस्ताक्षर प्रतिवादी के हस्ताक्षर नहीं हैं । यह दलील दी गई है कि न्यायालय को कम से कम यह निष्कर्ष निकालना चाहिए था कि विवादित हस्ताक्षरों की भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 73 के अनुसरण में स्वीकृत हस्ताक्षरों के साथ तुलना करानी चाहिए थी । यह दलील स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । मैंने प्रदर्श पी-5 पर पाए गए हस्ताक्षरों की लिखित कथन पर पाए गए हस्ताक्षरों से तुलना की है । यह हस्ताक्षर पूर्णरूप से स्वयं प्रतिवादी द्वारा किया जाना प्रतीत होता है । अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा दी गई यह संपूर्ण दलील कि सूचना की कोई तामील नहीं कराई गई थी, स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । साक्ष्य से यह उपदर्शित होता है कि किराएदारी का विधिमान्य रूप से पर्यवसान किया गया था । अत: बिन्दु सं. (ii) का उत्तर भी सकारात्मक रूप से दिया जाता है ।

20. ऊपर की गई विवेचना के आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विचारण न्यायालय ने वाद को डिक्री करने का सही निष्कर्ष निकाला है । विचारण न्यायालय के निष्कर्ष खंडित किए जाने योग्य नहीं हैं । मैं विचारण न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से सहमत हूं । अत: अपील खारिज किए जाने योग्य है । तद्नुसार अपील खर्चों सहित खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

महः.

(2019) 2 सि. नि. प. 646 गुवाहाटी

ज्योति रेखा बोरा मोहन्ता (श्रीमती)

बनाम

हरेन मोहन्ता

(2018 की वैवाहिक अपील सं. 46)

तारीख़ 30 अप्रैल, 2019

मुख्य न्यायमूर्ति ए. एस. बोपन्ना और न्यायमूर्ति अरुण कुमार गोस्वामी

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1) (i-क) और 25 – पति द्वारा पत्नी के अवैध संबंधों के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी – पत्नी द्वारा स्थायी निर्वाहिका का दावा – पत्नी के पिता द्वारा अपने दामाद के दावे का समर्थन किया जाना – पत्नी के पिता द्वारा अपनी पुत्री को समझाने का प्रयत्न किया जाना – पत्नी द्वारा अवैध संबंधों से इनकार न किया जाना – साक्ष्य से यह भी साबित होना कि पत्नी अध्यापिका के रूप में नौकरी करके अपनी स्वतंत्र आय रखती है – स्थायी निर्वाहिका के लिए पत्नी की हक़दारी – पत्नी स्थायी निर्वाहिका के लिए हक़दार नहीं है ।

हमारे समक्ष के प्रत्यर्थी द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अर्जी में मोहम्मद जाफरी हकीम नामक व्यक्ति को प्रतिवादी सं. 2 के रूप में पक्षकार बनाया गया था । इस अपील में मोहम्मद जाफरी हकीम को प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार नहीं बनाया गया है । अपीलार्थी-पत्नी ने विद्वान् जिला न्यायाधीश, नगांव द्वारा 2015 के वैवाहिक (विवाह-विच्छेद) सं. 4 में तारीख 21 जुलाई, 2017 को पारित उस निर्णय और आदेश को आक्षेपित किया है जिसके द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थी द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे आगे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 13(1) (i-क) के अधीन फाइल की गई अर्जी को मंजूर करते हुए पक्षकारों के बीच तारीख 24 जनवरी, 2000 को सम्पन्न विवाह को विघटित किया गया है, जिससे व्यथित

होकर अपीलार्थी-पत्नी ने वर्तमान अपील फाइल की है । अपील तद्नुसार निपटाते हुए,

अभिनिर्धारित – आरंभत: विवाह के विघटन के लिए अर्जी में के प्रतिवादी सं. 2 के साथ अपीलार्थी की नातेदारी से संबंधित पहलू के संबंध में पी. डब्ल्यू. 2 द्वारा दिए गए साक्ष्य पर विचार करना उचित होगा । उसके द्वारा यह कहा गया है कि न्यायालय के समक्ष का प्रत्यर्थी एक एलबम साथ लेकर अपनी पुत्रियों के साथ आया था और उसने एक व्यक्ति के साथ अपीलार्थी का फोटो चित्र दिखाया था और वह यह फोटो चित्र देखकर हतप्रभ हो गया जो प्रत्यर्थी लाया था । अपीलार्थी से पूछे जाने पर उसने अपनी माता, हमारे समक्ष के प्रत्यर्थी और अपीलार्थी की दो पुत्रियों की उपस्थिति में फोटो चित्र वाले व्यक्ति को "जाफरी" (प्रतिवादी सं. 2) के रूप में पहचानते हुए यह कहा कि वह उससे प्रेम करती है और वह उसके बिना नहीं रह सकती और वह (अपीलार्थी) उससे विवाह करना चाहती है । यह सुनकर वह हतप्रभ हो गया और उसने यह कहते हुए उसे समझाने का प्रयत्न किया कि उसके बड़े-बड़े बच्चे हैं और वह एक विवाहिता स्त्री है और उसकी दो पुत्रियां हैं और इसलिए उसका इस प्रकार का आचरण स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । तथापि, उसने यह कहते हुए इस ओर ध्यान नहीं दिया कि वह किसी भी परिस्थिति में जाफरी को नहीं छोड़ सकती अपितु घर छोड़ सकती है । उसने फोटो चित्रों को प्रदर्श 2 से 5 के रूप में प्रदर्शित किया है । पी. डब्ल्यू. 2 ने दहेज की मांग और शारीरिक हमले इत्यादि के अभिकथन के संबंध में यह कहा है कि अपीलार्थी ने दहेज की ऐसी किसी मांग के बारे में उसे कभी भी नहीं बताया और अपीलार्थी ने भी उसे इस बारे में भी कभी नहीं बताया कि उसके साथ मानसिक और शारीरिक क्रूरता बरती जाती थी । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि पी. डब्ल्यू. 2 के उपर्युक्त साक्ष्य के संबंध में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है । श्री हज़ारिका की इस दलील में कि फोटो चित्र गढ़े गए हैं, पी. डब्ल्यू. 2 के अकाट्य साक्ष्य को दृष्टिगत करते हुए कोई बल नहीं है । यद्यपि श्री हज़ारिका ने यह कहने की कोशिश की है कि अपीलार्थी और उसके पिता

के बीच अच्छे संबंध नहीं थे तथापि, लिखित कथन में नातेदारी में तनाव के संबंध में कुछ नहीं कहा गया है और इसलिए इस न्यायालय के लिए श्री हज़ारिका की इस दलील को स्वीकार करना कठिन है कि पी. डब्ल्यू. 2 पर उसके दामाद द्वारा दबाव डालने के कारण उसने अपनी पुत्री के विरुद्ध अभिसाक्ष्य दिया है । युगल (पति-पत्नी) की बड़ी पुत्री की जो कक्षा 10 में अध्ययन कर रही थी, परीक्षा किए जाने पर उसने अपनी माता के विरुद्ध अभिसाक्ष्य देते हुए पी. डब्ल्यू. 2 के कथन का पूर्णतया समर्थन किया है । तथापि, छोटी पुत्री ने जो अपीलार्थी के साथ रहकर पढ़ाई कर रही है, यह कहा है कि प्रत्यर्थी उसे तथा अपीलार्थी को मारता-पीटता था । न्यायालय ने बालक साक्षी डी. डब्ल्यू. 2 के साक्ष्य की सतर्कतापूर्वक परीक्षा की । किसी भी स्थिति में उसके साक्ष्य पर अभिलेख पर के अन्य साक्ष्य के साथ विचार किया जाना चाहिए । मामले की परिस्थितियों में न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पी. डब्ल्यू. 2 का साक्ष्य दोषरहित है और उसका साक्ष्य विवाद्यक को विनिश्चित करने के लिए निर्णायक है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक विचार किया है और अभिलेख पर की सभी सामग्री पर विचार करने पर न्यायालय को विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 3 के संबंध में अभिलिखित निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने के लिए कोई बेहतर कारण प्रतीत नहीं होता है । न्यायालय विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 6 के संबंध में निकाले गए इस निष्कर्ष से सहमत है कि चूंकि तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध विवाद्यक सं. 3 का निर्धारण करते हुए प्रत्यर्थी-पति के हक में विवाह-विच्छेद मंजूर किया गया है, इसलिए अपीलार्थी जो अध्यापक के रूप में अपनी स्वतंत्र आय रखती है, किसी स्थायी निर्वाहिका की हकदार नहीं है । उपर्युक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए न्यायालय को वर्तमान अपील में कोई बल प्रतीत नहीं होता है और तद्नुसार अपील का निपटान किया जाता है । खर्चों के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है । (पैरा 11, 12, 13, 14 और 15)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की वैवाहिक अपील सं. 46.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री टी. एच. हजारिका

प्रत्यर्थी की ओर से श्री ए. सी. सरमा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अरुण कुमार गोस्वामी ने दिया ।

न्या. गोस्वामी – अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री टी. एच. हजारिका और प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री ए. सी. सरमा को सुना गया ।

2. अपीलार्थी-पत्नी ने विद्वान् जिला न्यायाधीश, नगांव द्वारा 2015 के वैवाहिक (विवाह-विच्छेद) सं. 4 में तारीख 21 जुलाई, 2017 को पारित उस निर्णय और आदेश को आक्षेपित किया है जिसके द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थी द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे आगे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 13(1) (i-क) के अधीन फाइल की गई अर्जी को मंजूर करते हुए पक्षकारों के बीच तारीख 24 जनवरी, 2000 को सम्पन्न विवाह को विघटित किया गया है ।

3. हमारे समक्ष के प्रत्यर्थी द्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल की गई अर्जी में मोहम्मद जाफरी हकीम नामक व्यक्ति को प्रतिवादी सं. 2 के रूप में पक्षकार बनाया गया था । इस अपील में मोहम्मद जाफरी हकीम को प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार नहीं बनाया गया है ।

4. संक्षेप में अभिकथनों का क्रम जैसा कि अधिनियम की धारा 13(1) (i-क) के अधीन फाइल की गई अर्जी में उल्लिखित है, संक्षेप में इस प्रकार है – हमारे समक्ष के अपीलार्थी ने प्रतिवादी सं. 2 के साथ नातेदारी विकसित कर ली थी और एक एलबम में अपीलार्थी के प्रतिवादी सं. 2 के साथ संयुक्त फोटो पाए गए थे और पूछे जाने पर अपीलार्थी ने यह कहा था कि उसका नाम जाफरी है और वह उससे प्रेम करती है और वह तारीख 9 सितंबर, 2013 को उसके साथ शिलांग गई थी । जब प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी के पिता को फोटो चित्र दिखाया गया तब भी उसने (अपीलार्थी ने) यह दोहराया कि वह प्रतिवादी सं. 2 से प्रेम करती

है और वह उससे विवाह करना चाहती है । यह भी कहा गया है कि अपीलार्थी की वर्ष 2012 में एक अध्यापक के रूप में नियुक्ति के पूर्व पक्षकारों के बीच अच्छे संबंध रहे थे और समस्या तब आरंभ हुई जब अपीलार्थी की नियुक्ति हो गई ।

5. अपीलार्थी ने लिखित कथन फाइल किया जिसमें उसने अर्जी में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए यह कथन किया कि उसके पति ने उससे दहेज के रूप में 10,00,000/- रुपए की मांग की थी और दो पुत्रियों के जन्म के पश्चात् उसके साथ शारीरिक और मानसिक क्रूरता बरती थी । यह भी कहा गया है कि पक्षकारों के बीच नातेदारी ऐसी स्थिति में पहुंच गई है कि उनके द्वारा पति और पत्नी के रूप में साथ रहना संभव नहीं होगा और इसलिए पत्नी ने इस शर्त के अध्यधीन कि पति द्वारा निर्वाहिका के रूप में 20,00,000/- लाख रुपए संदत्त किए जाएंगे, अर्जीदार के साथ विवाह-विच्छेद करने का विनिश्चय किया । प्रतिवादी सं. 2 ने भी यह कहते हुए लिखित कथन फाइल किया कि उससे मामले का कोई संबंध नहीं है और उसे अनावश्यक रूप से पक्षकार बनाया गया है ।

6. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए :-

(i) क्या वाद के लिए कोई वाद हेतुक उत्पन्न हुआ है ?

(ii) क्या वाद अपने वर्तमान के प्ररूप में ग्रहण किए जाने योग्य है ?

(iii) क्या प्रत्यर्थी सं. 1 श्रीमती ज्योति रेखा बोरा ने प्रत्यर्थी सं. 2 मोहम्मद जाफरी हकीम के साथ अवैध संबंध बना लिए हैं ?

(iv) क्या प्रत्यर्थी सं. 1 ने समुचित कारणों के बिना अपनी ससुराल त्यक्त कर दी है ?

(v) क्या अर्जीदार यथा दावा किए गए अनुतोष को प्राप्त करने का हकदार है ?

(vi) क्या प्रत्यर्थी सं. 1 श्रीमती ज्योति रेखा बोरा स्थायी

निर्वाहिका पाने की हकदार है ? यदि हां तो ऐसी निर्वाहिका का परिमाण क्या होगा ?

(vii) पक्षकार किस अनुतोष/किन अनुतोषों के हकदार हैं ?

7. हमारे समक्ष के प्रत्यर्थी ने निचले न्यायालय में की जा रही कार्यवाहियों के दौरान पी. डब्ल्यू. 1 के रूप में अपना साक्ष्य पेश किया था । प्रत्यर्थी के श्वसुर अर्थात् हमारे समक्ष के अपीलार्थी के पिता ने पी. डब्ल्यू. 2 के रूप में अभिसाक्ष्य दिया है और पति-पत्नी दोनों की बड़ी पुत्री ने पी. डब्ल्यू. 3 के रूप में साक्ष्य दिया है । हमारे समक्ष के अपीलार्थी की ओर से दो साक्षियों की अर्थात् डी. डब्ल्यू. 1 के रूप में स्वयं की और डी. डब्ल्यू. 2 के रूप में छोटी पुत्री की परीक्षा कराई गई है । प्रतिवादी सं. 2 ने कोई साक्ष्य पेश नहीं किया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह मत व्यक्त करते हुए विवाद्यक सं. 3 विनिश्चित किया कि हमारे समक्ष के अपीलार्थी ने अर्जी में के प्रतिवादी सं. 2 के साथ अवैध संबंध बना लिए हैं और तद्नुसार यह निष्कर्ष निकाला कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में वह स्थायी निर्वाहिका की हकदार नहीं है ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री हजारिका ने दलीलों के दौरान केवल विवाद्यक सं. 3 और 4 के बारे में आक्षेप किए हैं । उन्होंने यह दलील दी है कि निष्कर्ष अनुमानों और संकल्पनाओं के आधार पर निकाले गए हैं और विवाह के विघटन के लिए यह साबित करने वाला कोई स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी के प्रतिवादी सं. 2 के साथ अवैध संबंध थे । इस परिस्थिति में उन्होंने यह दलील दी है कि विवाद्यक सं. 3 के बारे में अभिलिखित निष्कर्ष किसी भी प्रकार से विधि में स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । उन्होंने यह दलील दी है कि यद्यपि अपीलार्थी ने विवाह-विच्छेद की मंजूरी के लिए कथन नहीं किए हैं और यदि मताभिव्यक्ति और निष्कर्ष को जो उसके विरुद्ध अभिलिखित किया गया है, कायम रखा जाता है तो इससे उसे नुकसान पहुंचेगा क्योंकि पक्षकारों के बीच कतिपय कार्यवाहियां लंबित हैं । उनके द्वारा यह भी दलील दी गई है कि चूंकि अपीलार्थी के पति ने विवाह के

विघटन की ईप्सा की थी इसलिए न्यायालय को अपीलार्थी के हक में स्थायी निर्वाहिका मंजूर करनी चाहिए ।

9. इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल श्री सरमा ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन करते हुए यह दलील दी है कि यदि हमारे समक्ष के अपीलार्थी के पिता के साक्ष्य का परिशीलन किया जाए तो उससे स्वत: यह उपदर्शित होता है कि अपीलार्थी के विरुद्ध किया गया यह अभिकथन कि उसने प्रतिवादी सं. 2 के साथ अवैध संबंध बना लिए हैं, विवाह के विघटन के लिए अर्जी पूर्ण रूप से साबित हो जाती है । इस संदर्भ में उन्होंने यह दलील दी है कि अपीलार्थी के पिता ने हमारे समक्ष के प्रत्यर्थी के हक में अभिसाक्ष्य दिया था न कि स्वयं अपनी पुत्री के समर्थन में । अपीलार्थी के पिता ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि यद्यपि उसने अपीलार्थी के काउंसेल से बात की थी तथापि, अपीलार्थी ने यह कहते हुए उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया कि वह प्रतिवादी सं. 2 से प्रेम करती है और उससे विवाह करना चाहती है । अभिलेख पर इस साक्ष्य को दृष्टिगत करते हुए यह दलील दी गई है कि विवाद्यक सं. 3 के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क दोषपूर्ण नहीं कहे जा सकते । उन्होंने यह दलील दी है कि जब यह साबित हो गया है कि अपीलार्थी ने अवैध संबंध बना लिए थे तो स्थायी निर्वाहिका मंजूर करने से इनकार न्यायोचित है ।

10. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों की दलीलों पर विचार किया और अभिलेख पर के साक्ष्य की परीक्षा की ।

11. आरंभत: विवाह के विघटन के लिए अर्जी में के प्रतिवादी सं. 2 के साथ अपीलार्थी की नातेदारी से संबंधित पहलू के संबंध में पी. डब्ल्यू. 2 द्वारा दिए गए साक्ष्य पर विचार करना उचित होगा । उसके द्वारा यह कहा गया है कि हमारे समक्ष का प्रत्यर्थी एक एलबम साथ लेकर अपनी पुत्रियों के साथ आया था और उसने एक व्यक्ति के साथ अपीलार्थी का फोटो चित्र दिखाया था और वह यह फोटो चित्र देखकर हतप्रभ हो गया जो प्रत्यर्थी लाया था । अपीलार्थी से पूछे जाने पर उसने अपनी माता, हमारे समक्ष के प्रत्यर्थी और अपीलार्थी की दो पुत्रियों की उपस्थिति में

फोटो चित्र वाले व्यक्ति को "जाफरी" (प्रतिवादी सं. 2) के रूप में पहचानते हुए यह कहा कि वह उससे प्रेम करती है और वह उसके बिना नहीं रह सकती और वह (अपीलार्थी) उससे विवाह करना चाहती है । यह सुनकर वह हतप्रभ हो गया और उसने यह कहते हुए उसे समझाने का प्रयत्न किया कि उसके बड़े-बड़े बच्चे हैं और वह एक विवाहिता स्त्री है और उसकी दो पुत्रियां हैं और इसलिए उसका इस प्रकार का आचरण स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है । तथापि, उसने यह कहते हुए इस ओर ध्यान नहीं दिया कि वह किसी भी परिस्थिति में जाफरी को नहीं छोड़ सकती अपितु घर छोड़ सकती है । उसने फोटो चित्रों को प्रदर्श 2 से 5 के रूप में प्रदर्शित किया है । पी. डब्ल्यू. 2 ने दहेज की मांग और शारीरिक हमले इत्यादि के अभिकथन के संबंध में यह कहा है कि अपीलार्थी ने दहेज की ऐसी किसी मांग के बारे में उसे कभी भी नहीं बताया और अपीलार्थी ने भी उसे इस बारे में भी कभी नहीं बताया कि उसके साथ मानसिक और शारीरिक क्रूरता बरती जाती थी । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि पी. डब्ल्यू. 2 के उपर्युक्त साक्ष्य के संबंध में कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है ।

12. श्री हज़ारिका की इस दलील में कि फोटो-चित्र गढ़े गए हैं, पी. डब्ल्यू. 2 के अकाट्य साक्ष्य को दृष्टिगत करते हुए कोई बल नहीं है । यद्यपि श्री हज़ारिका ने यह कहने की कोशिश की है कि अपीलार्थी और उसके पिता के बीच अच्छे संबंध नहीं थे तथापि, लिखित कथन में नातेदारी में तनाव के संबंध में कुछ नहीं कहा गया है और इसलिए इस न्यायालय के लिए श्री हज़ारिका की इस दलील को स्वीकार करना कठिन है कि पी. डब्ल्यू. 2 पर उसके दामाद द्वारा दबाव डालने के कारण उसने अपनी पुत्री के विरुद्ध अभिसाक्ष्य दिया है ।

13. युगल (पति-पत्नी) की बड़ी पुत्री की जो कक्षा 10 में अध्ययन कर रही थी, परीक्षा किए जाने पर उसने अपनी माता के विरुद्ध अभिसाक्ष्य देते हुए पी. डब्ल्यू. 2 के कथन का पूर्णतया समर्थन किया है । तथापि, छोटी पुत्री ने जो अपीलार्थी के साथ रहकर पढ़ाई कर रही है, यह कहा है कि प्रत्यर्थी उसे तथा अपीलार्थी को मारता-पीटता था । हमने

बालक साक्षी डी. डब्ल्यू. 2 के साक्ष्य की सतर्कतापूर्वक परीक्षा की । किसी भी स्थिति में उसके साक्ष्य पर अभिलेख पर के अन्य साक्ष्य के साथ विचार किया जाना चाहिए । मामले की परिस्थितियों में हमें यह प्रतीत होता है कि पी. डब्ल्यू. 2 का साक्ष्य दोषरहित है और उसका साक्ष्य विवाद्यक को विनिश्चित करने के लिए निर्णायक है ।

14. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विस्तारपूर्वक विचार किया है और अभिलेख पर की सभी सामग्री पर विचार करने पर हमें विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 3 के संबंध में अभिलिखित निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने के लिए कोई बेहतर कारण प्रतीत नहीं होता है । हम विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 6 के संबंध में निकाले गए इस निष्कर्ष से सहमत हैं कि चूंकि तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध विवाद्यक सं. 3 का निर्धारण करते हुए प्रत्यर्थी-पति के हक में विवाह-विच्छेद मंजूर किया गया है, इसलिए अपीलार्थी जो अध्यापक के रूप में अपनी स्वतंत्र आय रखती है, किसी स्थायी निर्वाहिका की हकदार नहीं है ।

15. उपर्युक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए हमें वर्तमान अपील में कोई बल प्रतीत नहीं होता है और तद्नुसार अपील का निपटान किया जाता है । खर्चों के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

16. कार्यालय अभिलेख निचले न्यायालय को तुरन्त वापस भेजे ।

अपील का तद्नुसार निपटान किया गया ।

मह.

अभिलाष कुमार गुप्ता

बनाम

श्रीमती श्वेता बलदेव गुप्ता

(2015 की प्रथम अपील सं. 27)

तारीख 10 सितम्बर, 2018

न्यायमूर्ति मनिन्दर मोहन श्रीवास्तव और न्यायमूर्ति गौतम चौधरी

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1) (इक) और (इख) – विवाह-विच्छेद और अभित्यजन – पत्नी द्वारा अभिकथित रूप से पति के विरुद्ध क्रूरता का व्यवहार करने और बिना किसी कारण से पत्नी द्वारा पति को अभित्यजित करने के कारण पति क्रूरता और अभित्यजन दोनों के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री प्राप्त करने का हकदार है ।

अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिवचन करते हुए क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की मंजूरी के लिए एक अर्जी फाइल की थी कि जबलपुर में तारीख 17 जून, 2012 को पक्षकारों का विवाह संपन्न होने के पश्चात् से ही प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसके कुटुंब के सदस्यों के साथ क्रूरता बरती है । अर्जी में यह प्रकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी, अपीलार्थी और उसकी बीमार माता, नातेदारों, मित्रों के साथ दुर्व्यवहार करती है और अपमान करती है तथा क्रूरता बरतती है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी घर का कार्य कोई नहीं करती है और सतत् रूप से अपीलार्थी पर यह व्यंग्य करती है कि वह गरीब और भिखारी है और प्रत्यर्थी एक धनी परिवार से है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी यह मिथ्या अभिकथन करते हुए उसे सदैव तंग और परेशान करती है कि अपीलार्थी एक नपुंसक व्यक्ति है और लैंगिक मैथुन करने में समर्थ नहीं है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी,

अपीलार्थी की बीमार माता को तंग और परेशान करती है । प्रत्यर्थी अक्सर झगड़ा करती है । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी की माता की आंखों में मिर्ची-पाउडर झोंक दिया था और उसने अपीलार्थी की माता के साथ हर प्रकार से क्रूरता बरती थी । यह भी प्रकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी चरित्रहीन है और बाहरी व्यक्तियों के साथ अक्सर इश्कबाज़ी करती है और अपीलार्थी के विरुद्ध सदैव आरोप लगाती थी और उसने मैथुन के दौरान अपीलार्थी के विरुद्ध नपुंसक होने का आरोप लगाया जिससे कि अपीलार्थी को गंभीर व्यथा पहुंची । अंततः तारीख 4 अगस्त, 2012 को प्रत्यर्थी अपने भाई के साथ अपने मायके चली गई और उसके पश्चात् कभी भी वापस नहीं आई । यह भी अभिकथन किया गया था कि वह अपने साथ अपने सोने और चांदी के आभूषण, कैमरा और मोबाइल ले गई । यह भी अभिकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसकी माता के विरुद्ध क्रूरता का अभिकथन करते हुए पुलिस थाने में एक मिथ्या रिपोर्ट दर्ज कराई जो भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दर्ज की गई और वह इस मामले में जमानत पर है । यह भी अभिकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी ने घरेलू हिंसा अधिनियम के अधीन भी एक मिथ्या मामला दर्ज कराया और इस प्रकार प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी का जीवन दुरुह (कठिन) बना दिया है । यह अपील कुटुंब न्यायालय, कटघोरा, जिला कोरबा द्वारा 2014 के सिविल वाद सं. 77-ए में तारीख 7 जनवरी, 2015 को पारित उस निर्णय और डिक्री को आक्षेपित करते हुए फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर की है । उच्च न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी द्वारा वादपत्र में यह अभिकथन करते हुए विनिर्दिष्ट अभिवचन किया गया है कि प्रत्यर्थी विवाह होने के पश्चात् से ही अपीलार्थी और उसके कुटुंब के साथ दुव्यर्वहार कर रही थी । यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी दुर्व्यवहार करते हुए न केवल अपीलार्थी और उसकी माता तथा कुटुंब के बुजुर्ग सदस्यों को सम्यक् सम्मान नहीं देती थी अपितु अपीलार्थी और उसकी माता का अपमान भी करती थी

और घरेलू कार्यों में कोई दिलचस्पी नहीं लेती थी और अपीलार्थी के विरुद्ध यह टिप्पण करती थी कि वह भिखारी है और नपुंसक है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी, अपीलार्थी और उसकी माता के साथ प्राय: झगड़ा करती थी और 'मारपीट' करती थी । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी की माता की आंखों में मिर्ची-पाउडर झोंक दिया था और शारीरिक हमला भी किया था । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी खुले तौर पर अपीलार्थी को भिखारी कहकर चिढ़ाती थी । विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिवचन किया गया था कि रात्रि में साथ-साथ सोने के दौरान प्रत्यर्थी अपीलार्थी के विरुद्ध गंभीर आरोप लगाती थी और उसे यह कहकर चिढ़ाती थी कि वह एक नपुंसक व्यक्ति है जिससे अपीलार्थी को गंभीर व्यथा होती थी और अपीलार्थी रोने लगता था । प्रत्यर्थी इस रीति में सतत् रूप से अपीलार्थी को तंग करती थी और उसके साथ क्रूरता बरतती थी । यह भी विनिर्दिष्ट रूप से अभिवचन किया गया है कि प्रत्यर्थी उच्चश्रृंखल स्वभाव की महिला है और प्राय: अन्य व्यक्तियों के साथ मित्रता कर लेती है और अंतत: तारीख 4 अगस्त, 2012 को अपनी ससुराल छोड़कर चली गई और उसके पश्चात् कभी वापस नहीं आई और बाद में उसने अपीलार्थी और उसकी माता के विरुद्ध आपराधिक मामले दर्ज कराए । अपीलार्थी ने स्वयं का और अन्य तीन साक्षियों का प्रभावी साक्ष्य पेश करके अपने पक्षकथन को साबित किया है । सभी अभिकथनों में जो अभिवचनों में किए गए हैं और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 18, नियम 4 के अधीन फाइल किए गए शपथपत्र में विनिर्दिष्ट रूप से इस बारे में कथन किए गए हैं जिसमें व्यंग्य करने का अभिकथन और अपीलार्थी को प्राय: एक नपुंसक व्यक्ति होने का अभिकथन, झगड़ा करने और अपीलार्थी की माता से झगड़ा करने और तंग करने तथा उनकी आंखों में मिर्ची-पाउडर झोंकने के अभिकथन सम्मिलित हैं । समान रूप से अन्य तीन साक्षियों के साक्ष्य में भी उपर्युक्त कार्यों और घटनाओं के संबंध में स्पष्ट रूप से कहा गया है । यह विनिर्दिष्ट रूप से अभिवचन करते हुए उसे साबित किया गया है कि प्रत्यर्थी तारीख 4 अगस्त, 2012 को अपनी ससुराल छोड़कर चली

गई थी । ये अभिवचन और साक्ष्य अखंडित रहे हैं । यह साबित करना प्रत्यर्थी का कार्य था कि उसके पास तारीख 4 अगस्त, 2012 से अपने पति के साथ न रहने के लिए युक्तियुक्त कारण मौजूद था । अत: प्रत्यर्थी द्वारा किए गए उपर्युक्त अभिवचनों और पेश किए गए अखंडनीय साक्ष्य से क्रूरता तथा अभित्यजन के दोनों ही अभिकथन पूर्ण रूप से साबित होते हैं और इसलिए अपीलार्थी क्रूरता और अभित्यजन के दोनों ही आधारों पर डिक्री पाने का हकदार है । न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13क के अधीन अपनी विवेकाधिकार-संबंधी अधिकारिता के प्रयोग में विवाह-विच्छेद की डिक्री मंजूर करने के बजाय न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर की है । निस्संदेह, उपर्युक्त उपबंध न्यायालय को धारा 13 [उपधारा (1) के खंड (ii), (vi), (vii)] में उल्लिखित आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की मंजूरी अथवा न्यायिक पृथक्करण की डिक्री की मंजूरी के लिए विवेकाधिकार प्रदत्त करता है तथापि, उक्त विवेकाधिकार का प्रयोग पूर्ण सतर्कता के साथ किया जाना अपेक्षित है न कि तकनीकी रीति में । प्रत्यर्थी के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही की गई थी । अभिलेख पर के अभिवचन और साक्ष्य अखंडनीय रहे हैं जो न केवल क्रूरता को साबित करते हैं अपितु अभित्यजन को भी साबित करते हैं । अत: विचारण न्यायालय के समक्ष सामान्य नियम से विचलन करने और हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13क के अधीन प्रदत्त विवेकाधिकार का आश्रय लेकर उसका प्रयोग करने के लिए किसी भी प्रकार की कोई सामग्री और परिस्थिति मौजूद नहीं थी । (पैरा 11, 12, 13, 14 और 15)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की प्रथम अपील सं. 27.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	श्री उत्तम पाण्डेय
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री वेदान्त भिलोन्डे और पी. आर. पाटनकर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मनिन्दर मोहन श्रीवास्तव ने दिया ।

न्या. श्रीवास्तव – यह अपील कुटुंब न्यायालय, कटघोरा, जिला कोरबा द्वारा 2014 के सिविल वाद सं. 77-ए में तारीख 7 जनवरी, 2015 को पारित उस निर्णय और डिक्री को आक्षेपित करते फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर की है ।

2. अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिवचन करते हुए क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की मंजूरी के लिए एक अर्जी फाइल की थी कि जबलपुर में तारीख 17 जून, 2012 को पक्षकारों का विवाह संपन्न होने के पश्चात् से ही प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसके कुटुंब के सदस्यों के साथ क्रूरता बरती है । अर्जी में यह प्रकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी, अपीलार्थी और उसकी बीमार माता, नातेदारों, मित्रों के साथ दुर्व्यवहार करती है और अपमान करती है तथा क्रूरता बरतती है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी घर का कार्य कोई नहीं करती है और सतत् रूप से अपीलार्थी पर यह व्यंग्य करती है कि वह गरीब और भिखारी है और प्रत्यर्थी एक धनी परिवार से है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी यह मिथ्या अभिकथन करते हुए उसे सदैव तंग और परेशान करती है कि अपीलार्थी एक नपुंसक व्यक्ति है और लैंगिक मैथुन करने में समर्थ नहीं है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी, अपीलार्थी की बीमार माता को तंग और परेशान करती है । प्रत्यर्थी अक्सर झगड़ा करती है । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी की माता की आंखों में मिर्ची-पाउडर झोंक दिया था और उसने अपीलार्थी की माता के साथ हर प्रकार से क्रूरता बरती थी । यह भी प्रकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी चरित्रहीन है और बाहरी व्यक्तियों के साथ अक्सर इश्कबाज़ी करती है और अपीलार्थी के विरुद्ध सदैव आरोप लगाती थी और उसने मैथुन के दौरान अपीलार्थी के विरुद्ध नपुंसक होने का आरोप लगाया जिससे कि अपीलार्थी को गंभीर व्यथा पहुंची । अंततः तारीख 4 अगस्त, 2012 को प्रत्यर्थी अपने भाई के साथ अपने मायके चली गई और उसके पश्चात् कभी भी वापस नहीं आई । यह भी अभिकथन किया गया था कि वह अपने साथ अपने सोने और चांदी के आभूषण, कैमरा और मोबाइल ले

गई । यह भी अभिकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी और उसकी माता के विरुद्ध क्रूरता का अभिकथन करते हुए पुलिस थाने में एक मिथ्या रिपोर्ट दर्ज कराई जो भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के लिए दर्ज की गई और वह इस मामले में जमानत पर है । यह भी अभिकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी ने घरेलू हिंसा अधिनियम के अधीन भी एक मिथ्या मामला दर्ज कराया और इस प्रकार प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी का जीवन दुरुह (कठिन) बना दिया है ।

3. प्रत्यर्थी के उपस्थित न होने के कारण मामला एक-पक्षीय रूप से सुना गया । विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने अपीलार्थी-वादी अभिलाष कुमार गुप्ता का साक्ष्य पी. डब्ल्यू. 1 के रूप में, अपीलार्थी की माता श्रीमती लक्ष्मी देवी गुप्ता का साक्ष्य पी. डब्ल्यू. 2 के रूप में, अपीलार्थी के भाई इन्द्रचंद्र गुप्ता का साक्ष्य पी. डब्ल्यू. 3 के रूप में और अपीलार्थी के मित्र संजीव शुक्ला का साक्ष्य पी. डब्ल्यू. 4 के रूप में अभिलिखित किया ।

4. तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पति और पत्नी के बीच मामूली और तुच्छ झगड़ों को हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे आगे संक्षेप में '1955 का अधिनियम' कहा गया है) की धारा 13 के अधीन यथा अभिप्रेत 'क्रूरता' गठित करने के रूप में नहीं माना जा सकता । इसके अतिरिक्त विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि पत्नी का पृथक् रहने का साक्ष्य मौजूद है क्योंकि अपीलार्थी ने अपनी पत्नी को वापस लाने के लिए गंभीर प्रयत्न नहीं किया है, तथापि, यह नहीं कहा जा सकता है कि यह एक संपूर्ण अभित्यजन का मामला है ।

5. आश्चर्यजनक रूप से उपर्युक्त निष्कर्ष के साथ विद्वान् विचारण न्यायालय ने 1955 के अधिनियम की धारा 13क के अधीन अपने विवेकाधिकार का अवलंब लेते हुए न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर कर दी ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि चूंकि अभिवचन और अकाट्य साक्ष्य पूर्ण रूप से अखंडनीय रहे हैं क्योंकि प्रत्यर्थी के अनुपस्थित रहने के कारण एक-पक्षीय कार्यवाही की गई है

इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय विधि के अधीन अपीलार्थी के हक में यह निष्कर्ष निकालने के लिए आबद्ध था कि अपीलार्थी के साथ न केवल क्रूरता बरती गई थी अपितु प्रत्यर्थी-पत्नी ने किसी युक्तियुक्त के कारण के बिना अपीलार्थी का अभित्यजन भी कर दिया था । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि यद्यपि अत्यंत गूढ़ निष्कर्ष अभिलिखित किया गया है तथापि, अखंडनीय अभिवचनों और साक्ष्य के आधार पर न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर की गई है । अपीलार्थी क्रूरता और अभित्यजन के दोनों आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए हकदार है ।

7. प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने उक्त दलीलों का विरोध करते हुए यह निवेदन किया है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13क के अधीन कुटुंब न्यायालय को उपलब्ध न्यायिक विवेकाधिकार पर आधारित है । विचारण न्यायालय ने यह पाया है कि पति और पत्नी के बीच मामूली और तुच्छ प्रकृति के झगड़े होते रहते हैं जिसे क्रूरता के रूप में नहीं माना जा सकता और अपीलार्थी ने अपनी पत्नी को अपने घर पर लाने के लिए गंभीर प्रयास नहीं किया था तथापि, न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर कर दी ।

8. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

9. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों से इस बारे में पूछा कि क्या प्रत्यर्थी ने एक-पक्षीय निर्णय और डिक्री को आक्षेपित किया है । पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा यह बताया गया है कि यद्यपि कुटुंब न्यायालय के समक्ष एक-पक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए एक आवेदन फाइल किया गया था तथापि, अंततः आवेदन खारिज कर दिया गया । हमने यह भी पूछा कि क्या प्रत्यर्थी ने एक-पक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिए आवेदन खारिज करने के विरुद्ध कोई अपील फाइल की है । इस बिन्दु पर भी हमें यह बताया गया है कि प्रत्यर्थी ने इस न्यायालय के समक्ष कोई अपील फाइल नहीं की है ।

10. वादी द्वारा किए गए अभिवचन और पेश किया गया साक्ष्य अखंडित रहा है । हमारे द्वारा यह देखना आवश्यक है कि क्या वादी ने क्रूरता और अभित्यजन के समर्थन में अभिवचन किए हैं और क्या उसने इन अभिवचनों को साबित करने के लिए साक्ष्य पेश किया है ।

11. अपीलार्थी द्वारा वादपत्र में यह अभिकथन करते हुए विनिर्दिष्ट अभिवचन किया गया है कि प्रत्यर्थी विवाह होने के पश्चात् से ही अपीलार्थी और उसके कुटुंब के साथ दुव्यर्वहार कर रही थी । यह प्रकथन किया गया है कि प्रत्यर्थी दुर्व्यवहार करते हुए न केवल अपीलार्थी और उसकी माता तथा कुटुंब के बुजुर्ग सदस्यों को सम्यक् सम्मान नहीं देती थी अपितु अपीलार्थी और उसकी माता का अपमान भी करती थी और घरेलू कार्यों में कोई दिलचस्पी नहीं लेती थी और अपीलार्थी के विरुद्ध यह टिप्पण करती थी कि वह भिखारी है और नपुंसक है । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी, अपीलार्थी और उसकी माता के साथ प्राय: झगड़ा करती थी और 'मारपीट' करती थी । प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी की माता की आंखों में मिर्ची-पाउडर झोंक दिया था और शारीरिक हमला भी किया था । यह भी अभिवचन किया गया था कि प्रत्यर्थी खुले तौर पर अपीलार्थी को भिखारी कहकर चिढ़ाती थी । विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिवचन किया गया था कि रात्रि में साथ-साथ सोने के दौरान प्रत्यर्थी अपीलार्थी के विरुद्ध गंभीर आरोप लगाती थी और उसे यह कहकर चिढ़ाती थी कि वह एक नपुंसक व्यक्ति है जिससे अपीलार्थी को गंभीर व्यथा होती थी और अपीलार्थी रोने लगता था । प्रत्यर्थी इस रीति में सतत् रूप से अपीलार्थी को तंग करती थी और उसके साथ क्रूरता बरतती थी । यह भी विनिर्दिष्ट रूप से अभिवचन किया गया है कि प्रत्यर्थी उच्चश्रृंखल स्वभाव की महिला है और प्राय: अन्य व्यक्तियों के साथ मित्रता कर लेती है और अंतत: तारीख 4 अगस्त, 2012 को अपनी ससुराल छोड़कर चली गई और उसके पश्चात् कभी वापस नहीं आई और बाद में उसने अपीलार्थी और उसकी माता के विरुद्ध आपराधिक मामले दर्ज कराए ।

12. अपीलार्थी ने स्वयं का और अन्य तीन साक्षियों का प्रभावी साक्ष्य पेश करके अपने पक्षकथन को साबित किया है । सभी अभिकथनों में जो अभिवचनों में किए गए हैं और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 18, नियम 4 के अधीन फाइल किए गए शपथपत्र में विनिर्दिष्ट रूप से इस बारे में कथन किए गए हैं जिसमें व्यंग्य करने का अभिकथन और अपीलार्थी को प्राय: एक नपुंसक व्यक्ति होने का अभिकथन, झगड़ा करने और अपीलार्थी की माता से झगड़ा करने और तंग करने तथा उनकी आंखों में मिर्ची-पाउडर झोंकने के अभिकथन सम्मिलित हैं । समान रूप से अन्य तीन साक्षियों के साक्ष्य में भी उपर्युक्त कार्यों और घटनाओं के संबंध में स्पष्ट रूप से कहा गया है ।

13. यह विनिर्दिष्ट रूप से अभिवचन करते हुए उसे साबित किया गया है कि प्रत्यर्थी तारीख 4 अगस्त, 2012 को अपनी ससुराल छोड़कर चली गई थी । ये अभिवचन और साक्ष्य अखंडित रहे हैं । यह साबित करना प्रत्यर्थी का कार्य था कि उसके पास तारीख 4 अगस्त, 2012 से अपने पति के साथ न रहने के लिए युक्तियुक्त कारण मौजूद था ।

14. अत: प्रत्यर्थी द्वारा किए गए उपर्युक्त अभिवचनों और पेश किए गए अखंडनीय साक्ष्य से क्रूरता तथा अभित्यजन के दोनों ही अभिकथन पूर्ण रूप से साबित होते हैं और इसलिए अपीलार्थी क्रूरता और अभित्यजन के दोनों ही आधारों पर डिक्री पाने का हकदार है ।

15. हमें यह प्रतीत होता है कि विद्वान् कुटुंब न्यायालय ने हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13क के अधीन अपनी विवेकाधिकार-संबंधी अधिकारिता के प्रयोग में विवाह-विच्छेद की डिक्री मंजूर करने के बजाय न्यायिक पृथक्करण की डिक्री मंजूर की है । हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13-क इस प्रकार है :-

> "13क. **विवाह-विच्छेद की कार्यवाहियों में प्रत्यर्थी को वैकल्पिक अनुतोष** - इस अधिनियम के अधीन किसी कार्यवाही में विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए अर्जी पर, उस दशा को छोड़कर जिसमें अर्जी धारा 13 की उपधारा (i) के खंड (ii),

(vi) और (vii) में वर्णित आधारों पर है, यदि न्यायालय मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह न्यायसंगत समझता है तो, वह विवाह-विच्छेद की डिक्री के बजाय न्यायिक पृथक्करण के लिए डिक्री पारित कर सकेगा ।"

निस्संदेह, उपर्युक्त उपबंध न्यायालय को धारा 13 [उपधारा (1) के खंड (ii), (vi), (vii)] में उल्लिखित आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री की मंजूरी अथवा न्यायिक पृथक्करण की डिक्री की मंजूरी के लिए विवेकाधिकार प्रदत्त करता है तथापि, उक्त विवेकाधिकार का प्रयोग पूर्ण सतर्कता के साथ किया जाना अपेक्षित है न कि तकनीकी रीति में । प्रत्यर्थी के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही की गई थी । अभिलेख पर के अभिवचन और साक्ष्य अखंडनीय रहे हैं जो न केवल क्रूरता को साबित करते हैं अपितु अभित्यजन को भी साबित करते हैं । अत: विचारण न्यायालय के समक्ष सामान्य नियम से विचलन करने और हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13क के अधीन प्रदत्त विवेकाधिकार का आश्रय लेकर उसका प्रयोग करने के लिए किसी भी प्रकार की कोई सामग्री और परिस्थिति मौजूद नहीं थी ।

16. परिणामत: हम आक्षेपित निर्णय और डिक्री को इस रीति में उपांतरित करते हैं कि अपीलार्थी क्रूरता और अभित्यजन के दोनों आधारों पर विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए हकदार पाया जाता है । तद्नुसार अपील मंजूर की जाती है । तद्नुसार अपीली डिक्री तैयार की जाए ।

अपील मंजूर की गई ।

मह./पा.

(2019) 2 सि. नि. प. 665 छत्तीसगढ़

शीतल घोष

बनाम

गणेश चन्द जैन

(2013 की प्रथम अपील सं. 97)

तारीख 9 अप्रैल, 2019

कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार मिश्रा

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – विक्रय करार का विनिर्दिष्ट अनुपालन – क्रेता निधि की अनुपलब्धता और भुगतान करने की अपनी क्षमता के बारे में कोई साक्ष्य पेश करने में असफल रहा और क्रेता शेष रकम की भुगतान के लिए भी क्रेता से नहीं कहा इसलिए क्रेता संपत्ति को खरीदने की इच्छा रखने का कोई सबूत पेश न करने के कारण वह विनिर्दिष्ट अनुपालन के अनुतोष का हकदार नहीं है ।

वाद-संपत्ति में 2400 वर्ग फुट की भूमि और शिक्षा नगर, चरौड़ा, तहसील पाटन जिला दुर्ग में स्थित खसरा सं. 267/325 में सन्निर्मित मकान सम्मिलित है । वादपत्र में किए गए अभिकथनों के अनुसार प्रतिवादी ने वादी के हक में तारीख 15 नवंबर, 2007 को 9,00,000/- रुपए के बदले वाद-संपत्ति के विक्रय के लिए एक करार निष्पादित किया था । उक्त तारीख को निष्पादित यह करार प्रदर्श पी-1 है । करार में इस बात पर सहमति की गई थी कि 4,00,000/- रुपए की शेष धनराशि तारीख 30 नवंबर, 2007 को संदत्त की जाएगी और वादी द्वारा शेष 4,00,000/- रुपए की धनराशि गृह ऋण प्राप्त करने के बाद संदत्त की जाएगी । प्रतिवादी विक्रय विलेख के निष्पादन के पूर्व उक्त मकान में रहने वाले किराएदार को बेदखल करेगा । यह भी कहा गया था कि वादी ने तारीख 30 नवंबर, 2007 को 4,00,000/- रुपए का एक खाता अदाता मांगपत्र तैयार कराया और वह प्रतिवादी के मकान पर गया । तथापि,

प्रतिवादी की अनुपस्थिति में उसकी पत्नी को यह सूचना देते हुए मांगपत्र की एक फोटो प्रति दी गई थी कि उसके पति के आने पर वह मांगपत्र प्राप्त कर ले और दस्तावेजों को तैयार करा ले जिससे कि वादी गृह ऋण के लिए आवेदन कर सके । प्रतिवादी 5 दिसंबर, 2007 को वादी के मकान पर आया और उसने यह बताया कि वह दस्तावेज लाना भूल गया है । वादी ने करार की बाबत एक लोक सूचना प्रकाशित कराई तथापि, प्रतिवादी ने संविदा/करार से इनकार करते हुए लोक सूचना का उत्तर दिया जिसके पश्चात् वादी ने तारीख 14 दिसंबर, 2007 को प्रतिवादी के वकील पर एक प्रत्युत्तर की तामील कराई । प्रतिवादी ने वादी को यह भी सूचित किया कि करार रद्द हो गया है । यह भी कथन किया गया था कि वादी ने प्रतिवादी से पुन: यह अनुरोध किया कि वह ऋण लिए बिना संपत्ति को क्रय करने के लिए तैयार है तथापि, प्रतिवादी ने विक्रय विलेख का निष्पादन करने से पुन: इनकार कर दिया । अत: वादी संविदा के अपने भाग के पालन के लिए तैयार और रजामंद है और इसलिए वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री पारित करने का अनुरोध किया । प्रतिवादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के अधीन यह प्रथम अपील पंचम अपर जिला न्यायाधीश, दुर्ग द्वारा 2011 के सिविल वाद सं. 18-ए में तारीख 30 मार्च, 2013 को पारित उस निर्णय और डिक्री की वैधता, विधिमान्यता और औचित्यता को आक्षेपित करते हुए फाइल की है जिसके द्वारा उक्त न्यायालय ने विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वादी के वाद को डिक्री किया है । उच्च न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में वादी ने निधियों की उपलब्धता के बारे में कोई साक्ष्य पेश नहीं किया है । उसके साक्षी हेमन्त लुंकर (पी. डब्ल्यू. 3) ने यह कथन किया है कि उसके पास वादी के 5,00,000/- रुपए हैं और जब भी वादी को इस धनराशि की आवश्यकता होगी वह इसे संदत्त करेगा । तथापि, उसने अपने कथन के समर्थन में कोई दस्तावेज फाइल नहीं किया है । निधियों की उपलब्धता पासबुक, खाता-बही, खाता इत्यादि पेश करके दर्शायी जा सकती है न कि अन्य व्यक्ति

के इस मौखिक कथन के आधार पर कि वादी को जब भी धन की आवश्यकता होगी, वह इसे संदत्त करेगा । अत: चूंकि वादी ने निधियों की उपलब्धता और संदाय करने की अपनी सक्षमता साबित नहीं की है इसलिए उसके बारे में यह समझा जाएगा कि वह संपत्ति को क्रय करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं है । वादी ने यह दलील दी है कि वह 4,00,000/- रुपए की धनराशि का संदाय करने के लिए प्रतिवादी के मकान पर गया था किन्तु चूंकि प्रतिवादी बाहर गया हुआ था इसलिए उसने उसकी पत्नी को यह सूचित कर दिया था कि जैसे ही प्रतिवादी दुर्ग से वापस आए, वह उससे मांगपत्र प्राप्त कर ले । तथापि वादी ने अपने कथन में अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 18 में यह स्वीकार किया है कि उसने प्रतिवादी के मकान पर जाने से पूर्व प्रतिवादी को फोन नहीं किया था और न ही अन्य किसी रीति में उसे यह सूचित किया था कि वह मांगपत्र उसके सुपुर्द करने के लिए उसके मकान पर पहुंच रहा है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 19 में यह भी स्वीकार किया है कि प्रतिवादी के मकान पर पहुंचने के पश्चात् प्रतिवादी को उसके मोबाइल पर फोन करने के तथ्य के बारे में उसने न्यायालय में प्रथम बार कहा है । उसने प्रतिवादी को मोबाइल पर फोन करने के बारे में न्यायालय को बताया है । यह बात आश्चर्यजनक है कि वादी किस प्रकार मोबाइल पर प्रतिवादी को सूचित किए बिना या अन्य किसी साधन से सूचित किए बिना 4,00,000/- रुपए के संदाय के लिए प्रतिवादी के मकान पर गया था । प्रतिवादी ने अपने कथन में स्पष्ट रूप से यह कहा है कि वादी तारीख 30 नवंबर, 2007 को उसके मकान पर नहीं आया था । प्रतिवादी ने यह भी कथन किया है कि चूंकि 4,00,000/- रुपए का ड्राफ्ट प्राप्त करने के लिए वादी के वकील द्वारा उसके ऊपर सूचना की तामील करने से बहुत पहले करार रद्द किया जा चुका था और इसलिए वादी के पास उसके मकान पर जाने के लिए कोई औचित्यपूर्ण कारण मौजूद नहीं था । प्रतिवादी के इस स्पष्ट प्रकथन को दृष्टिगत करते हुए कि प्रतिवादी को कतिपय अन्य संपत्ति को क्रय करने के लिए निधियों की आवश्यकता थी जिसे वह वादी द्वारा 4,00,000/- रुपए का संदाय करने में विफल

रहने के कारण क्रय नहीं कर सका और उसके पश्चात् उसे धन की आवश्यकता नहीं रही थी और इसलिए करार रद्द कर दिया गया था, न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि चूंकि वादी तारीख 30 नंवबर, 2007 से पूर्व 4,00,000/- रुपए की धनराशि का संदाय करने के लिए प्रतिवादी के मकान पर नहीं गया था इसलिए इस साक्ष्य के आधार पर वादी संविदा के अपने भाग के पालन के लिए तैयार और रजामंद नहीं था । विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर की सामग्री पर विचार नहीं किया । अत: आक्षेपित निर्णय अनुचित निष्कर्ष और विधि के गलत प्रवर्तन पर आधारित है और इसलिए अपास्त किए जाने योग्य है । (12, 13 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2018] ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 5098 :
विजय कुमार बनाम **ओम प्रकाश** ; 11

[2013] (2013) 15 एस. सी. सी. 27 :
आई. एस. सिकन्दर (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि बनाम **के. सुब्रमणि और अन्य** ; 10

[2012] (2012) 2 एस. सी. सी. 300 = 2012 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 1035 :
जे. सैमुअल और अन्य बनाम **गटटू महेश और अन्य** ; 8

[2011] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. (सिविल) 230 = (2011) 1 एस. सी. सी. 429 :
जे. पी. बिल्डर्स और एक अन्य बनाम **ए. रामदास राव और एक अन्य** ; 8

[2004] ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4472 = (2004) 6 एस. सी. सी. 649 :
पी. डिसूजा बनाम **शोन्ड्रिलो नायडू** ; 8

[1996] ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 116 = (1995) 5 एस. सी. सी. 115 :
एन. पी. त्रिरुगननम (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि बनाम डा. आर. जगन मोहन राव और अन्य । 8

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2013 की प्रथम अपील सं. 97.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री सिद्धार्थ राठौड़

प्रत्यर्थी की ओर से श्री आशीष सुराना

कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति प्रशांत कुमार मिश्रा – प्रतिवादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के अधीन यह प्रथम अपील पंचम अपर जिला न्यायाधीश, दुर्ग द्वारा 2011 के सिविल वाद सं. 18-ए में तारीख 30 मार्च, 2013 को पारित उस निर्णय और डिक्री की वैधता, विधिमान्यता और औचित्यता को आक्षेपित करते हुए फाइल की है जिसके द्वारा उक्त न्यायालय ने विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वादी के वाद को डिक्री किया है ।

2. वाद-संपत्ति में 2400 वर्ग फुट की भूमि और शिक्षा नगर, चरौड़ा, तहसील पाटन जिला दुर्ग में स्थित खसरा सं. 267/325 में सन्निर्मित मकान सम्मिलित है । वादपत्र में किए गए अभिकथनों के अनुसार प्रतिवादी ने वादी के हक में तारीख 15 नवंबर, 2007 को 9,00,000/- रुपए के बदले वाद-संपत्ति के विक्रय के लिए एक करार निष्पादित किया था । उक्त तारीख को निष्पादित यह करार प्रदर्श पी-1 है । करार में इस बात पर सहमति की गई थी कि 4,00,000/- रुपए की शेष धनराशि तारीख 30 नवंबर, 2007 को संदत्त की जाएगी और वादी द्वारा शेष 4,00,000/- रुपए की धनराशि गृह ऋण प्राप्त करने के बाद संदत्त की जाएगी । प्रतिवादी विक्रय विलेख के निष्पादन के पूर्व उक्त मकान में रहने वाले किराएदार को बेदखल करेगा । यह भी कहा गया था कि वादी ने तारीख 30 नवंबर, 2007 को 4,00,000/- रुपए का एक खाता अदाता मांगपत्र तैयार कराया और वह प्रतिवादी के मकान पर गया ।

तथापि, प्रतिवादी की अनुपस्थिति में उसकी पत्नी को यह सूचना देते हुए मांगपत्र की एक फोटो प्रति दी गई थी कि उसके पति के आने पर वह मांगपत्र प्राप्त कर ले और दस्तावेजों को तैयार करा ले जिससे कि वादी गृह ऋण के लिए आवेदन कर सके । प्रतिवादी 5 दिसंबर, 2007 को वादी के मकान पर आया और उसने यह बताया कि वह दस्तावेज लाना भूल गया है । वादी ने करार की बाबत एक लोक सूचना प्रकाशित कराई तथापि, प्रतिवादी ने संविदा/करार से इनकार करते हुए लोक सूचना का उत्तर दिया जिसके पश्चात् वादी ने तारीख 14 दिसंबर, 2007 को प्रतिवादी के वकील पर एक प्रत्युत्तर की तामील कराई । प्रतिवादी ने वादी को यह भी सूचित किया कि करार रद्द हो गया है ।

3. यह भी कथन किया गया था कि वादी ने प्रतिवादी से पुन: यह अनुरोध किया कि वह ऋण लिए बिना संपत्ति को क्रय करने के लिए तैयार है तथापि, प्रतिवादी ने विक्रय विलेख का निष्पादन करने से पुन: इनकार कर दिया । अत: वादी संविदा के अपने भाग के पालन के लिए तैयार और रजामंद है और इसलिए वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री पारित करने का अनुरोध किया ।

4. संक्षेप में वादी का यह पक्षकथन है कि वादी ने तारीख 30 नवंबर, 2007 को 4,00,000/- रुपए का संदाय करने का वचन पूरा नहीं किया और इसके बजाय उसने एक लोक सूचना का प्रकाशन कराया और इस प्रकार वादी ने व्यतिक्रम किया और इसलिए यह संविदा रद्द की गई थी ।

5. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर वाद डिक्री कर दिया, जिसे अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील देते हुए आक्षेपित किया गया है कि तैयारी और रजामंदी के संबंध में निष्कर्ष के संबंध में न तो समुचित रूप से अभिवचन किया गया है और न ही इसे साबित किया गया है । यह भी दलील दी गई है कि करार के रद्दकरण को अपास्त करने के लिए कोई अनुतोष नहीं मांगा गया है और इसलिए विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद डिक्री नहीं किया जा सकता । यह भी दलील दी गई है कि वादी ने संपत्ति को क्रय करने के लिए निधियों

की उपलब्धता के संबंध में अपनी क्षमता उपदर्शित करते हुए कोई सबूत नहीं दिया है जो कि उच्चतम न्यायालय द्वारा हाल ही में दिए गए निर्णय को दृष्टिगत करते हुए आवश्यक है और इसलिए आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

6. इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री प्राप्त करने हेतु सभी आवश्यक संघटक साबित कर दिए हैं और इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री अपास्त किए जाने योग्य नहीं है और इसलिए अपील खारिज की जानी चाहिए ।

7. वादी ने वादपत्र के पैरा 9 में यह प्रकथन किया है कि वह सदैव ही "तैयार व तत्पर था" शब्दों का प्रयोग करके संविदा के अपने भाग के निष्पादन के लिए तैयार था । विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 16 तैयारी और रजामंदी के अभिवचनों के बारे में उपबंध करती है और "तैयार व तत्पर था" शब्दों का अर्थ भी वही है अर्थात तैयार है न कि तैयार और रजामंद नहीं है । धारा 16ग के अधीन उल्लिखित 'तैयार और रजामंद' शब्दों का हिन्दी अनुवाद "तैयार और रजामंद" है न कि "तैयार व तत्पर" । अत: वादपत्र में तैयारी और रजामंदी के संबंध में आवश्यक अभिवचन मौजूद नहीं हैं ।

8. उच्चतम न्यायालय ने **जे. सैमुअल और अन्य** बनाम **गटटू महेश और अन्य**[1] ; **जे. पी. बिल्डर्स और एक अन्य** बनाम **ए. रामदास राव और एक अन्य**[2] ; **एन. पी. त्रिरुगननम (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि** बनाम **डा. आर. जगन मोहन राव और अन्य**[3] और **पी. डिसूजा** बनाम **शोन्ड्रिलो नायडू**[4] वाले मामलों में समय-समय पर यह अभिनिर्धारित किया है कि तैयारी और रजामंदी का अभिवचन आवश्यक रूप से किया जाना चाहिए और विनिर्दिष्ट रूप से अभिवचन के अभाव में वाद खारिज

---

[1] (2012) 2 एस. सी. सी. 300 = 2012 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 1035.

[2] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. (सिविल) 230 = (2011) 1 एस. सी. सी. 429.

[3] ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 116 = (1995) 5 एस. सी. सी. 115.

[4] ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 4472 = (2004) 6 एस. सी. सी. 649.

किए जाने योग्य होगा और इसलिए विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री मंजूर नहीं की जा सकती ।

9. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **जे. सैमुअल और अन्य** बनाम **गटटू महेश और अन्य** (पूर्वोक्त) वाले मामले के पैरा 9 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :-

> "14. आगे कार्यवाही करने से पूर्व विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 16(ग) का निर्देश करना उपयोगी होगा जो इस प्रकार है -
>
> '16. **अनुतोष का वैयक्तिक वर्जन** - संविदा का विनिर्दिष्ट पालन किसी ऐसे व्यक्ति के पक्ष में नहीं कराया जा सकता -
>
> (क) जो उसके भंग के लिए प्रतिकर वसूल करने का हकदार न हो, अथवा
>
> (ख) जो संविदा के किसी मर्मभूत निबंधन का, जिसका उसकी ओर से पालन किया जाना शेष हो, पालन करने में असमर्थ हो गया हो, या उसका अतिक्रमण करे, या संविदा के प्रति कपट करे अथवा जानबूझकर ऐसा कार्य करे जो संविदा द्वारा स्थापित किए जाने के लिए आशयित संबंध का विसंवादी या ध्वंसक हो ; अथवा
>
> (ग) जो यह प्रकथन करने और साबित करने में असफल रहे कि उसके संविदा के उन निबंधनों से भिन्न जिनका पालन प्रतिवादी द्वारा निवारित अथवा अधित्यक्त किया गया है, ऐसे मर्मभूत निबंधनों का, जो उसके द्वारा पालन किए जाने हैं, उसने पालन कर दिया है अथवा पालन करने के लिए वह सदा तैयार और रजामन्द रहा है ।
>
> **स्पष्टीकरण** - खण्ड (ग) के प्रयोजनों के लिए -

(i) जहां कि संविदा में धन का संदाय अन्तर्वलित हो, वादी के लिए आवश्यक नहीं है कि वह प्रतिवादी को किसी धन का वास्तव में निविदान करे या न्यायालय में निक्षेप करे सिवाय जबकि न्यायालय ने ऐसा करने का निदेश दिया हो ;

(ii) वादी को यह प्रकथन करना होगा कि वह संविदा का उसके शुद्ध अर्थान्वयन के अनुसार पालन कर चुका, अथवा पालन करने को तैयार और रजामन्द है ।'

यह स्पष्ट है कि किसी संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए किसी वाद में जब तक यह विनिर्दिष्ट प्रकथन न किया गया हो कि उसने संविदा के आवश्यक निबंधनों को पूरा किया है या पूरा करने के लिए तैयार और रजामंद है, उसके द्वारा फाइल किया गया वाद खारिज किए जाने योग्य होगा । दूसरे शब्दों में उपर्युक्त अभिकथित इस दावे के अभाव में कि वह संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए सदैव तैयार और रजामंद है, न्यायालय द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री मंजूर नहीं की जा सकती ।"

10. वर्तमान मामले में प्रतिवादी ने लिखित कथन के पैरा 7 में यह विनिर्दिष्ट अभिवचन किया है कि जैसे ही उसने वादी द्वारा तारीख 9 दिसंबर, 2007 को प्रकाशित की गई लोक सूचना प्रदर्श-पी/2 को पढ़ा, उसने स्वयं भी अपना यह उत्तर प्रदर्श-पी/3 प्रकाशित कराया कि वादी द्वारा तारीख 30 नवंबर, 2007 को 8,00,000/- रुपए की कुल शेष धनराशि में से 4,00,000/- रुपए की किस्त का संदाय करके संविदा के अपने भाग का पालन न करने के कारण संविदा रद्द कर दी गई है और वह अब संपत्ति को विक्रीत करने के लिए तैयार नहीं है । तथापि, विनिर्दिष्ट अभिवचन के बावजूद वादपत्र में विक्रय करार को रद्द करने की घोषणा के लिए कोई अनुतोष नहीं मांगा गया जो कि विधि के विपरीत है । ऐसे किसी अनुरोध के अभाव में मात्र विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद डिक्री नहीं किया जा सकता जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **आई. एस. सिकन्दर (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि**

बनाम **के. सुब्रमणि और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 37 और 38 में अभिनिर्धारित किया गया है जो इस प्रकार है :-

> "37. जैसा कि मूल वाद में किए गए अनुरोध से उपदर्शित होता है कि वादी ने विक्रय करार के पर्यवसान को घोषित करने के लिए घोषणात्मक अनुतोष के लिए कोई अनुरोध नहीं किया है जो कि विधि के विपरीत है । वादी द्वारा ऐसे अनुरोध के अभाव में उसके द्वारा विक्रय करार के आधार पर वाद अनुसूचित संपत्ति के संबंध में विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री की मंजूरी हेतु विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल किया गया मूल वाद और स्थायी व्यादेश की डिक्री के पारिणामिक अनुतोष के लिए वाद विधि में ग्राह्य नहीं है ।
>
> 38. अत: हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि वादी द्वारा अविद्यमान विक्रय करार के आधार पर अपने हक में वाद अनुसूचित संपत्ति के संबंध में विक्रय विलेख के निष्पादन के विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री की मंजूरी हेतु मांगा गया अनुतोष विधि में पूर्णतया अस्वीकार्य है । तद्नुसार बिन्दु (i) (पैरा 32.1 देखिए) का उत्तर प्रतिवादी सं. 5 के हक में दिया जाता है ।"

11. वाद इस कारण से भी खारिज किया गया है कि वादी ने इस बारे में कोई साक्ष्य पेश नहीं किया है कि उसके पास पर्याप्त निधियां हैं और वह संपत्ति को क्रय करने के लिए सक्षम है । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **विजय कुमार** बनाम **ओम प्रकाश**[2] वाले मामले में अधिकथित विधि को दृष्टिगत करते हुए ऐसा सबूत दिया जाना आवश्यक है । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उक्त मामले के पैरा 7 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :-

> "7. वादी को विनिर्दिष्ट पालन के लिए कोई डिक्री प्राप्त करने के अनुक्रम में संविदा के अपने भाग के पालन के लिए अपनी

---

[1] (2013) 15 एस. सी. सी. 27.

[2] ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 5098.

तैयारी और रजामंदी साबित करनी चाहिए और वादी द्वारा ऐसी तैयारी और रजामंदी आरंभ से ही साबित की जानी चाहिए । यद्यपि वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी-वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद तारीख 29 अप्रैल, 2008 को फाइल किया है तथापि, प्रत्यर्थी-वादी ने 22,00,000/- रुपए (बाईस लाख रुपए) के शेष विक्रय प्रतिफल का संदाय करने के लिए अपनी सक्षमता उपदर्शित नहीं की है । प्रत्यर्थी-वादी ने अपने साक्ष्य में यह कहा है कि उसने धनराशि अपने मित्रों से उधार ली है और शेष विक्रय प्रतिफल का संदाय करने के लिए धन संचित रखा है जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही मत व्यक्त किया गया है कि प्रत्यर्थी-वादी ने यह उपदर्शित करने के लिए कोई दस्तावेज पेश नहीं किया है कि सुसंगत तारीख को उसके पास 22,00,000/- रुपए (बाईस लाख रुपए) की धनराशि मौजूद थी ; न ही उसने अपने उन मित्रों का नाम बताया है जिनसे उसने धन उधार लिया था या धन प्राप्त करने में कामयाब हुआ था । इसके अतिरिक्त जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही उपदर्शित किया गया है कि प्रत्यर्थी-वादी यह साबित करने के लिए अभिलेख पर अपनी खाता-पुस्तकें, पास बुक या खाता विवरणी या अन्य कोई पराक्राम्य लिखत पेश कर सकता था कि उसके पास सुसंगत समय पर संविदा के अपने भाग के पालन के लिए धन मौजूद था । अत: हम विचारण न्यायालय द्वारा अभिव्यक्त इस मत से सहमत हैं कि प्रत्यर्थी-वादी अपनी ओर से अपनी तैयारी और रजामंदी साबित नहीं कर सका है ।"

12. वर्तमान मामले में वादी ने निधियों की उपलब्धता के बारे में कोई साक्ष्य पेश नहीं किया है । उसके साक्षी हेमन्त लुंकर (पी. डब्ल्यू. 3) ने यह कथन किया है कि उसके पास वादी के 5,00,000/- रुपए हैं और जब भी वादी को इस धनराशि की आवश्यकता होगी वह इसे संदत्त करेगा । तथापि, उसने अपने कथन के समर्थन में कोई दस्तावेज फाइल नहीं किया है । निधियों की उपलब्धता पासबुक, खाता-बही, खाता इत्यादि पेश करके दर्शायी जा सकती है न कि अन्य व्यक्ति के इस

मौखिक कथन के आधार पर कि वादी को जब भी धन की आवश्यकता होगी, वह इसे संदत्त करेगा । अत: चूंकि वादी ने निधियों की उपलब्धता और संदाय करने की अपनी सक्षमता साबित नहीं की है इसलिए उसके बारे में यह समझा जाएगा कि वह संपत्ति को क्रय करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं है । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा ऊपर निर्दिष्ट **विजय कुमार** (पूर्वोक्त) वाले मामले में किया गया संप्रेक्षण वर्तमान मामले को भी लागू होता है ।

13. वादी ने यह दलील दी है कि वह 4,00,000/- रुपए की धनराशि का संदाय करने के लिए प्रतिवादी के मकान पर गया था किन्तु चूंकि प्रतिवादी बाहर गया हुआ था इसलिए उसने उसकी पत्नी को यह सूचित कर दिया था कि जैसे ही प्रतिवादी दुर्ग से वापस आए, वह उससे मांगपत्र प्राप्त कर ले । तथापि, वादी ने अपने कथन में अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 18 में यह स्वीकार किया है कि उसने प्रतिवादी के मकान पर जाने से पूर्व प्रतिवादी को फोन नहीं किया था और न ही अन्य किसी रीति में उसे यह सूचित किया था कि वह मांगपत्र उसके सुपुर्द करने के लिए उसके मकान पर पहुंच रहा है । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा के पैरा 19 में यह भी स्वीकार किया है कि प्रतिवादी के मकान पर पहुंचने के पश्चात् प्रतिवादी को उसके मोबाइल पर फोन करने के तथ्य के बारे में उसने न्यायालय में प्रथम बार कहा है । उसने प्रतिवादी को मोबाइल पर फोन करने के बारे में न्यायालय को बताया है । यह बात आश्चर्यजनक है कि वादी किस प्रकार मोबाइल पर प्रतिवादी को सूचित किए बिना या अन्य किसी साधन से सूचित किए बिना 4,00,000/- रुपए के संदाय के लिए प्रतिवादी के मकान पर गया था । प्रतिवादी ने (जिसकी परीक्षा डी. डब्ल्यू. 1 के रूप में की गई है) अपने कथन में स्पष्ट रूप से यह कहा है कि वादी तारीख 30 नवंबर, 2007 को उसके मकान पर नहीं आया था । प्रतिवादी ने यह भी कथन किया है कि चूंकि 4,00,000/- रुपए का ड्राफ्ट प्राप्त करने के लिए वादी के वकील द्वारा उसके ऊपर सूचना की तामील करने से बहुत पहले करार रद्द किया जा चुका था और इसलिए वादी के पास उसके मकान पर जाने

के लिए कोई औचित्यपूर्ण कारण मौजूद नहीं था । प्रतिवादी के इस स्पष्ट प्रकथन को दृष्टिगत करते हुए कि प्रतिवादी को कतिपय अन्य संपत्ति को क्रय करने के लिए निधियों की आवश्यकता थी जिसे वह वादी द्वारा 4,00,000/- रुपए का संदाय करने में विफल रहने के कारण क्रय नहीं कर सका और उसके पश्चात् उसे धन की आवश्यकता नहीं रही थी और इसलिए करार रद्द कर दिया गया था, हमारा यह सुविचारित मत है कि चूंकि वादी तारीख 30 नंवबर, 2007 से पूर्व 4,00,000/- रुपए की धनराशि का संदाय करने के लिए प्रतिवादी के मकान पर नहीं गया था इसलिए इस साक्ष्य के आधार पर वादी संविदा के अपने भाग के पालन के लिए तैयार और रजामंद नहीं था ।

14. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर की सामग्री पर विचार नहीं किया और न ही विचारण न्यायालय ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **आई. एस. सिकन्दर** (पूर्वोक्त) और **जे. सैमुअल** (पूर्वोक्त) वाले मामलों में अधिकथित विधि पर विचार किया । अत: आक्षेपित निर्णय अनुचित निष्कर्ष और विधि के गलत प्रवर्तन पर आधारित है और इसलिए अपास्त किए जाने योग्य है ।

15. तद्नुसार हम प्रतिवादी द्वारा फाइल की गई वर्तमान अपील को मंजूर करते हुए आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अपास्त करते हैं । परिणामत: विनिर्दिष्ट पालन के लिए वादी का वाद विफल होता है और एतदद्वारा खारिज किया जाता है ।

16. तद्नुसार डिक्री तैयार की जाए ।

17. पक्षकार अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

मह./पा.

(2019) 2 सि. नि. प. 678 छत्तीसगढ़

संतोष सिंह और एक अन्य

बनाम

देव चन्द और एक अन्य

(2007 की द्वितीय अपील सं. 335)

तारीख़ 11 अप्रैल, 2019

न्यायमूर्ति संजय अग्रवाल

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 34 और 38 – वादियों द्वारा विक्रय विलेख के आधार पर भू-संपत्ति में अधिकार, हक़दारी और हित के लिए वाद – क्रेता द्वारा नामांतरण न कराने पर विक्रेता द्वारा उसी भूमि का अपने पुत्र के हक़ में विक्रय विलेख किया जाना – क्रेता के पुत्र द्वारा भूमि प्रतिवादियों को अंतरित की जानी – पश्चात्वर्ती विक्रय विलेखों की विधिमान्यता – चूंकि प्रथम विक्रय विलेख द्वारा संपत्ति का हक़ या हित अंतरित हो गया था अत: पश्चात्वर्ती विक्रय विलेखों के आधार पर पश्चात्वर्ती क्रेताओं को कोई हक़ या हित तथा अधिकार अंतरित नहीं होता ।

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 – धारा 34 और 38 [सपठित परिसीमा अधिनियम, 1963 का अनुच्छेद 65] – विक्रय विलेख के आधार पर अधिकर, हकदारी और हित के लिए वाद – प्रतिवादियों द्वारा काल-वर्जन के साथ क़ब्जे का अनुतोष न मांगे जाने संबंधी आक्षेप किया जाना – वादियों द्वारा क़ब्जे के अनुतोष के लिए अपेक्षित न्यायालय संदत्त की जानी – क्रेता-वादियों के हक़ में क़ब्जे और अधिकार की डिक्री मंजूर किया जाना उचित है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि वादियों ने एक वाद संस्थित किया था जिसमें उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए हकदारी, व्यादेश और कब्जे की घोषणा के लिए दावा करते हुए वाद फाइल किया था कि वाद-संपत्ति खसरा सं. 727/1 रकबा 0.178 हेक्टेयर

भूमि जो जमदीह, तहसील बलोदा बाजार में स्थित है, उनके द्वारा दर्शन पुत्र पकलू से तारीख 18 मार्च, 1970 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा क्रय की गई थी । वादपत्र में किए गए प्रकथनों के अनुसार उक्त दर्शन ने वाद भूमि का उनके हक़ में अंतरण करने के पश्चात् पुन: तारीख 31 दिसंबर, 1973 का रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख निष्पादित करके भूमि अपने पुत्र अर्थात् इतवारी (प्रतिवादी सं. 2) को विक्रीत कर दी और इतवारी ने वाद भूमि को तारीख 10 मार्च, 1975 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा प्रतिवादी सं. 1-ए को विक्रीत कर दी । यह भी अभिवचन किया गया है कि प्रतिवादियों ने वर्ष 1982 में अभिकथित विक्रयों के आधार पर राजस्व कागज-पत्रों में अपना नाम दर्ज करा लिया और प्रश्नगत भूमि पर खेती न करने के लिए वादियों को धमकाना आरंभ कर दिया । अत: वादी वर्तमान वाद फाइल करने के लिए मजबूर हुए । प्रतिवादियों ने यह कहते हुए उपर्युक्त दावे का विरोध किया कि वाद संपत्ति प्रतिवादी सं. 2 इतवारी ने वर्ष 1973 में अपने पिता दर्शन से क्रय की थी और बाद में इसे वर्ष 1975 में प्रतिवादी सं. 1 संतोष सिंह को विक्रीत कर दिया और इस प्रकार उन्हें इस भूमि का हक प्राप्त हुआ । वाद का विरोध इस आधार पर भी किया गया कि उक्त संपत्ति को क्रय करने के पश्चात् उन्होंने राजस्व कागज-पत्रों में अपने नामों का नामांतरण कराया और वादियों द्वारा इस प्रकार पारित नामांतरण आदेश को कभी भी चुनौती नहीं दी गई और इसलिए वादियों द्वारा फाइल किया गया वाद ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है और काल-वर्जित है । प्रतिवादियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे संक्षेप में 'संहिता' कहा गया है) की धारा 100 के अधीन यह अपील द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, बलोदा बाजार द्वारा 2006 की सिविल अपील सं. 25-ए में तारीख 28 मार्च, 2007 को पारित निर्णय और डिक्री की औचित्यता को प्रश्नगत करते हुए फाइल की गई है । द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, बलोदा बाजार द्वारा निचले अपील न्यायालय द्वारा तारीख 12 जनवरी, 2005 को पारित उस निर्णय और डिक्री को उलटकर वादियों का वाद डिक्री किया गया है जिसके द्वारा अपर सिविल न्यायाधीश, वर्ग-II, बलोदा बाजार द्वारा 2003 के सिविल वाद सं. 3-ए

में निर्णय पारित किया गया था । प्रतिवादियों द्वारा द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, बलोदा बाज़ार के निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वादियों ने तारीख 18 मार्च, 1970 को अपने हक में दर्शन पुत्र पकलू द्वारा निष्पादित रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श पी-6) के आधार पर वाद संस्थित किया है । वादियों ने उक्त तथ्य को साबित करने के लिए न केवल उक्त रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख को पेश किया है अपितु सुसंगत राजस्व कागज-पत्र भी पेश किए हैं और इनके परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि प्रश्नगत संपत्ति खसरा सं. 727/1 रकबा 0.178 हेक्टेयर वादियों ने तारीख 18 मार्च, 1970 को उक्त दर्शन से क्रय की थी । चूंकि संपत्ति वादियों द्वारा पहले ही क्रय की जा चुकी थी इसलिए वाद-भूमि के पुन: अंतरण किए जाने से जैसा कि तारीख 31 दिसंबर, 1973 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-17) और तारीख 10 मार्च, 1975 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-18) से परिलक्षित है, प्रतिवादियों को कोई अधिकार, हक या हित अंतरित नहीं होता । उपर्युक्त तथ्य को दृष्टिगत करते हुए निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में कोई अवैधता कारित नहीं की है कि वादियों ने इन विक्रय-विलेखों (प्रदर्श डी-17) और (प्रदर्श डी-18) के निष्पादन से बहुत पहले वाद-भूमि में विधिमान्य हित अर्जित कर लिया था । (पैरा 8)

जहां तक अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री राजपूत की इस दलील का संबंध है कि चूंकि वादियों ने कब्जे के अनुतोष के लिए दावा नहीं किया है इसलिए उनका दावा खारिज किए जाने योग्य है जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, इसे खारिज किया जाता है क्योंकि वादपत्र में किए गए प्रकथनों विशेषतया पैरा 11 और 13 (सी) से यह स्पष्ट होता है कि वादीगण ने न केवल कब्जे के अनुतोष के लिए दावा किया है अपितु उन्होंने अपेक्षित न्यायालय फीस भी संदत्त की है । अत: निचले अपील न्यायालय ने वादियों के हक में कब्जे की डिक्री मंजूर करते हुए विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटने में कोई अवैधता कारित नहीं की है । उपर्युक्त विवेचना को

दृष्टिगत करते हुए न्यायालय को विधि का ऐसा कोई प्रश्न अर्थात् विधि का सारभूत प्रश्न प्रतीत नहीं होता जिसका इस अपील में अवधारण किए जाने की आवश्यकता है । तद्नुसार अपील में कोई बल न होने के कारण इसे एतद्द्वारा ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर ही खारिज किया जाता है । (पैरा 8 और 9)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2007 की द्वितीय अपील सं. 335.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री अनिल सिंह राजपूत

प्रत्यर्थियों की ओर से –

न्यायमूर्ति संजय अग्रवाल – प्रतिवादियों द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे आगे संक्षेप में 'संहिता' कहा गया है) की धारा 100 के अधीन यह अपील द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, बलोदा बाजार द्वारा 2006 की सिविल अपील सं. 25-ए में तारीख 28 मार्च, 2007 को पारित निर्णय और डिक्री की औचित्यता को प्रश्नगत करते हुए फाइल की गई है । द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, बलोदा बाजार द्वारा निचले अपील न्यायालय द्वारा तारीख 12 जनवरी, 2005 को पारित उस निर्णय और डिक्री को उलटकर वादियों का वाद डिक्री किया गया है जिसके द्वारा अपर सिविल न्यायाधीश, वर्ग-II, बलोदा बाजार द्वारा 2003 के सिविल वाद सं. 3-ए में निर्णय पारित किया गया था ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि वादियों ने एक वाद संस्थित किया था जिसमें उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए हकदारी, व्यादेश और कब्जे की घोषणा के लिए दावा करते हुए वाद फाइल किया था कि वाद-संपत्ति खसरा सं. 727/1 रकबा 0.178 हेक्टेयर भूमि जो जमदीह, तहसील बलोदा बाजार में स्थित है, उनके द्वारा दर्शन पुत्र पकलू से तारीख 18 मार्च, 1970 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा क्रय की गई थी । वादपत्र में किए गए प्रकथनों के अनुसार उक्त दर्शन ने वाद भूमि का उनके हक़ में अंतरण करने के पश्चात् पुन: तरीख 31 दिसंबर, 1973 का रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख निष्पादित करके भूमि

अपने पुत्र अर्थात् इतवारी (प्रतिवादी सं. 2) को विक्रीत कर दी और इतवारी ने वाद भूमि को तारीख 10 मार्च, 1975 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा प्रतिवादी सं. 1-ए को विक्रीत कर दी । यह भी अभिवचन किया गया है कि प्रतिवादियों ने वर्ष 1982 में अभिकथित विक्रयों के आधार पर राजस्व कागज-पत्रों में अपना नाम दर्ज करा लिया और प्रश्नगत भूमि पर खेती न करने के लिए वादियों को धमकाना आरंभ कर दिया । अत: वादी वर्तमान वाद फाइल करने के लिए मजबूर हुए ।

3. प्रतिवादियों ने यह कहते हुए उपर्युक्त दावे का विरोध किया कि वाद संपत्ति प्रतिवादी सं. 2 इतवारी ने वर्ष 1973 में अपने पिता दर्शन से क्रय की थी और बाद में इसे वर्ष 1975 में प्रतिवादी सं. 1 संतोष सिंह को विक्रीत कर दिया और इस प्रकार उन्हें इस भूमि का हक प्राप्त हुआ । वाद का विरोध इस आधार पर भी किया गया कि उक्त संपत्ति को क्रय करने के पश्चात् उन्होंने राजस्व कागज-पत्रों में अपने नामों का नामांतरण कराया और वादियों द्वारा इस प्रकार पारित नामांतरण आदेश को कभी भी चुनौती नहीं दी गई और इसलिए वादियों द्वारा फाइल किया गया वाद ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है और काल-वर्जित है ।

4. विचारण न्यायालय ने पक्षकारों द्वारा पेश किए गए साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि वादियों ने तारीख 18 मार्च, 1970 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श पी-6) द्वारा वाद संपत्ति जिसका खसरा सं. 727/1 रकबा 0.178 हेक्टेयर है, दर्शन पुत्र पकलू से क्रय की थी और यह भी अभिनिर्धारित किया कि बाद में तारीख 31 दिसंबर, 1973 को निष्पादित रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-17) और तारीख 10 मार्च, 1975 को निष्पादित विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-18) जो क्रमश: दर्शन और उसके पुत्र इतवारी द्वारा निष्पादित किए गए थे, सही नहीं हैं और इन विक्रय विलेखों (प्रदर्श डी-17 और प्रदर्श डी-18) द्वारा उन्हें कोई अधिकार, हक और हित नहीं पहुंचता है । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि यथा संस्थित वाद समय के भीतर है । तथापि, यह पाया गया है कि वादीगण भूमि पर काबिज नहीं हैं ।

परिणामत: विचारण न्यायालय को वादियों का वाद उचित नहीं लगा है क्योंकि वे कब्जे के अतिरिक्त अनुतोष को प्राप्त करने में विफल रहे हैं ।

5. प्रतिवादियों ने द्वितीय अपर जिला न्यायाधीश, बलोदा बाज़ार के निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर यह अपील फाइल की है । निचले अपील न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि वादियों ने तारीख 18 मार्च, 1970 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श पी-6) द्वारा विधिक अधिकार, हक और हित प्राप्त कर लिया है और किश्तबंदी खतौनी (प्रदर्श पी-4) का अवलंब लेते हुए यह संप्रेक्षण किया कि वादीगण 1981-82 तक प्रश्नगत संपत्ति पर काबिज रहे हैं और तत्पश्चात् उनका कब्जा नहीं रहा है । आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि चूंकि वाद 12 वर्ष की अवधि के भीतर फाइल किया गया था, इसलिए यह समय के भीतर है । परिणामत: वादियों के इस दावे के लिए वाद डिक्री किया गया कि वे प्रतिवादियों से वाद भूमि का कब्जा प्राप्त करने के हकदार हैं ।

6. प्रतिवादियों ने उक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री अनिल सिंह राजपूत ने यह दलील दी है कि निर्णय और डिक्री जो निचले अपील न्यायालय द्वारा कब्जे के अनुतोष की ईप्सा करने के अभाव में कब्जे की डिक्री मंजूर करते हुए विचारण न्यायालय के निर्णय को उलटते हुए पारित की गई है, स्पष्टतया विधि के प्रतिकूल है ।

7. मैंने अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल को सुना और संपूर्ण अभिलेख का सतर्कतापूर्वक परिशीलन किया ।

8. वादियों ने तारीख 18 मार्च, 1970 को अपने हक में दर्शन पुत्र पकलू द्वारा निष्पादित रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श पी-6) के आधार पर वाद संस्थित किया है । वादियों ने उक्त तथ्य को साबित करने के लिए न केवल उक्त रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख को पेश किया है अपितु सुसंगत राजस्व कागज-पत्र भी पेश किए हैं और इनके परिशीलन मात्र से यह उपदर्शित होता है कि प्रश्नगत संपत्ति खसरा सं. 727/1 रकबा 0.178 हेक्टेयर वादियों ने तारीख 18 मार्च, 1970 को उक्त दर्शन

से क्रय की थी । चूंकि संपत्ति वादियों द्वारा पहले ही क्रय की जा चुकी थी इसलिए वाद-भूमि के पुन: अंतरण किए जाने से जैसा कि तारीख 31 दिसंबर, 1973 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-17) और तारीख 10 मार्च, 1975 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श डी-18) से परिलक्षित है, प्रतिवादियों को कोई अधिकार, हक या हित अंतरित नहीं होता । उपर्युक्त तथ्य को दृष्टिगत करते हुए निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में कोई अवैधता कारित नहीं की है कि वादियों ने इन विक्रय विलेखों (प्रदर्श डी-17) और (प्रदर्श डी-18) के निष्पादन से बहुत पहले वाद-भूमि में विधिमान्य हित अर्जित कर लिया था । जहां तक अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री राजपूत की इस दलील का संबंध है कि चूंकि वादियों ने कब्जे के अनुतोष के लिए दावा नहीं किया है इसलिए उनका दावा खारिज किए जाने योग्य है जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, इसे खारिज किया जाता है क्योंकि वादपत्र में किए गए प्रकथनों विशेषतया पैरा 11 और 13 (सी) से यह स्पष्ट होता है कि वादीगण ने न केवल कब्जे के अनुतोष के लिए दावा किया है अपितु उन्होंने अपेक्षित न्यायालय फीस भी संदत्त की है । अत: निचले अपील न्यायालय ने वादियों के हक में कब्जे की डिक्री मंजूर करते हुए विचारण न्यायालय के निष्कर्षों को उलटने में कोई अवैधता कारित नहीं की है ।

9. उपर्युक्त विवेचना को दृष्टिगत करते हुए मुझे विधि का ऐसा कोई प्रश्न अर्थात् विधि का सारभूत प्रश्न प्रतीत नहीं होता जिसका इस अपील में अवधारण किए जाने की आवश्यकता है । तद्नुसार अपील में कोई बल न होने के कारण इसे एतद्द्वारा ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर ही खारिज किया जाता है । खर्चों के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

महं.

(2019) 2 सि. नि. प. 685 मद्रास

आर्या वैसिया चेत्तियार पोदूमल भुवनगिरि और एक अन्य

बनाम

कालियापेरुमल नायडू

(2005 की द्वितीय अपील सं. 679)

तारीख़ 15 अप्रैल, 2019

न्यायमूर्ति टी. रवीन्द्रन

संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) – धारा 106, 107 और 111 – वादी द्वारा किराएदार की बेदख़ली और क़ब्जे की वसूली तथा किराए की बकाया और अन्त:कालीन लाभों के लिए वाद – किराएदारी पर्यवसित करने की सूचना – किराएदार द्वारा परिसर खाली न करने पर पुन: सूचना जारी किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा अत्यंत तकनीकी आधार पर सूचना को विधिमान्य न माना जाना – सूचना से संबंधित विषय को विनियमित करने वाले विधि के सिद्धांतों को विचार में लिए बिना सूचना को अविधिमान्य ठहराना न्यायोचित नहीं है – अत: वादी संपत्ति के क़ब्जे की वापसी के साथ अन्य सभी अन्त:कालीन लाभों के लिए हक़दार है ।

यह द्वितीय अपील अधीनस्थ न्यायालय, चिदंबरम की फाइल पर की 2001 की ए. एस. सं. 33 में तारीख 26 दिसंबर, 2002 को पारित उस निर्णय और डिक्री को आक्षेपित करते हुए फाइल की गई है जिसके द्वारा उक्त न्यायालय द्वारा जिला मुंसिफ न्यायालय, चिदंबरम की फाइल पर के 1991 के मूल वाद सं. 360 में तारीख 29 जून, 2000 को पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि की गई है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जैसी कि वादी के काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है कि निचले न्यायालयों ने वादी द्वारा भेजी गई पर्यवसान की सूचना विशेषतया सूचना प्रदर्श ए-1 को दोषपूर्ण बताने में अत्यंत

तकनीकी मत अपनाया है । जैसा कि प्रतिवादी के साक्ष्य से उपदर्शित होता है कि उसने सूचना प्रदर्श ए-1 के तात्पर्य को समझते हुए यह स्वीकार किया है कि उक्त सूचना उसे वाद संपत्ति को खाली करने के लिए ही भेजी गई थी । अत: चूंकि प्रतिवादी प्रदर्श ए-1 के रूप में चिह्नांकित सूचना को जारी करने से भ्रमित नहीं हुआ है, जैसी कि वादी के काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है, इसलिए निचले न्यायालयों को उक्त सूचना को अविधिमान्य रूप में खारिज करने के लिए अत्यंत तकनीकी मत नहीं अपनाना चाहिए था । इस बारे में अधिकथित विधि के सिद्धांतों को दृष्टिगत करते हुए कि छोड़ने के लिए सूचना पर विचार किया जाना चाहिए, विशेषतया इसे अत्यंत तकनीकी रीति में नहीं पढ़ा जाना चाहिए अपितु इस बारे में परिशीलन किया जाना चाहिए कि इससे प्रश्नगत प्राप्तकर्ता/किराएदार के लिए क्या अभिप्रेत है और जहां उपर्युक्त उल्लिखित रूप में प्रतिवादी/किराएदार ने इस बारे में दावा नहीं किया हो कि सूचना प्रदर्श ए-1 का तात्पर्य उसने नहीं समझा था किन्तु जहां स्पष्टतया यह साक्ष्य दिया गया हो कि उसे उपर्युक्त सूचना वाद संपत्ति को छोड़ने के लिए भेजी गई थी और मामले को इस दृष्टि से देखते हुए प्रदर्श ए-3 सूचना के साथ जिसके अधीन वादी द्वारा किराएदारी समुचित रूप से पर्यवसित की गई थी और वादी ने उसके पश्चात् ही तारीख 5 अप्रैल, 1989 को प्रतिवादी के विरुद्ध वाद फाइल किया था और पूर्ण रूप से यह पाया जाता है कि वादी ने विधि के अनुसरण में प्रतिवादी की किराएदारी समुचित रूप से पर्यवसित की है और इसलिए इस एकमात्र आधार पर निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को खारिज किया गया है कि पर्यवसान की सूचना अविधिमान्य है, किसी भी रीति में अनुमोदन नहीं किया जा सकता क्योंकि न्यायालयों ने इस संबंध में विनियमित करने वाले विधि के सिद्धांतों पर विचार किए बिना अत्यंत तकनीकी आधार पर उक्त विवाद्यक पर विचार किया है जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट विनिश्चय में उल्लिखित किया गया है । इसके अतिरिक्त निचले न्यायालय सूचना प्रदर्श ए-3 के तात्पर्य को समझने में भी विफल रहे हैं जिसके अधीन वादी ने स्पष्ट रूप से किराएदारी-मास के अंत में किराएदारी को पर्यवसित किया है जैसा कि प्रतिवादी द्वारा दावा किया गया है और मामले को इस दृष्टि से देखते हुए पर्यवसान की सूचना

विधि के अनुसार जारी की गई है और जहां प्रतिवादी द्वारा वादी के वाद का विरोध करने के लिए कोई अन्य विधिमान्य आधार पेश नहीं किया गया है और इस प्रकार यह पाया जाता है कि वादी प्रतिवादी से वाद संपत्ति का कब्जा वापस पाने का हकदार है । विचारण न्यायालय ने यह ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि वादी वाद फाइल किए जाने से 3 वर्ष पूर्व के किराए की बकाया वसूल करने का हकदार है और वादी द्वारा वाद फाइल करने की तारीख से 3 वर्ष की अवधि के परे दावा किए गए किराए की बकाया परिसीमा द्वारा वर्जित है । प्रथम अपील न्यायालय ने इस बारे में समुचित कारण उल्लिखित किए बिना विचारण न्यायालय के उपर्युक्त निष्कर्षों को उलटने में गलती की है कि किस प्रकार वादी वाद संस्थित करने से पूर्व की 3 वर्ष की अवधि के लिए किराए की बकाया पाने का हकदार नहीं है, जहां प्रतिवादी द्वारा उक्त अवधि के लिए किराया संदत्त किया जाना शेष है । यद्यपि प्रतिवादी ने यह भी प्रतिरक्षा ली है कि वादी का वाद ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है क्योंकि वादी अन्य सभी न्यासियों का प्रतिनिधित्व नहीं करता है, तथापि, इसे प्रथम अपील न्यायालय द्वारा ठीक ही नकारा गया है और प्रथम अपील न्यायालय को उपर्युक्त अवधारण में हस्तक्षेप करने के लिए कोई आधार प्रतीत नहीं हुआ । उपर्युक्त विवेचना को दृष्टिगत करते हुए द्वितीय अपील में प्ररूपित विधि के सारभूत प्रश्नों का तद्नुसार वादी के हक में और प्रतिवादी के विरुद्ध उत्तर दिया जाता है । (पैरा 9, 10, 11, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1989] ए. आई. आर. 1989 मद्रास 321 :
पी. पी. सुब्बा राजा बनाम **ई. एस. गुरुसामी** । 9

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2005 की द्वितीय अपील सं. 679.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री एस. सेन्थिलनाथन

प्रत्यर्थी की ओर से –

न्यायमूर्ति टी. रवीन्द्रन – यह द्वितीय अपील अधीनस्थ न्यायालय, चिदंबरम की फाइल पर की 2001 की ए. एस. सं. 33 में तारीख 26 दिसंबर, 2002 को पारित उस निर्णय और डिक्री को आक्षेपित करते हुए फाइल की गई है जिसके द्वारा उक्त न्यायालय द्वारा जिला मुंसिफ न्यायालय, चिदंबरम की फाइल पर के 1991 के मूल वाद सं. 360 में तारीख 29 जून, 2000 को पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि की गई है ।

2. द्वितीय अपील विधि के निम्नलिखित सारभूत प्रश्नों पर ग्रहण की गई है :–

i. क्या निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधित: गलती की है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 106 को अत्यंत तकनीकी आधारों पर लागू नहीं किया जा सकता ?

ii. क्या निचले न्यायालयों ने प्रतिवादी की किराएदारी से संबंधित प्रतिपरीक्षा में स्वीकारोक्ति का अवलंब न लेकर विधित: गलती की है ? और

iii. क्या निचले न्यायालयों ने प्रदर्श ए-3 को खारिज करने में विधित: गलती की है ?

3. मामले की विषयवस्तु की संक्षिप्तता को दृष्टिगत करते हुए पक्षकारों के बीच अन्तर्वलित विवाद्यकों के क्षेत्र पर विचार करते हुए यह आवश्यक नहीं है कि मामले के तथ्यों का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया जाए ।

4. सुविधा की दृष्टि से पक्षकारों को विचारण न्यायालय में प्रास्थिति के अनुसार निर्दिष्ट किया जा रहा है ।

5. यह कहना पर्याप्त होगा कि वादी ने प्रतिवादी के विरुद्ध कब्जे की वापसी, पूर्व किराए की बकाया और भावी अन्त:कालीन लाभों के लिए वाद फाइल किया था ।

6. प्रतिवादी ने वादी के अधीन किराएदारी को स्वीकार किया है । जैसा कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से उपदर्शित होता है, यह पाया

गया है कि पक्षकारों के बीच किसी न किसी प्रकार से अन्य कार्यवाहियां लंबित हैं । वादी द्वारा वर्तमान वाद प्रतिवादी की किराएदारी का अवधारण करते हुए अनुरोध किए गए अनुतोषों के लिए फाइल किया गया है । किराएदारी के पर्यवसान के लिए तारीख 17 दिसंबर, 1985 की सूचना को प्रदर्श ए-1 के रूप में चिह्नांकित कराया गया है । उक्त सूचना के जवाब में प्रतिवादी द्वारा तारीख 1 दिसंबर, 1986 को भेजे गए उत्तर को प्रदर्श ए-2 के रूप में चिह्नांकित किया गया है । यह पाया गया है कि इसके पश्चात् वादी ने अपनी किराएदारी का निर्धारण करते हुए प्रतिवादी को तारीख 22 दिसंबर, 1986 को एक अन्य सूचना भी भेजी थी जिसे प्रदर्श ए-3 के रूप में चिह्नांकित किया गया है और इस सूचना से संबंधित प्रतिवादी से प्राप्त अभिस्वीकृति-पत्र को प्रदर्श ए-4 के रूप में चिह्नांकित किया गया है । निस्संदेह वादी ने सूचना प्रदर्श ए-3 को जारी करने के संबंध में अपने वादपत्र में प्रकथन नहीं किया है । इस आधार पर यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी ने वादी की ओर से जारी सूचना प्रदर्श ए-3 को नकारा है । तथापि, जैसा कि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से उपदर्शित होता है कि प्रतिवादी ने अभिस्वीकृति-पत्र पर जिसे प्रदर्श ए-4 के रूप में चिह्नांकित किया गया है, अपने हस्ताक्षरों को विवादित नहीं किया है । अत: निचले न्यायालयों के इस निर्धारण को कि प्रदर्श ए-3 के बारे में यह साबित नहीं हुआ है कि वह वादी द्वारा प्रतिवादी को भेजी गई थी, क्योंकि वादी ने इससे संबंधित डाक-रसीद को चिह्नांकित नहीं कराया है, इस रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता विशेषतया जब वादी ने सूचना प्रदर्श ए-3 की रसीद के साथ प्रतिवादी से प्राप्त अभिस्वीकृति-पत्र फाइल किया है । जैसी कि ऊपर अवेक्षा की गई है कि प्रतिवादी ने अभिस्वीकृति-पत्र प्रदर्श ए-4 में पाए गए हस्ताक्षरों को अपने हस्ताक्षर न बताते हुए खंडन नहीं किया है । उपर्युक्त तथ्यात्मक स्थिति को दृष्टिगत करते हुए यह पाया गया है कि वादी ने सूचना प्रदर्श ए-1 तथा सूचना प्रदर्श ए-3 दोनों को प्रतिवादी को भेजकर किराएदारी के अवधारण के लिए समुचित कार्रवाई की है ।

7. प्रतिवादी ने यह अभिवाक् किया है कि प्रदर्श ए-1 के रूप में चिह्नांकित किराएदारी के पर्यवसान की सूचना अविधिमान्य है । निचले

न्यायालयों ने उपर्युक्त प्रतिरक्षा कथन को इस तर्क के आधार पर स्वीकार किया है कि यद्यपि वादी द्वारा उक्त सूचना के अधीन 15 दिन का समय प्रदान किया गया था तथापि, चूंकि वादी किराएदारी मास के अंत में किराएदारी का अवधारण नहीं कर पाया था और इस आधार पर निचले न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि प्रदर्श ए-1 के रूप में चिह्नांकित पर्यवसान की सूचना अविधिमान्य है । प्रतिवादी की किराएदारी मासिक किराएदारी है जो विवादित नहीं है । किराएदारी तारीख 3 मई, 1962 को आरंभ हुई है और यह बात पक्षकारों द्वारा किराया नियंत्रक कार्यवाहियों में दाखिल दस्तावेजों से साबित होती है । इस आधार पर निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रदर्श ए-1 सूचना किराएदारी मास के अंत में किराएदारी का अवधारण करते हुए नहीं भेजी गई है और इसलिए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि पर्यवसान की सूचना अविधिमान्य है ।

8. तथापि, जैसा कि प्रदर्श ए-3 द्वारा भेजी गई सूचना से स्पष्ट होता है कि वादी ने किराएदारी का निर्धारण सही रूप से किया है और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि वादी ने प्रतिवादी को सूचना प्रदर्श ए-3 भेजने को भी साबित कर दिया है और प्रदर्श ए-4 अर्थात् अभिस्वीकृति-पत्र को चिह्नांकित भी कराया है । अत: प्रदर्श ए-1, ए-3 और ए-4 के संयुक्त परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि वादी द्वारा किराएदारी समुचित रूप से साबित कर दी गई है ।

9. जैसी कि वादी के काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है कि निचले न्यायालयों ने वादी द्वारा भेजी गई पर्यवसान की सूचना विशेषतया सूचना प्रदर्श ए-1 को दोषपूर्ण बताने में अत्यंत तकनीकी मत अपनाया है । जैसा कि प्रतिवादी के साक्ष्य से उपदर्शित होता है कि उसने सूचना प्रदर्श ए-1 के तात्पर्य को समझते हुए यह स्वीकार किया है कि उक्त सूचना उसे वाद संपत्ति को खाली करने के लिए ही भेजी गई थी । अत: चूंकि प्रतिवादी प्रदर्श ए-1 के रूप में चिह्नांकित सूचना को जारी करने से भ्रमित नहीं हुआ है, जैसी कि वादी के काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है, इसलिए निचले न्यायालयों को उक्त सूचना को अविधिमान्य रूप में खारिज करने के लिए अत्यंत तकनीकी मत नहीं

अपनाना चाहिए था । वादी के काउंसेल ने इस संबंध में **पी. पी. सुब्बा राजा** बनाम **ई. एस. गुरुसामी**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पर्यवसान (छोड़ने) की सूचना को दोषपूर्ण नहीं माना जाना चाहिए अथवा ऐसा निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए । इसे विनियमित करने वाले विधि के सिद्धांतों का उपर्युक्त विनिश्चयों में विस्तार से उल्लेख किया गया है, जो इस प्रकार हैं :–

> "यह सुस्थापित विधि है कि छोड़ने के लिए किसी सूचना का दोषपूर्ण होने के रूप में इस प्रकार निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए जो इसे त्रुटिपूर्ण बनाने वाला हो अपितु इसका निर्वचन किसी चीज को बेहतर समझने के रूप में किया जाना चाहिए । इस संबंध में सिदबोथम **बनाम** हालैंड, (1895) 1 क्यू. बी. 378 वाले मामले में लार्ड जस्टिस लिंडले द्वारा अभिव्यक्त इस मत का उल्लेख करना उपयोगी होगा कि छोड़ने की किसी सूचना की विधिमान्यता को सामान्यतया तकनीकी रूप में त्यक्त नहीं किया जाना चाहिए । माननीय उच्चतम न्यायालय ने भगबान दास **बनाम** भगवान दास, ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1120 = (1977) 2 एस. सी. सी. 646 = 1977 (1) आर. सी. आर. 754 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि छोड़ने की किसी सूचना को अत्यंत तकनीकी रीति में नहीं पढ़ा जाना चाहिए और न ही इसके निर्वचन द्वारा शिक्षा शास्त्रीय रूप से पढ़ते हुए मूल भावना से हटना चाहिए अथवा और न ही इसे अत्यंत सूक्ष्मता के साथ पढ़ा जाना चाहिए अपितु इसका निर्वचन सामान्य अर्थ में ही किया जाना चाहिए । केवल यह महत्वपूर्ण है कि क्या यह किसी किराएदार के लिए अभिप्रेत है और क्या यह परिकल्पना की जा सकती है कि किराएदार सभी तथ्यों और परिस्थितियों से अवगत है, भले ही इसमें हर प्रकार से कुछ बातें न कही गई हों । इस रीति में विचार करते हुए और प्रदर्श बी-1 की अन्तर्वस्तु को दृष्टिगत करते हुए और इसका सरल तथा नैसर्गिक निर्वचन करने पर यह स्पष्ट होता

---

[1] ए. आई. आर. 1989 मद्रास 321.

है कि प्रत्यर्थी ने यह अभिव्यक्त करते हुए किराएदार की किराएदारी को पर्यवसित किया था कि वह इसके द्वारा पट्टे को पर्यवसित कर रहा है और किराएदार से उक्त संपत्ति का कब्जा खाली कराकर उसे प्रदान करने की स्पष्ट मांग करके पट्टे को पर्यवसित करने का आशय भी अभिव्यक्त कर रहा है । इस बारे में कोई विवाद नहीं है कि स्पष्टतया 15 दिन की सूचना दी गई है और परिणामत: इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में किराएदार के हक में पट्टा पर्यवसित किया गया था और उसके पश्चात् ही तारीख 12 दिसंबर, 1973 को बेदखली का वाद संस्थित किया गया था और इसके बहुत बाद में किराएदार ने छोड़ने की सूचना का अनुसरण न करके कब्जा वापस करने से इनकार कर दिया था । अत: संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 106, 107 और 111 (छ) और (झ) को दृष्टिगत करते हुए पट्टे की प्रकृति पर विचार करते हुए यह अकाट्य निष्कर्ष निकलता है कि किराएदार के हक में पट्टा केवल मासिक किराएदारी के आधार पर किया गया था और प्रत्यर्थी ने प्रदर्श बी-1 के अधीन परिसर छोड़ने की सूचना जारी करके पट्टे को पर्यवसित भी कर दिया था और इसलिए बेदखली के लिए वाद भी समुचित रूप से संस्थित किया गया था । अत: किराएदार के विद्वान् काउंसेल की प्रथम दलील खारिज किए जाने योग्य है ।"

10. उपर्युक्त विनिश्चय में इस बारे में अधिकथित विधि के सिद्धांतों को दृष्टिगत करते हुए कि छोड़ने के लिए सूचना पर विचार किया जाना चाहिए, विशेषतया इसे अत्यंत तकनीकी रीति में नहीं पढ़ा जाना चाहिए अपितु इस बारे में परिशीलन किया जाना चाहिए कि इससे प्रश्नगत प्राप्तकर्ता/किराएदार के लिए क्या अभिप्रेत है और जहां उपर्युक्त उल्लिखित रूप में प्रतिवादी/किराएदार ने इस बारे में दावा नहीं किया हो कि सूचना प्रदर्श ए-1 का तात्पर्य उसने नहीं समझा था किन्तु जहां स्पष्टतया यह साक्ष्य दिया गया हो कि उसे उपर्युक्त सूचना वाद संपत्ति को छोड़ने के लिए भेजी गई थी और मामले को इस दृष्टि से देखते हुए प्रदर्श ए-3 सूचना के साथ जिसके अधीन वादी द्वारा किराएदारी समुचित

रूप से पर्यवसित की गई थी और वादी ने उसके पश्चात् ही तारीख 5 अप्रैल, 1989 को प्रतिवादी के विरुद्ध वाद फाइल किया था और पूर्ण रूप से यह पाया जाता है कि वादी ने विधि के अनुसरण में प्रतिवादी की किराएदारी समुचित रूप से पर्यवसित की है और इसलिए इस एकमात्र आधार पर निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को खारिज किया गया है कि पर्यवसान की सूचना अविधिमान्य है, किसी भी रीति में अनुमोदन नहीं किया जा सकता क्योंकि न्यायालयों ने इस संबंध में विनियमित करने वाले विधि के सिद्धांतों पर विचार किए बिना अत्यंत तकनीकी आधार पर उक्त विवाद्यक पर विचार किया है जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट विनिश्चय में उल्लिखित किया गया है । इसके अतिरिक्त निचले न्यायालय सूचना प्रदर्श ए-3 के तात्पर्य को समझने में भी विफल रहे हैं जिसके अधीन वादी ने स्पष्ट रूप से किराएदारी-मास के अंत में किराएदारी को पर्यवसित किया है जैसा कि प्रतिवादी द्वारा दावा किया गया है और मामले को इस दृष्टि से देखते हुए पर्यवसान की सूचना विधि के अनुसार जारी की गई है और जहां प्रतिवादी द्वारा वादी के वाद का विरोध करने के लिए कोई अन्य विधिमान्य आधार पेश नहीं किया गया है और इस प्रकार यह पाया जाता है कि वादी प्रतिवादी से वाद संपत्ति का कब्जा वापस पाने का हकदार है ।

11. विचारण न्यायालय ने यह ठीक ही अभिनिर्धारित किया है कि वादी वाद फाइल किए जाने से 3 वर्ष पूर्व के किराए की बकाया वसूल करने का हकदार है और वादी द्वारा वाद फाइल करने की तारीख से 3 वर्ष की अवधि के परे दावा किए गए किराए की बकाया परिसीमा द्वारा वर्जित है । प्रथम अपील न्यायालय ने इस बारे में समुचित कारण उल्लिखित किए बिना विचारण न्यायालय के उपर्युक्त निष्कर्षों को उलटने में गलती की है कि किस प्रकार वादी वाद संस्थित करने से पूर्व की 3 वर्ष की अवधि के लिए किराए की बकाया पाने का हकदार नहीं है, जहां प्रतिवादी द्वारा उक्त अवधि के लिए किराया संदत्त किया जाना शेष है ।

12. यद्यपि प्रतिवादी ने यह भी प्रतिरक्षा ली है कि वादी का वाद

ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है क्योंकि वादी अन्य सभी न्यासियों का प्रतिनिधित्व नहीं करता है, तथापि, इसे प्रथम अपील न्यायालय द्वारा ठीक ही नकारा गया है और प्रथम अपील न्यायालय को उपर्युक्त अवधारण में हस्तक्षेप करने के लिए कोई आधार प्रतीत नहीं हुआ ।

13. उपर्युक्त विवेचना को दृष्टिगत करते हुए द्वितीय अपील में प्ररूपित विधि के सारभूत प्रश्नों का तद्नुसार वादी के हक में और प्रतिवादी के विरुद्ध उत्तर दिया जाता है ।

14. परिणामतः अधीनस्थ न्यायालय, चिदंबरम की फाइल पर के 2001 के ए. एस. सं. 33 में तारीख 26 दिसंबर, 2002 को पारित निर्णय और डिक्री को जिसके द्वारा जिला मुंसिफ न्यायालय, चिदंबरम की फाइल पर के 1991 के मूल वाद सं. 360 में तारीख 29 जून, 2000 को पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि की गई है, अपास्त किया जाता है और परिणामतः 1991 के मूल वाद सं. 360 में वादी द्वारा फाइल किया गया वाद डिक्री करते हुए कब्जे की वसूली के लिए अनुतोष और वाद फाइल किए जाने के पूर्व 3 वर्ष की अवधि के लिए किराए की बकाया प्राप्त करने के लिए वादी की हकदारी मंजूर की जाती है और यह भी अभिनिर्धारित किया जाता है कि वादी भावी अंतःकालीन लाभों के लिए हकदार है और इस संबंध में वादी को यह निदेश दिया जाता है कि वह सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 20, नियम 12 के अधीन विधि के अनुसरण में पृथक् कार्यवाहियां फाइल करे ।

15. तद्नुसार द्वितीय अपील खर्चों सहित मंजूर की जाती है । परिणामतः संबंधित प्रकीर्ण आवेदन को, यदि कोई हो, बंद किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

मह.

कमला कांस्ट्रक्शन कंपनी, बीकानेर (मैसर्स)

बनाम

राजस्थान राज्य जिला कलक्टर, बीकानेर और अन्य

(2017 का एस. बी. माध्यस्थम् आवेदन सं. 9)

तारीख़ 25 मार्च, 2019

न्यायमूर्ति अरुण भंसाली

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 14 और 15 – मध्यस्थ की नियुक्ति – प्रत्यास्थापन – मध्यस्थ द्वारा अपनी नियुक्ति की जानकारी होने के बावजूद पक्षों को कोई सूचना जारी न की जानी – मध्यस्थ द्वारा इस आधार पर कार्रवाई से इनकार किया जाना कि वह सुसंगत समय पर विवाद के स्थान पर नियुक्त था – उपबंध के अनुसार नए मध्यस्थ की नियुक्ति की जानी चाहिए ।

पक्षकारों के बीच विवाद को सुलझाने के लिए तारीख 28 अप्रैल, 2009 के आदेश (आवेदन का उपाबंध-1) द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 को पक्षकारों के बीच विवाद का विनिश्चय करने के लिए मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया था । यह दावा किया गया है कि तारीख 28 अप्रैल, 2009 के आदेश द्वारा नियुक्त किए गए मध्यस्थ ने पक्षकारों को उनका दावा फाइल करने के लिए आहूत करते हुए तारीख 25 मार्च, 2016 के अपने पत्र द्वारा निर्देश दिया था । आवेदक ने तारीख 7 अप्रैल, 2016 को अपना दावा फाइल किया । तथापि, प्रत्यर्थी ने मध्यस्थ को यह सूचना दी कि सुसंगत समय पर वह किलिन का भारसाधक था, जिसके आधार पर मध्यस्थ द्वारा तारीख 21 सितंबर, 2016 को माध्यस्थम् में कार्यवाही करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए एक संसूचना जारी की गई थी । आवेदक द्वारा माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 14 और 15 के अधीन यह आवेदन मध्यस्थ के प्रत्यास्थापन का अनुरोध करते हुए फाइल किया गया है । आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – आवेदन और प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए उत्तर के परिशीलन मात्र से यह स्पष्ट होता है कि इस न्यायालय द्वारा तारीख 28 अप्रैल, 2009 के आदेश द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति के पश्चात् किसी भी पक्षकार ने अपने विवाद पर विनिश्चय के लिए मध्यस्थ से संपर्क करने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई और इसके पश्चात् प्रत्यर्थियों ने वर्ष 2015 में एक के बाद एक पत्र लिखने आरंभ किए और जैसे ही निर्देश से संबंधित पत्र प्राप्त हुए, मध्यस्थ ने उनके आधार पर निर्देश में कार्रवाई की और तब प्रत्यर्थियों ने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए पुन: आक्षेप फाइल किए कि चूंकि वह सुसंगत समय पर जैसलमेर में नियुक्त होने के कारण करार से संबद्ध था इसलिए क्या वह अपने पद पर रहते हुए विवाद उठाने के संबंध में आवश्यक रूप से मताभिव्यक्ति कर सकता है जिस पर मध्यस्थ ने माध्यस्थम् जारी रखने से इनकार कर दिया । घटनाओं के संपूर्ण क्रम से जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि पक्षकारों ने मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाहियां करने के लिए सामान्य रीति में संपर्क किया और उन्होंने 6-7 वर्ष तक मध्यस्थ से संपर्क नहीं किया और मध्यस्थ ने अपनी नियुक्ति की जानकारी होने के बावजूद सूचना जारी करना पसंद नहीं किया, तथापि, अब मध्यस्थ ने सुसंगत समय पर विवादित स्थान पर नियुक्त होने के कारण कार्रवाई करने से इनकार कर दिया इसलिए अधिनियम की धारा 15 द्वारा यथा परिकल्पित परिस्थितियां उत्पन्न हुई जिसमें मध्यस्थ को हटाने का उपबंध है क्योंकि वह अपने पद से हट गया है इसलिए इस न्यायालय द्वारा प्रत्यास्थापित मध्यस्थ नियुक्त किए जाने की आवश्यकता है । प्रत्यर्थियों द्वारा उत्तर में कतिपय निवेदन किए गए हैं जिसमें उन्होंने दावे की ग्राह्यता के प्रश्न के संबंध में आक्षेप किया है तथापि, अधिनियम की धारा 11(6-क) के उपबंधों को दृष्टिगत करते हुए ये सभी विवाद्यक मध्यस्थ के समक्ष उठाए जाएंगे । (पैरा 8, 9 और 10)

आरंभिक (सिविल) अधिकारिता : 2017 का एस. बी. माध्यस्थम् आवेदन सं. 9.

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 14 और 15 के अधीन आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री प्रदीप चौधरी

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री के. डी. चौधरी

न्यायमूर्ति अरुण भंसाली – आवेदक द्वारा माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 14 और 15 के अधीन यह आवेदन मध्यस्थ के प्रत्यास्थापन का अनुरोध करते हुए फाइल किया गया है ।

2. पक्षकारों के बीच विवाद को सुलझाने के लिए तारीख 28 अप्रैल, 2009 के आदेश (आवेदन का उपाबंध-1) द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 को पक्षकारों के बीच विवाद का विनिश्चय करने के लिए मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया था ।

3. यह दावा किया गया है कि तारीख 28 अप्रैल, 2009 के आदेश द्वारा नियुक्त किए गए मध्यस्थ ने पक्षकारों को उनका दावा फाइल करने के लिए आहूत करते हुए तारीख 25 मार्च, 2016 के अपने पत्र द्वारा निर्देश दिया था । आवेदक ने तारीख 7 अप्रैल, 2016 को अपना दावा फाइल किया । तथापि, प्रत्यर्थी ने मध्यस्थ को यह सूचना दी कि सुसंगत समय पर वह किलिन का भारसाधक था, जिसके आधार पर मध्यस्थ द्वारा तारीख 21 सितंबर, 2016 को माध्यस्थम् में कार्यवाही करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए एक संसूचना जारी की गई थी ।

4. उपर्युक्त निवेदन के आधार पर मध्यस्थ के प्रत्यास्थापन का अनुरोध करते हुए आवेदन फाइल किया गया है ।

5. जब तारीख 13 जुलाई, 2018 को इस न्यायालय के समक्ष मामला पेश किया गया तो आवेदक से यह उपदर्शित करते हुए एक शपथपत्र फाइल करने के लिए कहा गया था कि आवेदक द्वारा तारीख 28 अप्रैल, 2008 के जो इस न्यायालय द्वारा 2008 के एस. बी. सिविल प्रकीर्ण माध्यस्थम् सं. 52 में इस न्यायालय द्वारा पारित किया गया था, अनुसरण में क्या कार्रवाई की गई है क्योंकि प्रत्यक्षतया

मध्यस्थ ने उक्त आदेश पारित किए जाने के 7 वर्ष के पश्चात् निर्देश में कार्रवाई की थी ।

6. आवेदक ने शासकीय प्रत्यर्थियों के विरुद्ध अभिकथन करते हुए एक शपथपत्र अभिलेख पर पेश किया जिसमें उसने माध्यस्थम् कार्यवाहियों से बचने के बारे में बताया और इसके पश्चात् मध्यस्थ ने निर्देश में कार्रवाई करते हुए सूचना जारी की ।

7. सूचनाएं जारी किए जाने के पश्चात् प्रत्यर्थियों ने उत्तर फाइल किया जिसमें उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ यह उपदर्शित किया कि न्यायालय द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति के पश्चात् प्रत्यर्थियों को कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई थी और इसके पश्चात् प्रथमत: तारीख 3 फरवरी, 2015 को एक पत्र (उपाबंध-आर/1) जारी किया गया था और तत्पश्चात् तारीख 3 जुलाई, 2015, तारीख 10 अगस्त, 2015, तारीख 7 अक्तूबर, 2015 और तारीख 22 फरवरी, 2016 को पत्र जारी किए गए थे जिसके पश्चात् मध्यस्थ द्वारा निर्देश पर कार्यवाही करते हुए सूचना जारी की गई थी और जब मध्यस्थ को यह उपदर्शित करते हुए कि वह सुसंगत समय पर जैसलमेर में नियुक्त था और करार से संबद्ध था और इसलिए क्या वह इस पहलू पर विनिश्चय कर सकता है, तारीख 26 मई, 2016 को एक पत्र (उपाबंध-आर/2) भेजा गया था ।

8. आवेदन और प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए उत्तर के परिशीलन मात्र से यह स्पष्ट होता है कि इस न्यायालय द्वारा तारीख 28 अप्रैल, 2009 के आदेश द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति के पश्चात् किसी भी पक्षकार ने अपने विवाद पर विनिश्चय के लिए मध्यस्थ से संपर्क करने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई और इसके पश्चात् प्रत्यर्थियों ने वर्ष 2015 में एक के बाद एक पत्र लिखने आरंभ किए और जैसे ही निर्देश से संबंधित पत्र प्राप्त हुए, मध्यस्थ ने उनके आधार पर निर्देश में कार्रवाई की और तब प्रत्यर्थियों ने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए पुन: आक्षेप फाइल किए कि चूंकि वह सुसंगत समय पर जैसलमेर में नियुक्त होने के कारण करार से संबद्ध था इसलिए क्या वह अपने पद पर रहते हुए विवाद उठाने के संबंध में आवश्यक रूप से मताभिव्यक्ति

कर सकता है जिस पर मध्यस्थ ने माध्यस्थम् जारी रखने से इनकार कर दिया ।

9. घटनाओं के संपूर्ण क्रम से जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, स्पष्ट रूप से यह उपदर्शित होता है कि पक्षकारों ने मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाहियां करने के लिए सामान्य रीति में संपर्क किया और उन्होंने 6-7 वर्ष तक मध्यस्थ से संपर्क नहीं किया और मध्यस्थ ने अपनी नियुक्ति की जानकारी होने के बावजूद सूचना जारी करना पसंद नहीं किया, तथापि, अब मध्यस्थ ने सुसंगत समय पर विवादित स्थान पर नियुक्त होने के कारण कार्रवाई करने से इनकार कर दिया इसलिए अधिनियम की धारा 15 द्वारा यथा परिकल्पित परिस्थितियां उत्पन्न हुई जिसमें मध्यस्थ को हटाने का उपबंध है क्योंकि वह अपने पद से हट गया है इसलिए इस न्यायालय द्वारा प्रत्यास्थापित मध्यस्थ नियुक्त किए जाने की आवश्यकता है ।

10. प्रत्यर्थियों द्वारा उत्तर में कतिपय निवेदन किए गए हैं जिसमें उन्होंने दावे की ग्राह्यता के प्रश्न के संबंध में आक्षेप किया है तथापि, अधिनियम की धारा 11(6-क) के उपबंधों को दृष्टिगत करते हुए ये सभी विवाद्यक मध्यस्थ के समक्ष उठाए जाएंगे ।

11. उपर्युक्त तथ्यात्मक स्थिति को दृष्टिगत करते हुए आवेदक द्वारा फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया जाता है । श्री एन. आर. मेहता, सेवानिवृत्त मुख्य इंजीनियर, जल संसाधन विभाग, निवासी जी-52, शास्त्री नगर, जोधपुर (राजस्थान) को राजस्थान मैन्युअल आफ प्रोसीज्यूर फार अल्टरनेटिव डिसपियूट रैग्युलेशन, 2009 अद्यतन यथा संशोधित के अनुसार पक्षकारों के बीच विवादों का न्यायनिर्णयन करने के लिए मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया जाता है । उपर्युक्त नियुक्ति अधिनियम की धारा 12 के अधीन आवश्यक प्रकटीकरण किए जाने के अध्यधीन की गई है ।

आवेदन मंजूर किया गया ।

महे.

(2019) 2 सि. नि. प. 700 हिमाचल प्रदेश

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती मंजानी कुमारी और अन्य

[2017 की एफ.ए.ओ. (एम.वी.ए.) सं. 369]

तारीख 24 मई, 2019

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 166 – मृतक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक की भविष्य की संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए, जहां मृतक स्थायी नौकरी करता था और उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी, उसके वास्तविक वेतन का 50 प्रतिशत, जहां मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के मध्य थी, उसके वास्तविक वेतन का 30 प्रतिशत और जहां मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष के मध्य थी, उसके वास्तविक वेतन का 15 प्रतिशत प्रतिकर में जोड़ा जाएगा ।

मोटर यान अधिनियम, 1988 – धारा 166 – मृतक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – मृतक की भविष्य की संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए, जहां मृतक स्वनियोजित था या स्थिर वेतन पर था और उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी, तो उसकी वास्तविक आय का 40 प्रतिशत, जहां मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के मध्य थी तो उसकी वास्तविक आय का 25 प्रतिशत और जहां मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष थी तो उसकी आयु का 10 प्रतिशत प्रतिकर में जोड़ा जाएगा ।

मोटर यान अधिनियम, 1988 – धारा 166 – मृतक के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिकर के लिए आवेदन – गुणांक के विनिर्धारण सरला वर्मा वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 30 से 32 द्वारा निर्देशित होंगे और गुणांक का चयन इसी मामले में उपदर्शित सारणी के

अनुसार होगा और मृतक की आयु गुणांक लागू किए जाने के प्रयोजनार्थ आधार मानी जाएगी ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 ने मृतक के विधिक प्रतिनिधि होने के नाते हिमाचल प्रदेश के रामपुर बुशाहर के किन्नौर के विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण के समक्ष मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 166 के अधीन प्रतिकर का दावा करते हुए याचिका यह अभिकथित करते हुए फाइल की कि मृतक तारीख 16 सितंबर, 2014 को एक अन्य यान द्वारा दूध को ढोने और विक्रय करने के पश्चात् अपराधकारी यान द्वारा अन्य व्यक्तियों के साथ रामपुर से वापस आ रहा था जिसकी दुर्घटना हुई और परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षति पहुंची और उसकी मृत्यु हो गई । यान का चालन गोविन्द राम द्वारा किया जा रहा था, घटना में मृतक और अन्य दो व्यक्तियों तथा चालक ने घटनास्थल पर ही दम तोड़ दिया । चूंकि मृतक अपने कुटुम्ब का मुखिया था और वही कुटुम्ब का एकमात्र कमाने वाला व्यक्ति था, उसके विधिक प्रतिनिधियों प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 ने मोटर दुर्घटना दावा याचिका फाइल करते हुए तीस लाख रुपए की राशि का प्रतिकर दिलाए जाने का दावा किया । विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण में प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 द्वारा फाइल की गई दावा याचिका को मंजूर करते हुए अपीलार्थी बीमा कंपनी को 19,61,000/- रुपए के प्रतिकर का संदाय किए जाने के लिए निर्देशित किया । विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण के आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी बीमा कंपनी ने प्रस्तुत अपील फाइल की । अपील आंशिक रूप से मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह न्यायालय ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम प्रणय सेठी और अन्य वाले मामले में दिए गए पूर्वोक्त निर्णय का परिशीलन करते हुए अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल के साथ इस बाबत-सहमत की है कि सहजीविका की हानि के कारण, कार्य की हानि, प्रेम और स्नेह की हानि तथा अंतिम संस्कार के खर्चों के कारण है कि विद्वान् निचले अधिकारण द्वारा अधिनर्णीत रकम, को पुन:निर्धारण किए जाने की आवश्यकता है । प्रणय सेठी वाले मामले में

अधिकथित विधि को दृष्टिगत करते हुए सहजीविका की हानि के लिए 40,000/- रुपए, संपदा और अंतिम संस्कार खर्चों की हानि के कारण प्रति 15,000/- रुपए का अधिनिर्णय किया जाना चाहिए और प्रेम और स्नेह की हानि के बाबत कोई रकम अधिनिर्णीत नहीं की जा सकती की । जहां तक मृतक की आय और निर्भरता की हानि का संबंध है, यह न्यायालय निचले विद्वान् अधिकरण द्वारा ऐसी निर्धारित रकम में कोई अनियमितता नहीं पाती । इसी प्रकार से इस न्यायालय ने विद्वान् निचले अधिकरण द्वारा गुणांक लागू करने में कोई अवैधता नहीं पाई, जिसको विधि के अनुसार सही प्रकार से लागू किया है । परिणाम स्वरूप प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3/दावेदारों को किए गए पूर्वोक्त उपांतरणों को दृष्टिगत करते हुए, विभिन्न शीर्षकों के अधीन निम्नलिखित रकमों के लिए हकदार ठहराया जाता है :–

1. निर्भरता की हानि	15,36,000/- रुपए
2. याची संख्या 1 का सहजीविका की हानि	40,000/- रुपए
3. कार्य की हानि	15,000/- रुपए
4. अंतिम संस्कार के खर्चे	15,000/- रुपए
कुल	16,06,000/- रुपए

तथापि, यह न्यायालय प्रतिकर की रकम पर अधिनिर्णीत ब्याज की दर में हस्तक्षेप का कोई कारण नहीं पाता और इसलिए, इसे मान्य ठहाराया जाता है, रकम का विभाजन इस प्रकार किया जाएगा :–

प्रत्यर्थी संख्या 1	6,06,000/- रुपए
प्रत्यर्थी संख्या 2	5,00,000/- रुपए
प्रत्यर्थी संख्या 3	5,00,000/- रुपए

प्रत्यर्थी संख्या 3 के हिस्से में आने वाली रकम को पांच वर्ष की अवधि के लिए सावधि जमा में निवेश किया जाए । परिणामस्वरूप, ऊपर विस्तारपूर्वक की गई चर्चा और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए वर्तमान अपील को आंशिक रूप से मंजूर किया जाता है और निचले विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय

को केवल उपरोक्त सीमा तक उपांतरित किया जाता है । (पैरा 18, 19, 20, 21 और 22)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5157 :
नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** । 16

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2017 की एफ.ए.ओ. (एम.वी.ए.) सं. 369.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 सपठित आदेश या नियम 1 और 2 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से डा. ललित कुमार शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री विवेक शर्मा, अधिवक्ता, प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 की ओर से कुमारी रूबीना भट्ट, अधिवक्ता, प्रत्यर्थी संख्या 4 की ओर से

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – अपीलार्थी-ओरियंटल बीमा कंपनी लिमिटेड (जिसे इसमें इसके बाद "अपीलार्थी-बीमा कंपनी" कहा गया है) ने वर्तमान अपील द्वारा 2015/2016 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका संख्या 37-R/2 श्रीमती मंजानी कुमारी और अन्य बनाम ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और एक अन्य वाले मामले में हिमाचल प्रदेश के रामपुर बुशाहर में कन्नौर के विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण संख्या 2 द्वारा तारीख 23 मई, 2017 को पारित अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा विद्वान् निचले अधिकरण ने प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3-दावेदारों द्वारा फाइल की गई दावा याचिका को मंजूर करते हुए अपीलार्थी-बीमा कंपनी प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3-दावेदावारों को याचिका फाइल किए जाने की तारीख से रकम की अंतिम वसूली तक 9 प्रतिशत

प्रतिवर्ष की दर से 9 प्रतिशत ब्याज सहित 19,61,000/- रुपए के प्रतिकर का संदाय करने का दायी ठहराया । यद्यपि विद्वान् निचले अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी-बीमा कंपनी और प्रत्यर्थी संख्या 4 संयुक्त रूप से और व्यक्तिगत रूप से दायी हैं, परन्तु अपीलार्थी-बीमा कंपनी को बीमाकर्ता होने के नाते दावेदारों को क्षतिपूर्ति देने के लिए निर्देशत किया गया है ।

2. संक्षेप में अभिलेख पर प्रस्तुत तथ्य इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3 ने मृतक शेर सिंह का विधिक प्रतिनिधि होने के नाते हिमाचल प्रदेश के रामपुर बुशाहर में किन्नौर के विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण संख्या 2 के समक्ष मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन याचिका यह अधिकथित करते हुए फाइल की कि मृतक शेर सिंह तारीख 16 सितंबर, 2014 को रजिस्ट्रेशन संख्या एच.पी. 06ए-3682 वाले यान में दूध के ढोने और विक्रय करने के पश्चात् अन्य व्यक्तियों के साथ रामपुर से आ रहा था, जिसकी दुर्घटना घटित हुई और जिसके परिणामस्वरूप उसे गंभीर क्षति पुहंची, फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई । प्रत्यर्थी-दावेदारों ने याचिका में यह प्रकथन किया है कि यान का चालन मृतक चालक गोविंद राम द्वारा किया जा रहा था । पूर्वोक्त दुर्घटना में शेर सिंह और अन्य दो व्यक्तियों की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई । चूंकि मृतक शेर सिंह कुटुंब का मुखिया था और वह कुटुंब का एकमात्र कमाने वाला व्यक्ति था, प्रत्यर्थी-दावेदारों ने ऊपरनिर्दिष्ट दावा याचिका द्वारा 30 लाख रुपए की राशि के प्रतिकर का दावा किया ।

3. अपीलार्थी-बीमा कंपनी ने दावा याचिका का विरोध इस आधार पर किया है कि प्रत्यर्थी/दावेदारों ने यान रजिस्ट्रेशन संख्या एच.पी.-06ए-3682 के स्वामी ज्ञान दास, प्रत्यर्थी संख्या 4 के साथ मिलीभगत से दावा याचिका फाइल की है । अपीलार्थी-बीमा कंपनी ने विद्वान् निचले अधिकरण के समक्ष यह दावा भी किया है कि मृतक चालक गोविंद राम के पास प्रभावी और विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी और यान का चालन बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों के उल्लंघन में किया जा रहा था, और इस प्रकार, अपीलार्थी-बीमा कंपनी बीमाकृत को क्षतिपूर्ति की दायी नहीं है । उपरोक्त के अतिरिक्त, अपीलार्थी-बीमा कंपनी ने यह

दावा भी किया है कि मृतक शेर सिंह अभागे यान में एक नि:शुल्क यात्री के रूप यात्रा कर रहा था और इसलिए, कथित दुर्घटना में उसकी मृत्यु के कारण अपीलार्थी-बीमा कंपनी प्रतिकर संदत्त किए जाने की दायी नहीं है ।

4. प्रत्यर्थी संख्या 4 ज्ञान दास ने पृथक् प्रत्युत्तर फाइल करते हुए, अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी द्वारा जारी की गई बीमा पालिसी को अभिलेख पर प्रस्तुत करते हुए दावा किया कि प्रत्यर्थियों/दावेदारों द्वारा दावा की गई राशि अत्यधिक और किसी बिना आधार के है ।

5. निचले विद्वान् अधिकरण ने संबंधित पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के आधार पर, तारीख 4 जनवरी, 2016 को निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए :-

"1. क्या श्री शेर सिंह की मृत्यु यान संख्या एच.पी.06ए-3682 को उसके चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण मोटर यान दुर्घटना में हुई ?

2. क्या दावेदार प्रतिकर के हकदार हैं, यदि हां तो कितनी धनराशि के लिए और किससे ?

3. क्या मृतक सुसंगत समय पर अपराधकारी यान में अनधिकृत नि:शुल्क यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था जैसाकि अधिकथित किया गया है ?

4. क्या याचिका को प्रत्यर्थी सं. 2 से मिलीभगत करके फाइल किया गया है, जैसा कि अभिकथित किया गया है ?

5. क्या सुसंगत समय पर अपराधकारी यान के चालक के पास विधिमान्य और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी, जैसा कि अधिकथित किया गया है ?

6. क्या अपराधकारी यान का चालक सुसंगत समय पर बीमा पालिसी के निबंधनों और शर्तों के उल्लंघन में विधिमान्य और प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी जैसा कि अभिकथित किया गया है ?

7. अन्य कोई अनुतोष ।"

6. तत्पश्चात्, विद्वान् निचले अधिकरण ने तारीख 23 मई, 2017 के अधिनिर्णय द्वारा दावेदारों को 19,61,000/- रुपए की राशि दावेदारों का हकदार, सम्पूर्ण रकम की वसूली तक 9 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज सहित होना अभिनिर्धारित किया । रामपुर बुशाहर स्थित किन्नौर के मोटर दुर्घटना अधिकरण संख्या 2 द्वारा पारित पूर्वोक्त अधिनिर्णय से व्यथित और असंतुष्ट होकर अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी ने हमारे समक्ष उपस्थित कार्यवाहियों में के माध्यम से इस न्यायालय की शरण ली जिसमें अधिनिर्णय को खंडित किए जाने की प्रार्थना की गई है ।

7. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने और साथ ही निचले विद्वान् अधिकारी द्वारा समनुदेशित तर्कणा पर विचारोपरांत यह न्यायालय अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के विद्वान् से सहमत होने के बाबत आश्वस्त नहीं है कि विद्वान् निचले अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय तथ्यों और साथ ही पक्षों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए अपने-अपने साक्ष्य के उचित मूल्यांकन पर आधारित नहीं है, बल्कि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि विद्वान् निचले अधिकरण ने न केवल साक्ष्य का केवल सूक्ष्म और सावधानीपूर्वक परिक्षण किया है, बल्कि उनका उचित परिप्रदेश में मूल्यांकन भी किया है और इस प्रकार, यह न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं हैं ।

8. प्रत्यर्थियों/दावेदारों ने अभिलेख पर निश्चायक और ठोस साक्ष्य द्वारा इस बात को सफलतापूर्वक साबित कर दिया है कि अभिकथित दुर्घटना की तारीख पर, अपराधकारी यान का चालन मृतक चालक गोविंद राम द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण तरीके से किया जा रहा था ।

9. अभि. सा. 1 श्रीमती मंजिनी देवी ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श अभि. साक्ष्य 1/बी और शव-परीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श अभि. साक्ष्य 1/सी की प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की, जिसके परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि दुर्घटना मृतक, गोविंद राम द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण घटी थी जो सुसंगत समय पर रजिस्ट्रेशन

संख्या एच.पी.06ए-3682 वाले अपराधकारी यान का चालन कर रहा था । इसी प्रकार से शव-परीक्षा रिपोर्ट के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मृतक शेर सिंह की मोटर यान दुर्घटना में कारित क्षतियों के कारण मृत्यु हुई थी ।

10. अभि. सा. 2 टिक्कम राम जो कथित दुर्घटना का एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है, तारीख 16 अप्रैल, 2014 को गवाही दी कि, वह मृतक और शेर सिंह के साथ अपराधकारी यान में अपने साथ दूध लेकर रामपुर गया था । यान का चालन गोविंद राम कर रहा था । उन्होंने रामपुर में दूध बेचा और जब वे अपने घर वापस आ रहे थे, तो प्रश्नगत यान को चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाने के कारण दुर्घटना घटित हुई जिसमें शेर सिंह और मृतक की मृत्यु हो गई । इस साक्षी ने अपने समक्ष रखे गए इस प्रतिपरीक्षा में इस साक्षी ने अपने समक्ष रखे गए इस सुझाव से इनकार कर दिया कि दुर्घटना चालक की त्रुटि के कारण घटित नहीं हुई थी ।

11. यह दिलचस्प है कि प्रत्यर्थी संख्या 4 या अपीलार्थी-बीमा कंपनी द्वारा दावेदारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए पूर्वोक्त साक्ष्य के खंडन में कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है इसलिए विद्वान् निचले अधिकरण द्वारा मृतक चालक, गोविंद राम द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चालन के विवाद्यक पर कोई अवैधता कारित किया जाना प्रतीत नहीं होता ।

12. अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के प्रतिनिधि प्रत्यर्थी साक्षी-1 आकाश के. वर्मा के कथन की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित करते हुए, प्रबलता से यह तर्क दिया कि चूंकि अभिलेख पर यह बात विधिवत् रूप से साबित हो गई है कि मृतक अपराधकारी यान में मुफ्त यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था, इसलिए विद्वान् निचले अधिकरण के लिए ऐसा कोई अवसर नहीं था कि वे प्रत्यर्थी संख्या से 3/दावेदारों द्वारा फाइल की गई दावा याचिकों पर विचार करते ।

13. तथापि, मामले संबंधित पक्षकारों द्वारा मामले के पूर्वोक्त

पहलू पर अभिलेख पर प्रस्तुत लिए गए साक्ष्य का सावधानीपूर्वक परीक्षण किए जाने के पश्चात्, यह न्यायालय अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के विद्वान् काउंसेल की पूर्वोक्त दलील से सहमत होने की इच्छुक नहीं है क्योंकि प्रत्यर्थी साक्षी-1 आकाश कुमार के कथन के कोरे परिशीलन से अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के मामले में यह बात बिल्कुल साबित नहीं होती कि मृतक अपराधकारी यान में मुफ्त यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था बल्कि इसमें दावदारों द्वारा अभिलेख पर इस बाबत-अत्यधिक साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है कि प्रश्नगत यान "माल वाहन यान" के रूप रजिस्ट्रीकृत था और मृतक अपराधकारी यान में अन्य व्यक्तियों के साथ नियमित रूप से दूध लेकर दूध प्लांट को जा रहा था ।

14. प्रत्यर्थी साक्षी संख्या 2 तिलक राम ने यह स्वीकर करते हुए कहा कि वह केपू स्थित दूध संयंत्र प्लांट में एक भारसाधक के रूप में कार्यरत था, निचले विद्वान् न्यायालय के समक्ष स्पष्ट रूप से यह अभिकथित किया कि तारीख 16 सितंबर, 2014 तक दूध प्लांट में अनुरक्षित अभिलेख के अनुसार, उसने ज्ञान दास के यान द्वारा दूध संयंत्र में 342 लीटर दूध प्राप्त किया गया था और तत्पश्चात् तारीख 17 सितंबर, 2014 से दूध प्राप्त नहीं किया गया और तारीख 18 सितंबर, 2014 को दूसरे यान से दूध प्राप्त किया गया । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया कि वे व्यक्तिगत रूप से और पृथक् रूप से दूध के विक्रेताओं के अभिलेख अनुरक्षित नहीं रखते । इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया कि द्रुतशीतन संयंत्र (चिलिंग प्लाट) का दूध का परिवहन किए जाने के लिए गोविंद राम के साथ करार था ।

15. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि मृतक अन्य लोगों के साथ दूध एकत्रित करने और उसे चिलिंग प्लांट को बेचता था । मृतक ने ग्राम के अन्य व्यक्तियों के साथ 200 रुपए प्रतिदिन के आधार पर प्रत्यर्थी संख्या 4 ज्ञान दास का यान किराए पर लिया था । अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के प्रतिनिधि प्रत्यर्थी साक्षी 1 आकाश कुमार के कथन मात्र यह निष्कर्ष निकाले जाने के लिए पर्याप्त नहीं है कि कथित दुर्घटना के समय मृतक मुफ्त यात्रा कर रहा था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया है कि

उसने दुर्घटना को घटित होते हुए नही देखा था । यद्यपि इस साक्षी ने यह अभिकथित किया कि कंपनी ने दुर्घटना के पश्चात् अन्वेषक की नियुक्ति की थी परन्तु उक्त अन्वेषक की रिपोर्ट अभिलेख पर कभी भी प्रस्तुत नही की गई । यह न्यायालय उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए, अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलील में कोई गुणागुण नहीं पाता कि मृतक दुर्भाग्यग्रस्त यान में मुफ्त यात्री के रूप में यात्रा कर रहा था, इसलिए, तद्नुसार, इस दलील को न्यायतः अस्वीकृत किया गया है ।

16. विभिन्न शीर्षकों के अधीन विद्वान् निचले अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर की राशि को सावधनीपूर्वक परिशीलन करने पर, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि विद्वान् निचले न्यायालय ने याची संख्या 1 की सहजीविका की हानि के बाबत 1 लाख रुपए और अंतिम संस्कार के खर्चों के बाबत 25,000/- रुपए की धनराशि के प्रतिकर का अधिनिर्णय पारित करके त्रुटि कारित की है । इसी प्रकार से दावेदार संख्या 2 और 3 को प्रेम और स्नेह की हानि के कारण कोई धनराशि अधिनर्णीत नहीं की जा सकी । विद्वान् निचले अधिकरण ने उसी संपदा की हानि के कारण 1 लाख रुपए की रकम प्रदान किए जाने में भी त्रुटि कारित की, अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी के विद्वान् काउंसेल के तर्क में प्रतीत होता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में रखते हुए, विद्वान् निचले अधिकरण ने विभिन्न अन्य शीर्षकों अर्थात् सहजीविका की हानि, संपदा की हानि, प्रेम और स्नेह की हानि तथा अंतिम संस्कार के व्यय के अधीन धनराशि गलत तरीके से अधिनिर्णीत की है और इसलिए आक्षेपित अधिनिर्णय को उस सीमा तक संशोधित किए जाने की आवश्यकता है ।

17. इस प्रक्रम पर पूर्वोक्त निर्णय के निम्नलिखित पैरा को प्रत्युपादित किया जाना लाभप्रद होगा जो निम्नलिखित है :-

---

[1] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 5157.

"47. हमारी सुविचारित राय में, यदि इसका अनुसरण किया जाता है, तो इससे न्याय के उद्देश्य की पूर्ति होगी और अधिकरणों और न्यायालयों के समक्ष अनावश्यक विवादों से बचा जा सकेगा ।

48. अन्य पहलू जिससे उस की स्थिति उत्पन्न हुई कार्य की हानि, सहजीविका की हानि और अंतिम संस्कार व्यय को प्रदान करने के संबंध में है । **संतोष देवी** (उपर्युक्त) वाले मामले में, दोनों-न्यायाधीश की खंडपीठों ने पारंपरिक पद्धति का अनुसरण किया और शव के परिवहन के लिए 5,000/- रुपए, अंतिम संस्कार व्ययों के रूप में 10,000/- रुपए और सहजीविका की हानि के संबंध में 10,000/- रुपए प्रदान किए । सरला वर्मा वाले मामले में, न्यायालय ने कार्य की हानि के शीर्षक के अधीन 5,000/- रुपए, अंतिम संस्कार के व्ययों के लिए 5,000/- रुपए, सहजीविका की हानि के लिए 10,000/- रुपए का प्रदान किए । राजेश वाले मामले में, न्यायालय ने सहजीविका की हानि के लिए 1,00,000/- रुपए और अंतिम संस्कार के व्ययों के लिए 25,000/- रुपए प्रदान किए । न्यायालय ने अवयस्क बच्चों की देखरेख और मार्गदर्शन की हानि के लिए भी 1,00,000/- रुपए मंजूर किए थे । न्यायालय ने इस सिद्धांत के आधार पर इसमें वृद्धि की कि सामाजिक आर्थिक विवाद्यक पर एकरूपता और स्थिरता को अभिप्राप्त किए जाने के लिए विरचित फार्मूला को विधिक सिद्धांत से विमेदित किया जाना होगा और इसका समय-समय पर पुनरीक्षण करना होगा जैसा कि **संतोष देवी** (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । न्यायालय ने पुनरीक्षण के सिद्धांत पर परंपरागत शीर्षकों के संबंध में आधार पर उनमें रकमें निर्धारित की । इस संबंध मे न्यायालय द्वारा जिस बात पर विचार किया गया, वह है मुद्रास्फूर्ति और मूल्य सूचकांक । न्यायालय द्वारा सहजीविका की हानि की धारणा पर भी विचार किया गया । न्यायालय द्वारा इस संबंध में जो कुछ कहा गया है, हम उस पर विचार करने के लिए इच्छुक हैं । हम उद्घटित करते है :–

17. ....विधिक दृष्टिकोण में "सहजीविका" अपने या अपनी साथी के साथ साहचर्य, देखभाल, सहायता, सुख पहुंचाना, मार्गदर्शन, समाज, धीरज, स्नेह और लैंगिक सम्बंधों अपने या अपनी साथी के साथ यौन संबंधों के अधिकार हैं । गैर-धन संबंधी नुकसान के शीर्षक को हमारे न्यायालयों द्वारा उचित रूप से समझा नहीं गया है । पति-पत्नी जो साहचर्य, प्रेम, देखभाल और संरक्षण इत्यादि को प्राप्त करने के हकदार होते है की हानि का उन्हे प्रतिकर, समुचित रूप में दिया जाना चाहिए । सहजीविका की हानि के लिए गैर-धनसंबंधी नुकसान की धारणा विश्व के अन्य भागों में प्रतिकर प्रदान किए जाने के मुख्य शीर्षकों में से एक विशेष रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया इत्यादि में । अंग्रेजी न्यायालयों ने भी अस्थायी नि:शक्तता की अवधि के दौरान भी पति-पत्नी को प्रतिकर पाने के अधिकार को मान्यता प्रदान की है । न्यायालयों ने सहजीविका की हानि के रूप में पति-पत्नी के स्नेह, धीरज, साहचर्य, समाज, सहायता, संरक्षण, देखभाल और भविष्य में यौन संबंधों की हानि का प्रतिकर प्रदान करने का प्रयास किया है । अन्य देशों और अधिकारिताओं में प्रतिकर अधिनिर्णीत किए जाने को भांति चूंकि विधिक उत्तराधिकारियों को धनसंबंधी हानि के लिए अन्यथा भी पर्याप्त रूप से प्रतिकर प्रदान कर दिया गया है, इस शीर्षक के अधीन मुख्य रकम प्रदान किया जाना उचित नहीं होगा । इसलिए, हमारा यह विचार है कि यह उचित और युक्तिसंगत केवल तब होगा जब न्यायालय सहजीविका की हानि के लिए कम से कम एक लाख रुपए अधिनिर्णीत करे ।

60. विवाद यहीं पर समाप्त नहीं होता । अभी भी यह प्रश्न बना हुआ है कि क्या ऐसी स्थिति में जहां मृतक की आयु 50 वर्ष से अधिक है । सरला वर्मा वाले मामले में इस बात को उचित समझा गया कि ऐसी स्थिति में कुछ रकम जोड़ी जाए और इस बात का अनुमोदन रेशमा कुमारी वाले मामले में भी किया गया है ।

इस तथ्य का न्यायिक रूप से संज्ञान लिया जा सकता है कि वेतन एक समान नहीं रहता । जब कोई व्यक्ति स्थायी नौकरी में होता है, तो उसके वेतन में किसी न किसी कारणवश सदैव बढ़ोत्तरी होती रहती है । यह बात स्थिर विधि के रूप में अधिकथित किए जाने के प्रयोजनार्थ अस्वीकार्य धारणा होगी कि 50 वर्ष की आयु के पश्चात् कोई रकम जोड़ी नही जाएगी । हम इस बात पर विचार करने के लिए आनत है कि इसमें 15 प्रतिशित की बढ़ोत्तरी होनी चाहिए यदि मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष के मध्य है और तत्पश्चात् इसमें कोई बढ़ोत्तरी नहीं होनी चाहिए । इसी प्रकार से यदि कोई व्यक्ति, स्वनियोजित है या स्थिर वेतन पर नियोजित है, तो 50 से 60 वर्ष की आयु के मध्य 10 प्रतशित बढ़ोत्तरी होनी चाहिए । पूर्वोक्त मापदंड इसलिए निर्धारित किए गए हैं ताकि अधिकरणों और न्यायालयों द्वारा की जाने वाली मताभिव्यक्तियों में सामंजस्य हो ।

61. हम पूर्वोक्त विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए, अपने निष्कर्षों को अभिलेखित करते है :-

(1) संतोष देवी वाले मामले में दो न्यायाधीशों की न्यायापीठ को इस बाबत सुविचारित सलाह दी जानी चाहिए की कि मामले को वृहत्तर न्यायापीठ को निर्दिष्ट किया जाना चाहिए चूंकि वह सरला वर्मा वाले मामले में समकक्ष न्यायापीठ द्वारा दिए गए निर्णय मे भिन्न मत व्यक्त कर रही थी । ऐसा इस कारणवश है क्योंकि समान क्षमता वाली समकक्ष न्यायापीठ उस मत मे भिन्न मत व्यक्त नहीं कर सकती जो मत पूर्व में किसी अन्य समकक्ष न्यायापीठ द्वारा अभिनिर्धारित किया जा चुका है ।

(2) क्योंकि राजेश वाले मामले में रेशमा कुमारी वाले मामले में दिए गए विनिश्चय जो पूर्ववर्ती समय बिंदु पर सुनाया गया था, का उल्लेख नहीं किया गया है, इसलिए राजेश वाले मामले में दिया गया विनिश्चय बाध्यकारी पूर्वनिर्णय नहीं है ।

(3) आय का विनिर्धारण किए जाने के प्रयोजनार्थ मृतक की भविष्य की संभाव्यताओं को ध्यान में रखते हुए उसके वास्तविक वेतन का 50% जोड़ा जाना चाहिए जहां मृतक स्थायी नौकरी करता था और उसकी आयु 40 वर्ष से कम थी । यदि मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के मध्य थी तो 30 प्रतिशत जोड़ा जाना चाहिए । यदि मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष के मध्य थी, इसमें 15 प्रतिशत जोड़ा जाना चाहिए । वास्तविक वेतन को कर (टैक्स) घटाकर वास्तविक वेतन के रूप पढ़ा जाना चाहिए ।

(4) यदि मृतक स्वनियोजित था या स्थिर वेतन पर था, तो उसके द्वारा साबित की गई आय का 40 प्रतिशत जोड़ा जाना चाहिए, जहां मृतक की आयु 40 वर्ष से कम थी । जहां मृतक की आयु 40 से 50 वर्ष के मध्य थी और वहां 10 प्रतिशत जोड़ना चाहिए जहां मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष के मध्य थी, 25% जोड़ा जाना चाहिए और जहां मृतक की आयु 50 से 60 वर्ष के मध्य थी, 10% जोड़ा जाना चाहिए । साबित की गई आय का अर्थ है कर के संघटक को घटा कर प्राप्त होने वाली आय ।

(5) अधिकरण और न्यायालय गुणांक के विनिर्धारण, व्यक्तिगत और रहन सहन के खर्चों के बाबत कटौती के लिए सरला वर्मा वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 30 से 32 द्वारा निर्देशित होंगे, जिसको हमने इसमें पूर्व में प्रत्यावर्तित किया है ।

(6) गुणांक का चयन सरला वर्मा वाले मामले में उपदर्शित सपठित उस निर्णय के पैरा के अनुसार होगा । सारणी में यथाउपदर्शित करेगा ।

(7) मृतक की आयु गुणांक को लागू आधार मानी जानी चाहिए ।

(8) परंपरागत शीर्षकों के आधार पर युक्तिसंगत आकड़े

अर्थात्, कार्य की हानि, सहजीविका की हानि और अंतिम संस्कार के खर्चे क्रमश: 15,000/- रुपए, 40,000/- रुपए और 15,000/- रुपए होने चाहिए । पूर्वोक्त रकम में प्रत्येक तीन वर्ष में 10 प्रतिशत की दर से वृद्धि की जानी चाहिए ।"

18. यह न्यायालय ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नेशनल **इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए पूर्वोक्त निर्णय का परिशीलन करते हुए अपीलार्थी-इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की ओर से उपस्थित हुए विद्वान् काउंसेल के साथ इस बाबत-सहमत की है कि सहजीविका की हानि के कारण, कार्य की हानि, प्रेम और स्नेह की हानि तथा अंतिम संस्कार के खर्चों के कारण है कि विद्वान् निचले अधिकारण द्वारा अधिनर्णीत रकम, को पुन:निर्धारण किए जाने की आवश्यकता है । **प्रणय सेठी** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि को दृष्टिगत करते हुए सहजीविका की हानि के लिए 40,000/- रुपए, संपदा और अंतिम संस्कार खर्चों की हानि के कारण प्रति 15,000/- रुपए का अधिनिर्णय किया जाना चाहिए और प्रेम और स्नेह की हानि के बाबत कोई रकम अधिनिर्णीत नहीं की जा सकती की । जहां तक मृतक की आय और निर्भरता की हानि का संबंध है, यह न्यायालय निचले विद्वान् अधिकरण द्वारा ऐसी निर्धारित रकम में कोई अनियमितता नहीं पाती । इसी प्रकार से इस न्यायालय ने विद्वान् निचले अधिकरण द्वारा गुणांक लागू करने में कोई अवैधता नहीं पाई, जिसको विधि के अनुसार सही प्रकार से लागू किया है ।

19. परिणाम स्वरूप प्रत्यर्थी संख्या 1 से 3/दावेदारों को किए गए पूर्वोक्त उपांतरणों को दृष्टिगत करते हुए, विभिन्न शीर्षकों के अधीन निम्नलिखित रकमों के लिए हकदार ठहराया जाता है :–

1. निर्भरता की हानि	15,36,000/- रुपए
2. याची संख्या 1 का सहजीविका की हानि	40,000/- रुपए
3. कार्य की हानि	15,000/- रुपए
4. अंतिम संस्कार के खर्चे	15,000/- रुपए
कुल	16,06,000/- रुपए

20. तथापि, यह न्यायालय प्रतिकर की रकम पर अधिनिर्णीत ब्याज की दर में हस्तक्षेप का कोई कारण नहीं पाता और इसलिए, इसे मान्य ठहाराया जाता है, रकम का विभाजन इस प्रकार किया जाएगा :–

प्रत्यर्थी संख्या 1 6,06,000/- रुपए

प्रत्यर्थी संख्या 2 5,00,000/- रुपए

प्रत्यर्थी संख्या 3 5,00,000/- रुपए

21. प्रत्यर्थी संख्या 3 के हिस्से में आने वाली रकम को पांच वर्ष की अवधि के लिए सावधि जमा में निवेश किया जाए ।

22. परिणामस्वरूप, ऊपर विस्तारपूर्वक की गई चर्चा और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते वर्तमान अपील को आंशिक रूप से मंजूर की जाती है और निचले विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय को केवल उपरोक्त सीमा तक उपांतरित किया जाता है ।

23. लंबित आवेदनों यदि कोई हो, का निपटारा किया जाता है । अंतरिम निर्देश, यदि कोई हो, को रद्द किया जाता है ।

अपील आंशिक रूप से मंजूर की गई ।

महीं./शुक्ला.

(2019) 2 सि. नि. प. 716 हैदराबाद

वादीबोयाना वेंकट कृष्ण रेड्डी

बनाम

सी. वेंकट रमामा रेड्डी

(2017 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 4329)

तारीख 24 जनवरी, 2018

न्यायमूर्ति यू. दुर्गा प्रसाद राव

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 7, नियम 11 [सपठित दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 6 और 7] – दहेज और स्वर्ण आभूषण या उसकी कीमत की वसूली के लिए वाद – दहेज धारित करने वाले व्यक्ति की प्रास्थिति – चूंकि स्त्री की ओर से दहेज प्राप्त करने वाला व्यक्ति या पति एक न्यासी के समान होता है – अत: जब तक ऐसा व्यक्ति दहेज से संबंधित चीजें स्त्री के हक़ में अंतरित नहीं कर देता, स्त्री ऐसी चीजों या उसकी कीमत की वसूली के लिए वाद दायर कर सकती है ।

प्रत्यर्थी/वादियों ने प्रतिवादियों के विरुद्ध डिक्री के लिए प्रधान जिला न्यायाधीश, कडप्पा के समक्ष 2011 का मूल वाद सं. 110 फाइल किया था जिसमें उन्होंने प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वादी सं. 2 के विवाह के लिए प्रतिफल के रूप में प्रतिवादियों द्वारा प्राप्त की गई 29,60,600/- रुपए की रकम को 18 प्रतिशत ब्याज के साथ प्रतिदाय करने के लिए और प्रतिवादियों को यह निदेश देने के लिए अनुरोध किया था कि वे कुल 35 स्वर्ण आभूषणों को अथवा ब्याज के साथ 9,27,500/- रुपए वापस करें । वाद विचारण के लिए चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश-सहयुक्त-अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (पी. ओ. ए.) अधिनियम, कडप्पा के अधीन मामलों के विचारण के लिए विशेष न्यायाधीश के न्यायालय में भेजा गया था । वाद के लंबन के दौरान प्रतिवादियों ने इस आधार पर वादपत्र को खारिज करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ

पठित आदेश 7, नियम 11 के अधीन 2017 का अंतरिम आवेदन सं. 606 फाइल किया कि वादियों द्वारा ईप्सित धन डिक्री दहेज और स्वर्ण आभूषणों के संबंध में है जो कि अभिकथित रूप से उनके द्वारा विवाह के प्रतिफल के रूप में पेश किया गया था और दहेज का लेना और देना दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 7 के अधीन एक अपराध है और दहेज धनराशि और स्वर्ण आभूषणों की वसूली के लिए ईप्सा करना दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अधीन और भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 23 के अधीन ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है । प्रत्यर्थियों/वादियों ने उक्त आवेदन का विरोध किया था । आवेदक/प्रतिवादियों ने इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, कडप्पा की फाइल पर के 2011 के मूल वाद सं. 110 में फाइल किए गए 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में तारीख 27 जून, 2017 को पारित उस आदेश को आक्षेपित किया है जिसके द्वारा विद्वान् न्यायाधीश ने प्रतिवादियों द्वारा वादपत्र को खारिज करने के लिए जो कि वाद विधि द्वारा विवर्जित था, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल आवेदन को खारिज किया है । चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, कडप्पा द्वारा आवेदन खारिज किए जाने से व्यथित होकर वर्तमान सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया । पुनरीक्षण आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह उल्लेखनीय है कि चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, कडप्पा ने 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में आक्षेपित आदेश पारित करने के पश्चात् तारीख 31 जुलाई, 2017 को एक अन्य आदेश पारित किया जिसके द्वारा वादपत्र समुचित न्यायालय के समक्ष पेश करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 10 के अधीन वापस किया गया था । ऐसा प्रतीत होता है कि अब वाद अपर जिला न्यायालय-सहयुक्त-कुटुंब न्यायालय की फाइल पर लंबित है । आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील देने के अतिरिक्त कि आक्षेपित आदेश त्रुटिपूर्ण है, यह भी दलील दी है कि कुटुंब न्यायालय की बजाय नियमित सिविल न्यायालय के समक्ष आरंभत: वाद फाइल करना स्वत: त्रुटिपूर्ण

था और तदद्वारा वाद स्वत: ग्रहण किए जाने योग्य नहीं था । उन्होंने इस संबंध में कतिपय विनिश्चयों का भी अवलंब लिया है । इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने बलपूर्वक यह दलील दी है कि इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में मुख्यतया 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में आक्षेपित आदेश की विधिमान्यता को आक्षेपित किया गया है न कि इस बारे में विवाद्यक को कि क्या वाद नियमित सिविल न्यायालय के समक्ष अथवा कुटुंब न्यायालय के समक्ष ग्रहण किए जाने योग्य है । आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने और दोनों पक्षों को सुनने के पश्चात् इस न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि केवल 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में आक्षेपित आदेश की विधिमान्यता इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में चर्चा के लिए सुसंगत है जैसी कि प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है । चतुर्थ जिला न्यायालय, कडप्पा ने 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में के आवेदन को श्रीमती जी. रेणुका वाले मामले का अवलंब लेते हुए खारिज किया है जिसमें इस न्यायालय ने दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 6 को दृष्टिगत करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि दहेज की धनराशि की वसूली के लिए वादपत्र ग्रहण किए जाने योग्य है । इस बात पर बल देने की आवश्यकता नहीं है कि उपुर्यक्त विनिश्चय में अभिव्यक्त मत समान रूप से वर्तमान मामले को भी लागू होता है । विचारण न्यायालय ने आवेदन ठीक ही खारिज किया है । (पैरा 5, 6, 7 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1995]	ए. आई. आर. 1995 आंध्र प्रदेश 130 : **श्रीमती जी. रेणुका** बनाम **एम. पापा राव** ।	3, 8

सिविल (पुनरीक्षणीय) अधिकारिता : 2017 का सिविल पुनरीक्षण आवेदन सं. 4329.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन सिविल पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री पी. वी. एल. भानुप्रकाश

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री कररई मुरली कृष्ण

न्यायमूर्ति यू. दुर्गा प्रसाद राव – आवेदक/प्रतिवादियों ने इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, कडप्पा की फाइल पर के 2011 के मूल वाद सं. 110 में फाइल किए गए 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में तारीख 27 जून, 2017 को पारित उस आदेश को आक्षेपित किया है जिसके द्वारा विद्वान् न्यायाधीश ने प्रतिवादियों द्वारा वादपत्र को खारिज करने के लिए जो कि वाद विधि द्वारा विवर्जित था, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल आवेदन को खारिज किया है ।

2. प्रत्यर्थी/वादियों ने प्रतिवादियों के विरुद्ध डिक्री के लिए प्रधान जिला न्यायाधीश, कडप्पा के समक्ष 2011 का मूल वाद सं. 110 फाइल किया था जिसमें उन्होंने प्रतिवादी सं. 1 द्वारा वादी सं. 2 के विवाह के लिए प्रतिफल के रूप में प्रतिवादियों द्वारा प्राप्त की गई 29,60,600/- रुपए की रकम को 18 प्रतिशत ब्याज के साथ प्रतिदाय करने के लिए और प्रतिवादियों को यह निदेश देने के लिए अनुरोध किया था कि वे कुल 35 स्वर्ण आभूषणों को अथवा ब्याज के साथ 9,27,500/- रुपए वापस करें ।

3. वाद विचारण के लिए चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश-सहयुक्त-अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (पी. ओ. ए.) अधिनियम, कडप्पा के अधीन मामलों के विचारण के लिए विशेष न्यायाधीश के न्यायालय में भेजा गया था । वाद के लंबन के दौरान प्रतिवादियों ने इस आधार पर वादपत्र को खारिज करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 7, नियम 11 के अधीन 2017 का अंतरिम आवेदन सं. 606 फाइल किया कि वादियों द्वारा ईप्सित धन डिक्री दहेज और स्वर्ण आभूषणों के संबंध में है जो कि अभिकथित रूप से उनके द्वारा विवाह के प्रतिफल के रूप में पेश किया गया था और दहेज का लेना और देना दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 7 के अधीन एक अपराध है और दहेज धनराशि और स्वर्ण आभूषणों की वसूली के लिए ईप्सा करना दहेज प्रतिषेध अधिनियम के अधीन और भारतीय

संविदा अधिनियम की धारा 23 के अधीन ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है । प्रत्यर्थियों/वादियों ने उक्त आवेदन का विरोध किया था । चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, कडप्पा ने आक्षेपित आदेश द्वारा **श्रीमती जी. रेणुका** बनाम **एम. पापा राव**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लेते हुए उक्त आवेदन खारिज कर दिया । अत: वर्तमान सिविल पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया ।

4. आवेदकों की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री पी. वी. एल. भानुप्रकाश और प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल श्री कररई मुरली कृष्ण की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री वीरा रेड्डी की बहस सुनी गई ।

5. यह उल्लेखनीय है कि चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, कडप्पा ने 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में आक्षेपित आदेश पारित करने के पश्चात् तारीख 31 जुलाई, 2017 को एक अन्य आदेश पारित किया जिसके द्वारा वादपत्र समुचित न्यायालय के समक्ष पेश करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 नियम 10 के अधीन वापस किया गया था । ऐसा प्रतीत होता है कि अब वाद अपर जिला न्यायालय-सहयुक्त-कुटुंब न्यायालय की फाइल पर लंबित है ।

6. आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील देने के अतिरिक्त कि आक्षेपित आदेश त्रुटिपूर्ण है, यह भी दलील दी है कि कुटुंब न्यायालय की बजाय नियमित सिविल न्यायालय के समक्ष आरंभत: वाद फाइल करना स्वत: त्रुटिपूर्ण था और तदद्वारा वाद स्वत: ग्रहण किए जाने योग्य नहीं था । उन्होंने इस संबंध में कतिपय विनिश्चयों का भी अवलंब लिया है ।

7. इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने बलपूर्वक यह दलील दी है कि इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में मुख्यतया 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में आक्षेपित आदेश की विधिमान्यता को आक्षेपित किया गया है न कि इस बारे में विवाद्यक को कि क्या वाद नियमित सिविल न्यायालय के समक्ष अथवा कुटुंब न्यायालय के समक्ष ग्रहण किए जाने योग्य है ।

---

[1] ए. आई. आर. 1995 आंध्र प्रदेश 130.

8. आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने और दोनों पक्षों को सुनने के पश्चात् इस न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि केवल 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में आक्षेपित आदेश की विधिमान्यता इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में चर्चा के लिए सुसंगत है जैसी कि प्रत्यर्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा ठीक ही दलील दी गई है । चतुर्थ जिला न्यायालय, कडप्पा ने 2017 के अंतरिम आवेदन सं. 606 में के आवेदन को **श्रीमती जी. रेणुका** (पूर्वोक्त) वाले मामले का अवलंब लेते हुए खारिज किया है जिसमें इस न्यायालय ने दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 6 को दृष्टिगत करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि दहेज की धनराशि की वसूली के लिए वादपत्र ग्रहण किए जाने योग्य है । इस मामले में इस प्रकार मत व्यक्त किया गया था :-

> "13. मैं यह भी उल्लेख करता हूं कि दहेज प्रतिषेध अधिनियम में दो प्रक्रम अनुध्यात हैं । प्रथम प्रक्रम दहेज का लेना या देना या दहेज लेने या देने के लिए उत्प्रेरित करना है । द्वितीय प्रक्रम दहेज लेने के पश्चात् और वह हिताधिकारी को अंतरित होने के लिए लंबित होने पर उसको धारित करने वाला व्यक्ति स्त्री के फायदे के लिए न्यासी होता है । यद्यपि प्रथम प्रक्रम के अधीन अर्थात् दहेज का लेना या देना या दहेज देने या लेने के लिए उत्प्रेरित करना दंडनीय है और इसलिए ऐसा कोई कार्य एक शून्य संव्यवहार होता है ; दूसरे प्रक्रम के अधीन विधान-मंडल ने स्वत: यह उपबंधित किया है कि दहेज लेने के पश्चात् वह व्यक्ति जो दहेज प्राप्त करता है, स्त्री के फायदे के लिए उसके हक में ऐसा दहेज अंतरित होने तक एक न्यासी होता है । अत: द्वितीय प्रक्रम के दौरान कोई स्त्री इस बात के लिए स्वतंत्र है कि वह उस व्यक्ति से धनराशि वसूल करने के लिए वाद फाइल करे जिसने न्यासी के रूप में दहेज अपने पास रखा है, यदि ऐसा व्यक्ति स्त्री को उसके फायदे के लिए उसके हक में न्यास-संपत्ति अंतरित नहीं करता है । उपर्युक्त से यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान मामले में वादी द्वारा फाइल किया गया वाद ग्रहण किए जाने योग्य है, जैसा कि स्वीकृतत: द्वितीय प्रतिवादी ने जिसने तारीख 19 अप्रैल, 1974 के एक चैक द्वारा वादी के पिता से दहेज की धनराशि प्राप्त करना स्वीकार किया है, वादी के फायदे के लिए उसके हक में अंतरित

नहीं किया है । इस न्यायालय द्वारा जी. रामसुब्बय्या **बनाम** जी. राजम्मा 1975 (1) ए. पी. एल. जे. 168 वाले मामले में मत व्यक्त करते हुए स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि दहेज का देना अथवा प्राप्त करना अधिनियम की धारा 6 के उपबंधों के अध्यधीन अधिनियम की धारा 3 की रिष्टि के अन्तर्गत आएगा । धारा 6 के उपबंधों के अन्तर्गत यह कहा गया है कि ऐसा व्यक्ति जो दहेज प्राप्त करता है, एक न्यासी के रूप में स्त्री के फायदे के लिए संपत्ति धारित करता है । इससे यह अर्थ नहीं निकाला जा सकता कि उक्त अवधि के दौरान कोई स्त्री इसकी वसूली के लिए कोई वाद फाइल नहीं कर सकती । अधिनियम की धारा 6 तब पत्नी को संदत्त दहेज की वसूली के लिए वाद फाइल करने के लिए समर्थ बनाती है जब ऐसा व्यक्ति जिसने दहेज प्राप्त किया है, विहित अवधि के भीतर स्त्री के फायदे के लिए संपत्ति को अंतरित करने में विफल रहता है ।

14. उपर्युक्त से यह निष्कर्ष निकलता है कि वादी दहेज की रकम को वसूल करने की हकदार है और इसलिए वाद दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 6 के अधीन ग्रहण किए जाने योग्य है ।"

इस बात पर बल देने की आवश्यकता नहीं है कि उपुर्यक्त विनिश्चय में अभिव्यक्त मत समान रूप से वर्तमान मामले को भी लागू होता है । विचारण न्यायालय ने आवेदन ठीक ही खारिज किया है ।

9. परिणामतः, मुझे इस सिविल पुनरीक्षण आवेदन में कोई बल प्रतीत नहीं होता है और इसलिए यह खारिज किया जाता है । खर्चों के बारे में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

10. इस क्रम में लंबित प्रकीर्ण आवेदन, यदि कोई हों, बंद किए जाते हैं ।

पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया ।

मह.

संसद् के अधिनियम

[1][महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005]

(2005 का अधिनियम संख्यांक 42)

[5 सितम्बर, 2005]

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में गृहस्थियों की आजीविका की सुरक्षा को, प्रत्येक गृहस्थी को, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में कम से कम सौ दिनों का गारंटीकृत मजदूरी नियोजन उपलब्ध कराकर, वर्धित करने तथा उससे संसक्त या उसके आनुषंगिक विषयों का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के छप्पनवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

अध्याय 1
प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ - (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम [1][महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम], 2005 है ।

(2) इसका विस्तार [2]... सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख[3-4] को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार

---

[1] 2009 के अधिनियम सं. 46 की धारा 2 द्वारा (2.10.2009 से) प्रतिस्थापित ।

[2] 2007 के अधिनियम सं. 23 की धारा 2 द्वारा लोप किया गया ।

[3] 1.4.2008 का. आ. 1684 (अ), तारीख 28.9.2007.

[4] 2.2.2006 का. आ. 87 (अ), तारीख 24.4.2006 द्वारा राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में प्रवृत ।

राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियत करे ; और विभिन्न राज्यों या किसी राज्य में विभिन्न क्षेत्रों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी तथा ऐसे किसी उपबंध में, इस अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह, यथास्थिति, ऐसे राज्य या ऐसे क्षेत्र में उस उपबंध के प्रवृत्त होने के प्रति निर्देश है :

परन्तु यह अधिनियम उस सम्पूर्ण राज्यक्षेत्र को, जिस पर इसका विस्तार है, इस अधिनियम के अधिनियमन की तारीख से पांच वर्ष की कालावधि के भीतर लागू होगा ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "वयस्क" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसने अठारह वर्ष की आयु पूरी कर ली है ;

(ख) "आवेदक" से किसी गृहस्थी का प्रमुख या उसके अन्य वयस्क सदस्यों में से कोई अभिप्रेत है, जिसने स्कीम के अधीन नियोजन के लिए आवेदन किया है ;

(ग) "ब्लाक" से किसी जिले के भीतर कोई सामुदायिक विकास क्षेत्र अभिप्रेत है, जिसमें ग्राम पंचायतों का एक समूह है ;

(घ) "केन्द्रीय परिषद्" से धारा 10 की उपधारा (1) के अधीन गठित केन्द्रीय नियोजन गारंटी परिषद् अभिप्रेत है ;

(ङ) "जिला कार्यक्रम समन्वयक" से किसी जिले में स्कीम के कार्यान्वयन के लिए धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन उस रूप में पदाभिहित राज्य सरकार का कोई अधिकारी अभिप्रेत है ;

(च) "गृहस्थी" से किसी कुटुम्ब के सदस्य अभिप्रेत हैं, जो एक दूसरे से रक्त, विवाह या दत्तकग्रहण द्वारा संबंधित हैं और सामान्यतः एक साथ निवास करते हैं तथा सम्मिलित रूप से

भोजन करते हैं या एक सामान्य राशन कार्ड रखते हैं ;

(छ) "कार्यान्वयन अभिकरण" में केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार का कोई विभाग, कोई जिला परिषद्, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत, पंचायत समिति, ग्राम पंचायत या कोई स्थानीय प्राधिकरण या सरकारी उपक्रम या गैर-सरकारी संगठन, जिसे किसी स्कीम के अधीन किए जाने वाले किसी कार्य का कार्यान्वयन करने के लिए केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत किया गया है, सम्मिलित हैं ;

(ज) किसी क्षेत्र के संबंध में "न्यूनतम मजदूरी" से कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) की धारा 3 के अधीन राज्य सरकार द्वारा नियत न्यूनतम मजदूरी अभिप्रेत है, जो उस क्षेत्र में लागू है ;

(झ) "राष्ट्रीय निधि" से धारा 20 की उपधारा (1) के अधीन स्थापित राष्ट्रीय नियोजन गारंटी निधि अभिप्रेत है ;

(ञ) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(ट) "अधिमानित कार्य" से कोई ऐसा कार्य अभिप्रेत है जिसे किसी स्कीम के अधीन पूर्विकता के आधार पर कार्यान्वयन के लिए किया जाता है ;

(ठ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ड) "कार्यक्रम अधिकारी" से स्कीम को कार्यान्वित करने के लिए धारा 15 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त कोई अधिकारी अभिप्रेत है ;

(ढ) "परियोजना" से आवेदकों को नियोजन उपलब्ध कराने के प्रयोजन के लिए किसी स्कीम के अधीन किया जाने वाला कोई कार्य अभिप्रेत है ;

(ण) "ग्रामीण क्षेत्र" से तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन स्थापित या गठित किसी शहरी स्थानीय निकाय या किसी छावनी बोर्ड के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों के सिवाय किसी राज्य में कोई क्षेत्र अभिप्रेत है ;

(त) "स्कीम" से धारा 4 की उपधारा (1) के अधीन राज्य सरकार द्वारा अधिसूचित कोई स्कीम अभिप्रेत है ;

(थ) "राज्य परिषद्" से धारा 12 की उपधारा (1) के अधीन गठित राज्य नियोजन गारंटी परिषद् अभिप्रेत है ;

(द) "अकुशल शारीरिक कार्य" से कोई भौतिक कार्य अभिप्रेत है जिसे कोई वयस्क व्यक्ति किसी कौशल या विशेष प्रशिक्षण के बिना करने में समर्थ है ;

(ध) "मजदूरी दर" से धारा 6 में निर्दिष्ट मजदूरी दर अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

ग्रामीण क्षेत्र में नियोजन की गारंटी

3. **निर्धन गृहस्थियों को ग्रामीण नियोजन की गारंटी** – (1) यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, राज्य सरकार में ऐसे ग्रामीण क्षेत्र में जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किया जाए, प्रत्येक गृहस्थी को, जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, इस अधिनियम के अधीन बनाई गई स्कीम के अनुसार किसी वित्तीय वर्ष में सौ दिनों से अन्यून के लिए ऐसा कार्य उपलब्ध कराएगी ।

(2) प्रत्येक व्यक्ति जिसने स्कीम के अधीन उसे दिया गया कार्य

किया है, प्रत्येक कार्य दिवस के लिए मजदूरी की दर से मजदूरी प्राप्त करने का हकदार होगा ।

(3) इस अधिनियम में अन्यथा उपबंधित के सिवाय दैनिक मजदूरी का संवितरण साप्ताहिक आधार पर या किसी भी दशा में उस तारीख के पश्चात् जिसको ऐसा कार्य किया गया था पन्द्रह दिन के अपश्चात् किया जाएगा ।

(4) केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार, अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के भीतर, किसी स्कीम के अधीन किसी गृहस्थी के प्रत्येक वयस्क सदस्य के लिए उपधारा (1) के अधीन गारंटीकृत अवधि के परे किसी अवधि के लिए, जो समीचीन हो, कार्य सुनिश्चित करने के लिए उपबंध कर सकेगी ।

अध्याय 3

नियोजन गारंटी स्कीमें और बेकारी भत्ता

4. **ग्रामीण क्षेत्रों के लिए नियोजन गारंटी स्कीमें** – (1) धारा 3 के उपबंधों को प्रभावी बनाने के प्रयोजनों के लिए, प्रत्येक राज्य सरकार इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से छह मास के भीतर, स्कीम के अंतर्गत आने वाले ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक गृहस्थी को जिसके वयस्क सदस्य इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन और स्कीम में अधिकथित शर्तों के अधीन रहते हुए अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से आगे आते हैं, किसी वित्तीय वर्ष में सौ दिनों से अन्यून का गारंटीकृत नियोजन उपलब्ध कराने के लिए अधिसूचना द्वारा एक स्कीम बनाएगी :

परन्तु यह कि राज्य सरकार द्वारा किसी ऐसी स्कीम को अधिसूचित किए जाने तक सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के लिए वार्षिक कार्रवाई योजना या भावी योजना या राष्ट्रीय काम के लिए अनाज

कार्य कार्यक्रम, जो ऐसी अधिसूचना से ठीक पूर्व संबंधित क्षेत्र में प्रवृत्त है, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए स्कीम हेतु कार्रवाई योजना समझा जाएगा ।

(2) राज्य सरकार, कम से कम दो स्थानीय समाचार पत्रों में, जिनमें से एक ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों में जिसको ऐसी स्कीम लागू होगी, परिचालित जन भाषा में होगा, उसके द्वारा बनाई गई स्कीम का सार प्रकाशित करेगी ।

(3) उपधारा (1) के अधीन बनाई गई स्कीम अनुसूची 1 में विनिर्दिष्ट न्यूनतम बातों के लिए उपबंध करेगी ।

5. **गारंटीकृत नियोजन उपलब्ध कराने के लिए शर्तें** – (1) राज्य सरकार अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट शर्तों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, इस अधिनियम के अधीन गारंटीकृत नियोजन उपलब्ध कराने के लिए स्कीम में शर्तें विनिर्दिष्ट कर सकेगी ।

(2) इस अधिनियम के अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन नियोजित व्यक्ति ऐसी सुविधाओं का हकदार होगा जो अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट न्यूनतम सुविधाओं से कम नहीं हैं ।

6. **मजदूरी दर** – (1) न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) में किसी बात के होते हुए भी, केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, अधिसूचना द्वारा, मजदूरी दर विनिर्दिष्ट कर सकेगी :

परन्तु यह कि विभिन्न क्षेत्रों के लिए मजदूरी की भिन्न-भिन्न दरें विनिर्दिष्ट की जा सकेंगी :

परन्तु यह और कि किसी ऐसी अधिसूचना के अधीन समय-समय पर विनिर्दिष्ट मजदूरी दर साठ रुपए प्रतिदिन से कम की दर पर नहीं होगी ।

(2) किसी राज्य में किसी क्षेत्र के संबंध में केन्द्रीय सरकार द्वारा कोई मजदूरी दर नियत किए जाने के समय तक, कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948 (1948 का 11) की धारा 3 के अधीन राज्य सरकार द्वारा नियत न्यूनतम मजदूरी उस क्षेत्र को लागू मजदूरी दर समझी जाएगी ।

7. **बेकारी भत्ते का संदाय** – (1) यदि स्कीम के अधीन नियोजन के लिए किसी आवेदक को, नियोजन चाहने वाले उसके आवेदन की प्राप्ति के या उस तारीख से जिसको किसी अग्रिम आवेदन की दशा में नियोजन चाहा गया है, इनमें से जो भी पश्चात्वर्ती हो, पन्द्रह दिन के भीतर ऐसा नियोजन उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो वह इस धारा के अनुसार एक दैनिक बेकारी भत्ते का हकदार होगा ।

(2) पात्रता के ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन रहते हुए, जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं तथा इस अधिनियम और स्कीमों और राज्य सरकार की आर्थिक क्षमता के अधीन रहते हुए, उपधारा (1) के अधीन संदेय बेकारी भत्ता किसी गृहस्थी के आवेदकों को गृहस्थी की हकदारी के अधीन रहते हुए, ऐसी दर से जो राज्य परिषद् के परामर्श से, अधिसूचना द्वारा, राज्य सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट की जाए, संदत्त किया जाएगा :

परन्तु यह कि कोई ऐसी दर वित्तीय वर्ष के दौरान पहले तीस दिनों के लिए मजदूरी दर के एक चौथाई से कम नहीं होगी और वित्तीय वर्ष की शेष अवधि के लिए मजदूरी दर के एक बटा दो से अन्यून नहीं होगी ।

(3) किसी वित्तीय वर्ष के दौरान किसी गृहस्थी को बेकारी भत्ते का संदाय करने का राज्य सरकार का दायित्व समाप्त हो जाएगा जैसे ही –

(क) आवेदक को, ग्राम पंचायत या कार्यक्रम अधिकारी द्वारा या तो स्वयं कार्य के लिए रिपोर्ट करने या उसकी गृहस्थी के कम

से कम एक वयस्क सदस्य को तैनात करने के लिए निदेशित किया जाता है ; या

(ख) वह अवधि जिसके लिए नियोजन चाहा गया है, समाप्त हो जाती है और आवेदक की गृहस्थी का कोई सदस्य नियोजन के लिए नहीं आता है ; या

(ग) आवेदक की गृहस्थी के वयस्क सदस्यों ने उस वित्तीय वर्ष के भीतर कुल मिलाकर कम से कम सौ दिनों का कार्य प्राप्त कर लिया है ; या

(घ) आवेदक की गृहस्थी ने मजदूरी और बेकारी भत्ता, दोनों को मिलाकर उतना उपार्जित कर लिया है, जो वित्तीय वर्ष के दौरान कार्य के सौ दिनों की मजदूरी के बराबर है ।

(4) गृहस्थी के किसी आवेदक को संयुक्त रूप से संदेय बेकारी भत्ता कार्यक्रम अधिकारी या ऐसे स्थानीय प्राधिकारी द्वारा (जिसके अन्तर्गत जिला मध्यवर्ती या ग्राम स्तर की पंचायत है), जिसे राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत करे, मंजूर और संवितरित किया जाएगा ।

(5) उपधारा (1) के अधीन बेकारी भत्ते का प्रत्येक संदाय, उस तारीख से जिसको वह संदाय के लिए शोध्य हो जाता है, पन्द्रह दिन के अपश्चात् किया जाएगा या प्रस्तावित किया जाएगा ।

(6) राज्य सरकार इस अधिनियम के अधीन बेकारी भत्ते के संदाय के लिए प्रक्रिया विहित कर सकेगी ।

8. **कतिपय परिस्थितियों में बेकारी भत्ते का संवितरण न करना** – (1) यदि कार्यक्रम अधिकारी, अपने नियंत्रण के परे किसी कारण से बेकारी भत्ते का समय पर या बिल्कुल संवितरण करने की स्थिति में

नहीं है, तो वह जिला कार्यक्रम समन्वयक को मामले की रिपोर्ट करेगा और अपने सूचना पट्ट पर और ग्राम पंचायत के सूचना पट्ट पर तथा ऐसे अन्य सहजदृश्य स्थानों पर जो वह आवश्यक समझे, संप्रदर्शित की जाने वाली किसी सूचना में ऐसे कारणों की घोषणा करेगा ।

(2) बेकारी भत्ते का संदाय न करने या विलंब से संदाय के प्रत्येक मामले की जिला कार्यक्रम समन्वयक द्वारा राज्य सरकार को प्रस्तुत की गई वार्षिक रिपोर्ट में, ऐसे संदाय न करने या विलंब से संदाय के कारणों सहित, रिपोर्ट की जाएगी ।

(3) राज्य सरकार, उपधारा (1) के अधीन रिपोर्ट किए गए बेकारी भत्ते का संबंधित गृहस्थी को यथासंभव शीघ्रता से संदाय करने के सभी उपाय करेगी ।

9. **कतिपय परिस्थितियों में बेकारी भत्ता प्राप्त करने के हक से वंचित रहना** – कोई आवेदक जो –

(क) किसी स्कीम के अधीन अपनी गृहस्थी को उपलब्ध नियोजन स्वीकार नहीं करता है ; या

(ख) कार्य के लिए रिपोर्ट करने के लिए कार्यक्रम अधिकारी या कार्यान्वयन अभिकरण द्वारा अधिसूचित किए जाने के पन्द्रह दिन के भीतर कार्य के लिए रिपोर्ट नहीं करता है ; या

(ग) संबंधित कार्यान्वयन अभिकरण से कोई अनुज्ञा प्राप्त किए बिना एक सप्ताह से अधिक की अवधि के लिए कार्य से लगातार अनुपस्थित रहता है या किसी मास में एक सप्ताह से अधिक की कुल अवधि के लिए अनुपस्थित रहता है,

तो वह तीन मास की अवधि के लिए इस अधिनियम के अधीन संदेय बेकारी भत्ते का दावा करने का हकदार नहीं होगा किन्तु किसी भी समय स्कीम के अधीन नियोजन चाहने का हकदार होगा ।

अध्याय 4

कार्यान्वित और मानीटर करने वाले प्राधिकारी

10. **केन्द्रीय रोजगार गारंटी परिषद्** – (1) ऐसी तारीख से, जिसे केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करे, केन्द्रीय रोजगार गारंटी परिषद् के नाम से एक परिषद् इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन उसे समनुदेशित कृत्यों और कर्तव्यों का पालन करने के लिए गठित की जाएगी ।

(2) केन्द्रीय परिषद् का मुख्यालय दिल्ली में होगा ।

(3) केन्द्रीय परिषद् निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, जिन्हें केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा, अर्थात् :-

(क) अध्यक्ष ;

(ख) केन्द्रीय मंत्रालयों के, जिनके अन्तर्गत योजना आयोग भी है, भारत सरकार के संयुक्त सचिव से अन्यून की पंक्ति के उतनी संख्या से अनधिक में, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अवधारित की जाए, प्रतिनिधि ;

(ग) राज्य सरकारों के उतनी संख्या से अनधिक में, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अवधारित की जाए, प्रतिनिधि ;

(घ) पंचायती राज्य संस्थाओं, कर्मकार संगठनों और असुविधाग्रस्त समूहों का प्रतिनिधित्व करने वाले पंद्रह से अनधिक गैर-सरकारी सदस्य :

परन्तु यह कि ऐसे गैर-सरकारी सदस्यों में केन्द्रीय सरकार द्वारा एक समय में एक वर्ष की अवधि के लिए चक्रानुक्रम से नामनिर्देशित जिला पंचायतों के दो अध्यक्ष सम्मिलित होंगे :

परन्तु यह और कि इस खंड के अधीन नामनिर्देशित एक-तिहाई से अन्यून गैर-सरकारी सदस्य महिलाएं होंगी :

परन्तु यह भी कि गैर-सरकारी सदस्यों के एक-तिहाई से अन्यून सदस्य अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के होंगे ;

(ङ) राज्यों के उतनी संख्या में प्रतिनिधि होंगे, जो केन्द्रीय सरकार इस निमित्त नियमों द्वारा अवधारित करे ;

(च) भारत सरकार के संयुक्त सचिव की पंक्ति से अन्यून की पंक्ति का एक सदस्य सचिव ।

(4) वे निबन्धन और शर्तें जिनके अधीन रहते हुए, केन्द्रीय परिषद् का अध्यक्ष और अन्य सदस्य नियुक्त किए जा सकेंगे तथा केन्द्रीय परिषद् की बैठकों का समय, स्थान और प्रक्रिया (जिसके अंतर्गत ऐसी बैठकों में गणपूर्ति भी है) वह होगी जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाए ।

11. **केन्द्रीय परिषद् के कृत्य और कर्तव्य** – (1) केन्द्रीय परिषद् निम्नलिखित कृत्यों और कर्तव्यों का पालन और निर्वहन करेगी, अर्थात् :-

(क) केन्द्रीय मूल्यांकन और मानीटरी प्रणाली स्थापित करना ;

(ख) इस अधिनियम के कार्यान्वयन से संबंधित सभी विषयों पर केन्द्रीय सरकार को सलाह देना ;

(ग) समय-समय पर मानीटरी और प्रतितोष तंत्र का पुनर्विलोकन करना तथा अपेक्षित सुधारों की सिफारिश करना ;

(घ) इस अधिनियम के अधीन बनाई गई स्कीमों के संबंध में जानकारी के विस्तृत संभव प्रसार का संवर्धन करना ;

(ङ) इस अधिनियम के कार्यान्वयन को मानीटर करना ;

(च) इस अधिनियम के कार्यान्वयन पर केन्द्रीय सरकार द्वारा संसद् के समक्ष रखे जाने के लिए वार्षिक रिपोर्टें तैयार करना ;

(छ) कोई अन्य कर्तव्य और कृत्य, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा समनुदेशित किए जाएं ।

(2) केन्द्रीय परिषद् को इस अधिनियम के अधीन बनाई गई विभिन्न स्कीमों का मूल्यांकन करने की शक्ति होगी और उस प्रयोजन के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था और स्कीमों के कार्यान्वयन से संबंधित आंकड़े संगृहीत करेगी या संगृहीत कराएगी ।

12. **राज्य रोजगार गारंटी परिषद्** – (1) राज्य स्तर पर, इस अधिनियम के कार्यान्वयन का नियमित रूप से मानीटर और पुनर्विलोकन करने के प्रयोजनों के लिए प्रत्येक राज्य सरकार.....(राज्य का नाम) राज्य रोजगार गारंटी परिषद् के नाम से एक राज्य परिषद् का गठन करेगी जिसमें एक अध्यक्ष और उतनी संख्या में गैर-सरकारी सदस्य, जो राज्य सरकार द्वारा अवधारित किए जाएं तथा राज्य सरकार द्वारा पंचायती राज्य संस्थाओं, कर्मकार संगठनों और असुविधाग्रस्त समूहों से नामनिर्दिष्ट पंद्रह से अनधिक गैर-सरकारी सदस्य होंगे :

परन्तु इस खंड के अधीन नामनिर्देशित गैर-सरकारी सदस्यों के एक तिहाई से अन्यून सदस्य महिलाएं होंगी :

परन्तु यह और कि गैर-सरकारी सदस्यों के एक तिहाई से अन्यून सदस्य अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के होंगे ।

(2) वे निबन्धन और शर्तें जिनके अधीन रहते हुए राज्य परिषद् का अध्यक्ष और सदस्य नियुक्त किए जा सकेंगे तथा राज्य परिषद् की बैठकों का समय, स्थान और प्रक्रिया (जिनके अन्तर्गत ऐसी बैठकों में गणपूर्ति भी है) वह होगी जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए ।

(3) राज्य परिषद् के कर्तव्यों और कृत्यों में निम्नलिखित सम्मिलित होंगे –

(क) स्कीम और राज्य में उसके कार्यान्वयन से संबंधित सभी विषयों पर राज्य सरकार को सलाह देना ;

(ख) अधिमानित कार्यों का अवधारण करना ;

(ग) समय-समय पर मानीटरी और प्रतितोष तंत्र का पुनर्विलोकन करना तथा अपेक्षित सुधारों की सिफारिश करना ;

(घ) इस अधिनियम और इसके अधीन स्कीमों के संबंध में जानकारी के विस्तृत संभव प्रसार का समर्थन करना ;

(ङ) राज्य में इस अधिनियम और स्कीमों के कार्यान्वयन को मानीटर करना तथा ऐसे कार्यान्वयन का केन्द्रीय परिषद् के साथ समन्वय करना ;

(च) राज्य सरकार द्वारा राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखी जाने वाली वार्षिक रिपोर्टें तैयार करना ;

(छ) कोई अन्य कर्तव्य और कृत्य जो उसे केन्द्रीय परिषद् और राज्य सरकार द्वारा समनुदेशित किया जाए ।

(4) राज्य परिषद् को, राज्य में प्रचलित स्कीमों का मूल्यांकन करने तथा उस प्रयोजन के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था और स्कीमों तथा कार्यक्रमों के कार्यान्वयन से संबंधित आंकड़े संगृहीत करवाने की शक्ति होगी ।

13. **स्कीमों की योजना और कार्यान्वयन के लिए प्रधान प्राधिकारी** – (1) इस अधिनियम के अधीन बनाई गई स्कीमों की योजना और कार्यान्वयन के लिए जिला, मध्यवर्ती और ग्राम स्तरों पर पंचायतें, प्रधान प्राधिकारी होंगी ।

(2) जिला स्तर पर पंचायतों के निम्नलिखित कृत्य होंगे –

(क) स्कीम के अधीन किसी कार्यक्रम के अंतर्गत कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं के ब्लाक अनुसार शेल्फ को अंतिम

रूप देना और उसका अनुमोदन करना ;

(ख) ब्लाक स्तर और जिला स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं का पर्यवेक्षण और उन्हें मानीटर करना ; और

(ग) ऐसे अन्य कृत्य करना, जो राज्य परिषद् द्वारा समय-समय पर उसे समनुदेशित किए जाएं ।

(3) मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत के निम्नलिखित कृत्य होंगे –

(क) अंतिम अनुमोदन के लिए जिला स्तर पर जिला पंचायत को भेजने के लिए ब्लाक योजना का अनुमोदन करना ;

(ख) ग्राम पंचायत स्तर और ब्लाक स्तर पर कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं का पर्यवेक्षण और मानीटर करना ; और

(ग) ऐसे अन्य कृत्य करना, जो राज्य परिषद् द्वारा समय-समय पर उसे समनुदेशित किए जाएं ।

(4) जिला कार्यक्रम समन्वयक, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन उसके कृत्यों का निर्वहन करने में पंचायत की सहायता करेगा ।

14. **जिला कार्यक्रम समन्वयक** – (1) जिला पंचायत के मुख्य कार्यपालक अधिकारी या जिले के कलक्टर या समुचित पंक्ति के किसी अन्य जिला स्तर के अधिकारी को, जिसका राज्य सरकार विनिश्चय करे, जिले में स्कीम के कार्यान्वयन के लिए जिला कार्यक्रम समन्वयक के रूप में पदाभिहित किया जाएगा ।

(2) जिला कार्यक्रम समन्वयक, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबन्धों के अनुसार जिले में स्कीम के कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी होगा ।

(3) जिला कार्यक्रम समन्वयक के निम्नलिखित कृत्य होंगे –

(क) इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन उसके कृत्यों के निर्वहन में जिला पंचायत की सहायता करना ;

(ख) ब्लाक द्वारा तैयार की गई योजनाओं और जिला स्तर पर पंचायत द्वारा अनुमोदित की जाने वाली परियोजनाओं के शेल्फ में सम्मिलित करने के लिए अन्य कार्यान्वयन अभिकरणों से प्राप्त परियोजना प्रस्तावों का समेकन करना ;

(ग) आवश्यक मंजूरी और प्रशासनिक अनापत्ति, जहां कहीं आवश्यक हो, प्रदान करना ;

(घ) यह सुनिश्चित करने के लिए कि आवेदकों को इस अधिनियम के अधीन उनकी हकदारी के अनुसार नियोजन उपलब्ध कराए जा रहे हैं, अपनी अधिकारिता के भीतर कृत्य कर रहे कार्यक्रम अधिकारियों और कार्यान्वयन अभिकरणों के साथ समन्वय करना ;

(ङ) कार्यक्रम अधिकारियों के कार्यपालन का पुनर्विलोकन, मानीटर और पर्यवेक्षण करना ;

(च) चल रहे कार्य का नियतकालिक निरीक्षण करना ; और

(छ) आवेदकों की शिकायतों को दूर करना ।

(4) राज्य सरकार, ऐसी प्रशासनिक और वित्तीय शक्तियों का जिला कार्यक्रम समन्वयक को प्रत्यायोजन करेगी जो इस अधिनियम के अधीन उसके कृत्यों को कार्यान्वित करने हेतु उसे समर्थ बनाने के लिए अपेक्षित हों ।

(5) धारा 15 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त कार्यक्रम अधिकारी और जिले के भीतर कृत्य कर रहे राज्य सरकार, स्थानीय प्राधिकरणों तथा निकायों के सभी अन्य अधिकारी, इस अधिनियम तथा तद्धीन बनाई

गई स्कीमों के अधीन उसके कृत्यों को कार्यान्वित करने में जिला कार्यक्रम समन्वयक की सहायता करने के लिए उत्तरदायी होंगे ।

(6) जिला कार्यक्रम समन्वयक, आगामी वित्तीय वर्ष के लिए श्रम बजट प्रत्येक वर्ष के दिसंबर मास में तैयार करेगा जिसमें जिले में अकुशल शारीरिक कार्य के लिए पूर्वानुमानित मांग और स्कीम के अंतर्गत आने वाले कार्यों में श्रमिकों को लगाने की योजना के ब्यौरे होंगे और उसे जिला पंचायत की स्थायी समिति को प्रस्तुत करेगा ।

15. **कार्यक्रम अधिकारी** – (1) मध्यवर्ती स्तर पर प्रत्येक पंचायत के लिए, राज्य सरकार किसी व्यक्ति को, जो ब्लाक विकास अधिकारी से नीचे की पंक्ति का न हो, ऐसी अर्हताओं और अनुभव के साथ जैसी कि राज्य सरकार द्वारा अवधारित की जाएं, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत के लिए कार्यक्रम अधिकारी के रूप में नियुक्त करेगी ।

(2) कार्यक्रम अधिकारी, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई किसी स्कीम के अधीन मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत को उसके कृत्यों का निर्वहन करने में सहायता करेगा ।

(3) कार्यक्रम अधिकारी अपनी अधिकारिता के अधीन क्षेत्र में परियोजनाओं से उद्भूत नियोजन अवसरों के साथ नियोजन की मांग का मेल करने के लिए उत्तरदायी होगा ।

(4) कार्यक्रम अधिकारी, ग्राम पंचायतों द्वारा तैयार किए गए परियोजना प्रस्तावों और मध्यवर्ती पंचायतों से प्राप्त प्रस्तावों का समेकन करके अपनी अधिकारिता के अधीन ब्लाक के लिए एक योजना तैयार करेगा ।

(5) कार्यक्रम अधिकारी के कृत्यों में निम्नलिखित सम्मिलित होंगे –

(क) ब्लाक के भीतर ग्राम पंचायतों और अन्य कार्यान्वयन अभिकरणों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली परियोजनाओं को

मानीटर करना ;

(ख) पात्र गृहस्थियों को बेकारी भत्ता मंजूर करना और उसका संदाय सुनिश्चित करना ;

(ग) ब्लाक के भीतर स्कीम के किसी कार्यक्रम के अधीन नियोजित सभी श्रमिकों को मजदूरी का तुरंत और उचित संदाय सुनिश्चित करना ;

(घ) यह सुनिश्चित करना कि ग्राम सभा द्वारा ग्राम पंचायत की अधिकारिता के भीतर सभी कार्यों की नियमित सामाजिक संपरीक्षा की जा रही है और यह कि सामाजिक संपरीक्षा में उठाए गए आक्षेपों पर अनुवर्ती कार्रवाई की जा रही है ;

(ङ) सभी शिकायतों को तत्परता से निपटाना जो ब्लाक के भीतर स्कीम के कार्यान्वयन के संबंध में उत्पन्न हों ; और

(च) कोई अन्य कार्य करना जो जिला कार्यक्रम समन्वयक या राज्य सरकार द्वारा उसे समनुदेशित किया जाए ।

(6) कार्यक्रम अधिकारी, जिला कार्यक्रम समन्वयक के निदेशन, नियंत्रण और अधीक्षण के अधीन कृत्य करेगा ।

(7) राज्य सरकार, आदेश द्वारा निदेश दे सकेगी कि किसी कार्यक्रम अधिकारी के सभी या किन्हीं कृत्यों का ग्राम पंचायत या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा निर्वहन किया जाएगा ।

16. **ग्राम पंचायतों के उत्तरदायित्व** – (1) ग्राम पंचायत, ग्राम सभा और वार्ड सभाओं की सिफारिशों के अनुसार किसी स्कीम के अधीन ग्राम पंचायत क्षेत्र में कार्यान्वयन के लिए ली जाने वाली परियोजना की पहचान और ऐसे कार्य के निष्पादन और पर्यवेक्षण के लिए उत्तरदायी होगी ।

(2) कोई ग्राम पंचायत, ग्राम पंचायत के क्षेत्र के भीतर किसी स्कीम के अधीन किसी परियोजना को जिसे कार्यक्रम अधिकारी द्वारा मंजूर किया जाए, ले सकेगी ।

(3) प्रत्येक ग्राम पंचायत, ग्राम पंचायत और वार्ड सभाओं की सिफारिश पर विचार करने के पश्चात् एक विकास योजना तैयार करेगी और स्कीम के अधीन जब कभी कार्य की मांग उत्पन्न होती है, किए जाने वाले संभव कार्यों का एक शेल्फ रखेगी ।

(4) ग्राम पंचायत, परियोजनाओं के विकास के लिए जिसके अंतर्गत उस वर्ष के प्रारंभ से जिसमें इसे निष्पादित किया जाना प्रस्तावित है, की संवीक्षा और प्रारंभिक पूर्वानुमोदन के लिए कार्यक्रम अधिकारी को विभिन्न कार्यों के बीच अग्रता का क्रम सम्मिलित है, अपने प्रस्तावों को अग्रेषित करेगी ।

(5) कार्यक्रम अधिकारी, ग्राम पंचायत के माध्यम से कार्यान्वित की जाने वाली किसी स्कीम के अधीन उसकी लागत के अनुसार कम से कम पचास प्रतिशत कार्य को आबंटित करेगा ।

(6) कार्यक्रम अधिकारी, प्रत्येक ग्राम पंचायत को निम्नलिखित का प्रदाय करेगा, –

(क) उसके द्वारा निष्पादित किए जाने वाले स्वीकृत कार्य के लिए मस्टर रोल ; और

(ख) ग्राम पंचायत के निवासियों को अन्यत्र उपलब्ध नियोजन के अवसरों की एक सूची ।

(7) ग्राम पंचायत आवेदकों के बीच नियोजन के अवसरों का आबंटन करेगी तथा कार्य के लिए उनसे रिपोर्ट करने के लिए कहेगी ।

(8) किसी स्कीम के अधीन किसी ग्राम पंचायत द्वारा आरंभ किया

गया कार्य अपेक्षित तकनीकी मानकों और मापमानों को पूरा करेगा ।

17. **ग्राम सभा द्वारा कार्य की सामाजिक संपरीक्षा** – (1) ग्राम सभा, ग्राम पंचायत के भीतर कार्य के निष्पादन को मानीटर करेगी ।

(2) ग्राम सभा, ग्राम पंचायत के भीतर आरंभ की गई स्कीम के अधीन सभी परियोजनाओं की नियमित सामाजिक संपरीक्षा करेगी ।

(3) ग्राम पंचायत, सभी सुसंगत दस्तावेज, जिनके अन्तर्गत मस्टर रोल, बिल, वाउचर माप पुस्तिकाएं, मंजूरी आदेशों की प्रतियां और अन्य संबंधित लेखा बहियां और कागजपत्र भी हैं, सामाजिक संपरीक्षा करने के प्रयोजन के लिए ग्राम सभा को उपलब्ध कराएगी ।

18. **स्कीम के कार्यान्वयन में राज्य सरकारों के उत्तरदायित्व** – राज्य सरकार जिला कार्यक्रम समन्वयक और कार्यक्रम अधिकारियों को ऐसे अनिवार्य कर्मचारिवृन्द और तकनीकी सहायता, जो स्कीमों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक हों, उपलब्ध कराएगी ।

19. **शिकायत दूर करने हेतु तंत्र** – राज्य सरकार स्कीम के कार्यान्वयन की बाबत किसी व्यक्ति द्वारा की गई किसी शिकायत के निपटान के लिए, नियमों द्वारा ब्लाक स्तर और जिला स्तर पर शिकायत दूर करने हेतु समुचित तंत्र अवधारित करेगी और ऐसी शिकायतों के निपटारे के लिए प्रक्रिया अधिकथित करेगी ।

अध्याय 5

राष्ट्रीय और राज्य रोजगार गारंटी निधियों की स्थापना और संपरीक्षा

20. **राष्ट्रीय रोजगार गारंटी निधि** – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, अधिसूचना द्वारा, राष्ट्रीय रोजगार गारंटी निधि के नाम से ज्ञात एक निधि स्थापित करेगी ।

(2) केन्द्रीय सरकार, संसद् द्वारा विधि द्वारा इस निमित्त किए

गए सम्यक् विनियोग के पश्चात् अनुदान या उधार के रूप में ऐसी धनराशि, जिसे केन्द्रीय सरकार राष्ट्रीय निधि के लिए आवश्यक समझे, जमा कर सकेगी ।

(3) राष्ट्रीय निधि के खाते में जमा रकम का ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विहित की जाएं, उपयोग किया जाएगा ।

21. **राज्य रोजगार गारंटी निधि** – (1) राज्य सरकार, स्कीम के कार्यान्वयन के प्रयोजनों के लिए, अधिसूचना द्वारा, राज्य रोजगार गारंटी निधि के नाम से ज्ञात एक निधि स्थापित करेगी ।

(2) राज्य निधि के खाते में जमा रकम, ऐसी रीति से और ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो इस अधिनियम और उसके अधीन बनाई गई स्कीमों के कार्यान्वयन के प्रयोजनों के लिए राज्य सरकार द्वारा विहित की जाएं और इस अधिनियम के कार्यान्वयन के संबंध में प्रशासनिक खर्चों को पूरा करने के लिए, व्यय की जाएगी ।

(3) राज्य निधि, राज्य सरकार की ओर से ऐसी रीति में और ऐसे प्राधिकारी द्वारा, जो राज्य सरकार द्वारा विहित किया जाए, धारित और प्रशासित की जाएगी ।

22. **वित्तपोषण पैटर्न** – (1) ऐसे नियमों के, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त बनाए जाएं, अधीन रहते हुए, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित की लागत को पूरा करेगी, अर्थात् :–

(क) स्कीम के अधीन अकुशल शारीरिक कार्य के लिए मजदूरी के संदाय के लिए अपेक्षित रकम ;

(ख) स्कीम की सामग्री लागत के तीन चौथाई तक रकम, जिसके अंतर्गत अनुसूची 2 के उपबंधों के अधीन रहते हुए कुशल और अर्धकुशल कर्मकारों को मजदूरी का संदाय भी है ;

(ग) स्कीम की कुल लागत का ऐसा प्रतिशत, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रशासनिक खर्चों के प्रति अवधारित किया जाए, जिसके अंतर्गत कार्यक्रम अधिकारियों और उनके सहायक कर्मचारिवृन्द के वेतन और भत्ते, केन्द्रीय परिषद् के प्रशासनिक खर्च, अनुसूची 2 के अधीन दी जाने वाली सुविधाएं और ऐसी अन्य मद भी हैं, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिश्चित की जाएं ।

(2) राज्य सरकार निम्नलिखित की लागत को पूरा करेगी, अर्थात् :–

(क) स्कीम के अंतर्गत संदेय बेकारी भत्ते की लागत ;

(ख) स्कीम की सामग्री लागत का एक चौथाई, जिसके अंतर्गत अनुसूची 2 के अधीन रहते हुए कुशल और अर्धकुशल कर्मकारों की मजदूरी का संदाय भी है ;

(ग) राज्य परिषद् के प्रशासनिक खर्च ।

23. **पारदर्शिता और उत्तरदायित्व** – (1) जिला कार्यक्रम समन्वयक और जिले के सभी कार्यान्वयन अभिकरण, किसी स्कीम के कार्यान्वयन के प्रयोजन के लिए उनके व्ययन पर रखी गई निधि के उचित उपयोग और प्रबंध के लिए उत्तरदायी होंगे ।

(2) राज्य सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों और उसके अधीन बनाई गई स्कीमों के कार्यान्वयन के संबंध में श्रमिकों के नियोजन और उपगत व्यय की समुचित बहियां और लेखा रखने की रीति विहित कर सकेगी ।

(3) राज्य सरकार, नियमों द्वारा, स्कीमों और स्कीमों के अधीन कार्यक्रमों के उचित निष्पादन के लिए और स्कीमों के कार्यान्वयन में सभी स्तरों पर पारदर्शिता और दायित्व सुनिश्चित करने के लिए, की जाने वाली व्यवस्थाओं को अवधारित कर सकेगी ।

(4) नकद रूप में मजदूरी और बेकारी भत्ते के सभी संदाय, सीधे संबद्ध व्यक्ति को और पूर्व घोषित तारीखों पर समुदाय के स्वतंत्र व्यक्तियों की उपस्थिति में किए जाएंगे ।

(5) यदि ग्राम पंचायत द्वारा किसी स्कीम के कार्यान्वयन से संबंधित कोई विवाद या शिकायत उत्पन्न होती है तो वह मामला कार्यक्रम अधिकारी को निर्देशित किया जाएगा ।

(6) कार्यक्रम अधिकारी प्रत्येक शिकायत की उसके द्वारा रखे शिकायत रजिस्टर में प्रविष्टि करेगा और विवादों तथा शिकायतों को उनकी प्राप्ति से सात दिन के भीतर निपटाएगा और यदि वे ऐसे मामले से संबंधित हैं जिसे किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा सुलझाया जाना है तो वह उसे शिकायतकर्ता को सूचना देते हुए, ऐसे प्राधिकारी को अग्रेषित करेगा ।

24. **लेखाओं की संपरीक्षा** – (1) केन्द्रीय सरकार, भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक के परामर्श से, स्कीमों के लेखाओं की सभी स्तरों पर संपरीक्षा के लिए समुचित व्यवस्थाएं विहित कर सकेगी ।

(2) स्कीम के लेखा ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति से जो राज्य सरकार द्वारा विहित की जाए, रखे जाएंगे ।

क्रमशः अगामी अंक में .....

Cover...

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

Cover IV

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/ product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in